नसीब : अपना-अपना

विमल मित्र

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

मेरे अभिन्न मित्र, मराठी-साहित्य के
सुप्रसिद्ध व्यंग्य-विनोद लेखक
श्री रमेश मंत्री को
सादर सप्रेम

विमल दा और उनकी देन

घर के भीतर आते ही अपनी आदत के अनुसार तेज स्वर में जोतिन भट्टाचार्य ने कहा—"दादा, आपके लिए एक सुखद समाचार लाया हूँ।"

उत्सुकता के साथ मैंने उनकी ओर देखा। जोतिन बाबू मरहूम उस्ताद अलाउद्दीन खाँ के शिष्य और सचिव रह चुके हैं। भारत के मूर्द्धन्य सरोद वादक तथा मेरे शुभाकांक्षी हैं। बगल में बैठते हुए उन्होंने कहा—'कलकत्ते में प्रोग्राम था। आज ही वापस आया हूँ। पिछले बुधवार को विमल दा के यहाँ गया था। वे अपना एक नया उपन्यास अनुवाद के लिए आपके पास भेज रहे हैं।'

इस समाचार को सुनते ही मेरी सारी उत्सुकता समाप्त हो गई। मैंने कहा—'यह कौन-सा सुखद समाचार है? इसकी जानकारी मुझे पहले से थी। इसी सर्दी में जब वे यहाँ आये थे तब इस बारे में बातें हुई थीं। अनुवाद मैं करूँगा और मोदीजी प्रकाशित करेंगे।'

विस्मय के साथ जोतिन बाबू ने कहा—'अरे! मुझे क्या मालूम? विमल दा ने भी इस बारे में कुछ नहीं बताया।'

प्रतिवर्ष बंगला-साहित्य के पूजा-विशेषांकों में रचनाओं की आपूर्ति करने के बाद विमल दा इतने थक जाते हैं कि उस थकान को मिटाने के लिए काशी चले आते हैं। यहाँ श्री पुरुषोत्तमदास मोदी का आतिथ्य ग्रहण करते हैं। अन्तरंग लोगों के अलावा किसीसे मिलना पसन्द नहीं करते। प्रवृत्तिशेष दरबारी आदमी हैं। स्टेशन के प्लेटफार्म पर पैर रखते ही पहली उद्घोषणा होती है—'मेरे आगमन की खबर विश्वनाथ मुखर्जी को देने का कष्ट करें।' अर्थात् उन्हें मेरे दरबार में हाजिर होने का हुक्म दिया जाय। कार्यव्यस्तता के कारण अगर जाने में दो-एक दिन की देर हो गई तो फोन के अलावा संदेश-वाहकों का ताँता लग जाता है।

काशी या कलकत्ता जहाँ कहीं भी विमल दा से मिला, उन्होंने हमेशा हँसते हुए स्वागत किया। आपकी हँसी में न वर्षा की तरह झंझावात होता है और न ग्रीष्म की तरह सूखापन। शरद् ऋतु की तरह स्निग्ध हँसी होती है। आदर-स्वागत में कहीं भी कृत्रिमता नहीं। विदा करते समय सीढ़ियों के पास आकर कहते हैं—'फिर दर्शन दीजियेगा।' यह बंगाल की सांस्कृतिक परम्परा है।

कलकत्ता वाले भवन में जाते ही रसोईघर से हँसती हुई भाभीजी आती हैं और सवालों की बौछार शुरू हो जाती है। कब आये, घर में पत्नी, बच्चे, नाती-पोते आदि सभी के बारे में सवाल पूछती हैं। सिर्फ यही नहीं, अगर मेरे लायक कोई उपहार कहीं से खरीद लाती हैं तो उसे देती हुई कहेंगी—'यह आपके लिए कश्मीर से ले आई हूँ।'

इसी बीच घर की बहू आकर प्रणाम कर जायगी। निताई जो कि इस घर का मैनेजर है, मेरी शक्ल देखते ही जलपान-पान आदि रख जाता है। लगता है जैसे मैं कोई वी० आई० पी० हूँ। सब कुछ घर जैसी आत्मीयता के साथ सम्पन्न किया जाता है। अब ऐसा आदर-सम्मान पाकर कौन विगलित नहीं होगा ?

मैं ऐसे लोगों से दूर रहता हूँ जो अपनी विद्वत्ता या वैभव के गरूर में औरों को हेय दृष्टि से देखते हैं। जिनके पास बैठते ही अहम के दर्शन होने लगते हैं। उनके प्रति मन में आदर या स्नेह के बदले जुगुप्सा की भावना उत्पन्न होती है। मान्यता है कि बरगद, पीपल, पाकुड़ आदि पंच वृक्ष नहीं काटना चाहिये। वह इसलिए कि इन वृक्षों के नीचे थके पथिक विश्राम करते हैं। ताड़, खजूर, बबूल के नीचे छाया नहीं होती। विमल बाबू स्वभाव से वटवृक्ष हैं।

बंगला-साहित्य के कथाकारों में सर्वश्री बंकिमचन्द्र चटर्जी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, शरच्चन्द्र चटर्जी और विभूतिभूषण बनर्जी के बाद विमल बाबू ही एक ऐसे कथाकार हैं जिनकी रचनाओं ने भारत ही नहीं, बांगला देश और पाकिस्तान को भी प्रभावित किया है। पाठकों की दृष्टि में आप बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के सर्वश्रेष्ठ उपन्यासकार हैं।

शरत् बाबू की 'बड़ी दीदी' नामक कहानी जब गुमनाम से प्रकाशित हुई थी तब लोगों को सन्देह हुआ था कि इस कथा के लेखक स्वयं रवीन्द्रनाथ हैं। ठीक इसी प्रकार विमल दा की लोकप्रियता को देखकर कुछ लेखकों को ईर्ष्या हुई। उन्होंने विमल दा पर कथा-चोरी का आरोप लगाया। इनके बड़े-बड़े उपन्यास कौन पढ़ेगा, कहकर प्रकाशकों को भड़काया गया। गुमनाम पत्र भेजकर इन्हें गालियाँ दी गईं। संपादकों के पास इनके विरुद्ध पत्र भेजे गये, क्योंकि विमल दा की लोकप्रियता के आगे वे लोग फीके पड़ते जा रहे थे। लेकिन जादू वह है जो सिर पर चढ़कर बोले।

विमल दा के विरुद्ध षड्यन्त्र के जितने तीर फेंके गये वे सब असफल हो गये। अभिशाप वरदान बन गया।

शान्तिनिकेतन विश्वविद्यालय की कुलपति श्रीमती इन्दिरा देवी चौधुरानी ने अपने पांच कालम के लेख में 'साहब-बीबी-गुलाम' की अजस्र सराहना करते हुए लिखा—'इस कृति के लिए लेखक को नोबल पुरस्कार मिलना चाहिये।'

'कितने अनजाने रे' तथा 'चौरंघी' के लेखक श्री शंकर एक दिन आये और विमल दा से कहा कि 'हवड़ा में एक सज्जन आपका दर्शन करना चाहते हैं। वे चल-फिर नहीं सकते, वर्ना आपके यहाँ आते। अधिक दिन जीवित नहीं रहेंगे।' विमल दा जब वहाँ पहुँचे तो उस वृद्ध के सिरहाने गीता के साथ 'साहब-बीबी-गुलाम' उपन्यास भी देखा। वृद्ध ने कहा—'मैं जिस चीज की तलाश में था, वह कहीं नहीं मिली। आपकी इस कृति में मिल गयी। आपके दर्शन के लिए शायद मेरे प्राण अटके हुए हैं। अब मैं निश्चिन्त हो गया।'

एक विवाह-पार्टी में न्यू थियेटर्स के कार्यकर्ता निमन्त्रित होकर गये थे। बंगाल में विवाह आदि के अवसर पर पुस्तकें भेंट की जाती हैं। विभिन्न पुस्तकों के अलावा 'साहब-बीबी-गुलाम' की २७ प्रतियां देखकर वे लोग चौंक उठे। क्या यह उपन्यास इतना लोकप्रिय है ? तब तो इसकी फिल्म जनता में धूम मचा देगी। फिल्म बनी और विमल दा बायरन की तरह ख्याति के राज सिंहासन पर आरूढ़ हो गये। यह समाचार बम्बई पहुँचा तो श्री गुरुदत्त ने बहती गंगा में हाथ धो लिए।

विमल दा सिने-दर्शकों की अपेक्षा पाठकों के पास रहना पसन्द करते हैं। यही वजह है कि आजकल वे अपने उपन्यासों की फिल्म बनाने की अनुमति नहीं देते। इतना बड़ा लोभ जो व्यक्ति संवरण करता है, निस्सन्देह वह त्यागी पुरुष है।

विमल दा की रचनाओं में एक विशेषता है। किशोरावस्था से ही आपकी रुझान संगीत की ओर थी। अनेक संगीतज्ञों के साथ रातभर बैठे गायन-वादन सुनते रहे। शास्त्रीय संगीत में आलाप, जोड़, झाला के बाद विलम्बित और तब द्रुत का प्रयोग होता है। गायन-वादन का अन्त सम पर आकर होता है। आपकी रचनाओं में इस कला के दर्शन होते

है। आप संगीतज्ञों की तरह आरोह, अवरोह करते हुए अपनी लयकारी में पाठकों को मुग्ध कर देते हैं। शायद इसी वजह से आपके पाठक और पत्रों के संपादक आपको छोड़ नहीं रहे हैं।

जोतिनबाबू के जाने के दूसरे दिन यह कृति अनुवाद के लिए प्राप्त हुई। इसे पढ़ते ही चौंक उठा। मुझे लगा जैसे विमल दा की अतीन्द्रिय शक्ति ने पुनः चमत्कार किया। बात यह है कि पुस्तक प्राप्त करने के एक सप्ताह पूर्व विश्वविद्यालय प्रकाशन में ही न जाने किस बात पर लेबर-लीडरों पर चर्चा चली। बैठे हुए लोग इनकी बखिया उधेड़ते रहे। इस उपन्यास में ऐसे ही लेबर-लीडर के घटिया जीवन का चित्रण है और यही मुझे अनुवाद करने के लिए दिया गया।

विमल दा से परिचय होने के बाद से एक न एक चमत्कार अपने-आप होते आ रहे हैं। जीवन में अपने अग्रजों तथा अनुजों के काम आया हूँ। सिवा भूमिका में आभार प्रकट करने के किसीने आज तक मुझे अपनी कोई कृति समर्पित नहीं की है। यह गौरव मिला विमल दा से जिनका आज तक मैंने कोई उपकार नहीं किया है और न स्मरण रखने लायक घनिष्ठ सम्पर्क हुआ। कलकत्ता जाने पर चंद लमहे उनके यहाँ गुजार लेता हूँ। जिस दिन मुझे यह समाचार उनकी जबानी उन्हींके निवास-स्थान पर मिला, मैं आश्चर्यचकित रह गया। हर्ष की उत्तेजना के कारण चलते समय धन्यवाद देना दूर रहा, नमस्कार करना भूल गया।

कई सप्ताह तक मैं परेशान था कि आखिर विमल दा ने मुझमें क्या देखा, क्या पाया, जिसके कारण मैं उनके स्नेह का पात्र बन गया? कोई लेखक श्रद्धा या स्नेहवश दूसरे को अपनी कृति समर्पित करता है। घर आकर मैंने विमल दा पर एक संस्मरण लिखा—अपनी श्रद्धा प्रकट करने के लिए। वह इसलिए कि मैं उनकी कृपा को पचा नहीं पा रहा था।

कुछ दिनों बाद उनका एक पत्र आया—'मेरे चार उपन्यासों का एक संग्रह' 'चतुरंग' के नाम से प्रकाशित होनेवाला है। मेरी इच्छा है कि उसकी भूमिका के रूप में आप द्वारा 'चित्र और चरित्र' से मेरे सम्बन्ध में लिखा गया पूरा लेख शामिल किया जाय। इससे मैं अपने-आपको सम्मानित समझूंगा।'

इस पत्र को पाकर लगा जैसे विमल दा ने मुझे राजसिंहासन पर बैठाकर मेरा अभिषेक कर दिया। एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त कथाकार ने

अगर यह सम्मान मुझे देकर गौरवान्वित किया है तो इससे बढ़कर मुझे कौन-सा पुरस्कार चाहिये ?

'चतुरंग' में प्रकाशित इस संस्मरण को पढ़कर भारतीय भाषा के कतिपय लेखकों ने यहाँ तक लिखा कि अब तक विमल मित्र पर ऐसा संस्मरण किसीने नहीं लिखा है। सच तो यह है कि इन पत्रों को पाकर मुझे लगा जैसे मेरे चरित्र में कोई खास खूबी है जिसे विमल दा ने पहचान लिया है।

मैं विमल दा की इस बात से सहमत हूँ कि लेखक के जीवनकाल में उसे जो कुछ पुरस्कार या सम्मान मिलता है, वह भत्ता है। उसके निधन के पश्चात् उसे जो कुछ मिलेगा, वही पेंशन होगा। आज कितने लेखक पुरस्कार प्राप्त कर रहे हैं, यह बताने की आवश्यकता नहीं है।

—विश्वनाथ मुखर्जी

नसीब
अपना-अपना

मेरे अधिकांश उपन्यासों में 'हरिपद' नामक एक व्यक्ति का उल्लेख रहता है।

उन उपन्यासों में मैंने यह भी लिखा है कि हरिपद नामक व्यक्ति मुझे कहानियों का मसाला देता है और इसके बदले मैं प्रति कहानी पीछे उसे पारिश्रमिकस्वरूप कुछ रुपये देता हूँ। पारिश्रमिक की यह रकम कभी पन्द्रह और कभी बीस होती है। कहानी के आकार की दृष्टि से रुपयों की संख्या कभी बढ़ती है तो कभी घटती।

मेरी कहानियों का 'हरिपद' वास्तव में बहुत गरीब व्यक्ति है। वह इस बात से अच्छी तरह परिचित है कि 'पूजा' (दुर्गा-पूजा) के पूर्व दो-एक पत्र-पत्रिकाओं के 'पूजा-विशेषांकों' में मुझे कहानी या उपन्यास लिखना पड़ता है। इसीलिए वह कुछ पारिश्रमिक पाने की आशा से मेरे यहाँ आकर धरना देता है। वह सोच-समझकर ही आता है।

आते ही कहता है—"क्या इस बार के 'पूजा-विशेषांकों' में कुछ नहीं लिख रहे हैं, सर ?"

मैं जवाब देता—"लिखना तो है, पर कुछ सोच नहीं पा रहा हूँ कि क्या लिखूं ?"

हरिपद कहता—"मैं कुछ प्लाट्स दे सकता हूँ।"

मुझे यह समझते देर नहीं लगती कि हजरत को रुपयों की सख
जरूरत है।

इस तरह जीवन में अनेक प्रार्थी मेरे पास आये जिनकी गणन
नहीं है। जब लेखन को पेशा बनाया है तब इच्छा हो या न हो, मु
लिखना ही पड़ता है। हाँ, फिर ऐसा अवश्य लिखता हूँ जिससे मु
आनन्द मिले। असल में लेखन के मामले में अपनी रचना अपने को पसन्
आये, यही सबसे बड़ी बात है। जो रचना लिखने में लेखक को अच्छ
लगती है, वह पाठकों को भी अच्छी लगेगी ही।

अपने को अच्छा लगने की बात को जरा खुलासा कर देना उचि
है। बचपन में कच्ची इमली में सरसों का तेल और हरी मि
मिलाकर खाने में अच्छी लगती थी। उम्र बढ़ने के बाद फिर इ
खाने की इच्छा नहीं होती।

क्यों ?

एक अशिक्षित और एक अर्द्ध-शिक्षित पाठक को अच्छा लगने क
क्या कोई कीमत नहीं है? किसी लेखक की किसी रचना को अच्छ
या बुरी कहने का अधिकार क्या सभी को है? अच्छी या बुरी रचन
कहने का यह अधिकार केवल उन पाठकों को है जिनमें सहजा
रसबोध है। रसबोध की यह डिग्री संसार के किसी विश्वविद्याल
में परीक्षा देकर प्राप्त नहीं की जा सकती। रसबोध की डिग्री प्राप
करने के लिए एम० ए०, पी० आर० एस०, पी-एच० डी० होन
आवश्यक नहीं है।

इतनी बातें आखिर मैं क्यों कह रहा हूँ। 'आये थे हरि-भजन क
और ओटन लगे कपास' वाली कहावत हो गयी। बेकार की बात
छोड़कर असली कहानी प्रारंभ करना उचित है।

मैं जिस हरिपद की चर्चा पहले कर चुका हूँ, वह साहित्य-फाहित्य
कुछ नहीं समझता। वह तो सिर्फ कहानी समझता है। उसकी कहानी
को रस में पकाकर साहित्य में परिवर्तित करना मेरा काम है। अग
यह कार्य हरिपद कर पाता तब प्रकाशक या सम्पादक मेरे पास न
आकर सीधे उसीके पास जाते।

मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि हरिपद बिलकुल निरक्षर है। वह
अनेक लोगों की रचनाएँ पढ़ता रहता है और उनके बारे में अपने
विचार भी प्रकट करता है।

जब उसकी सुनायी कहानी मेरी कलम से निकलकर पुस्तक के रूप में प्रकाशित होती है तब उसे पढ़कर वह कहता है—"यह क्या किया आपने ? यह ठीक नहीं हुआ। मैंने जैसा कहा था, आपको वैसा लिखना चाहिए था। इस तरह आपने बदल क्यों दिया ? भला इसे लोग खरीदेंगे ?"

मैं कहता—"न खरीदें। मैंने जो अच्छा समझा, वही लिखा। इस सम्बन्ध में तुम्हें कुछ नहीं कहना चाहिए। अगर बदनामी होगी तो मेरी होगी, तुम्हें कोई कुछ नहीं कहेगा।"

हरिपद कहता—"बात सही कह रहे हैं, पर लोग क्या कहेंगे ?"

मैं पूछता—"लोग क्या कहेंगे ? क्या मतलब ?"

हरिपद कहता—"वाह, लोगों को तो यह मालूम है कि आप मुझसे कहानियाँ खरीदते हैं।"

"क्या मतलब ? लोगों को कैसे मालूम हो गया कि मैं तुमसे कहानियाँ ख़रीदता हूँ ?"

हरिपद कहता—"मैंने लोगों को यही बताया है।"

मैं नाराज हो उठता। कहता—"क्या इस बात का कोई प्रमाण दे सकते हो कि मैं तुमसे कहानियाँ खरीदता हूँ ?"

सचमुच इस बात का प्रमाण कहीं भी नहीं है। मैं नकद रुपये हरिपद को देता हूँ, उसके बदले वह मुझे कोई रसीद नहीं देता। कहानियाँ खरीदने के सम्बन्ध में मैं भी उसे कोई रसीद नहीं देता।

केवल इसी बात को लेकर आपस में जरा मतान्तर होता है, मनान्तर भी हो जाता है। हरिपद क्रोध में आकर कहता—"ठीक है सर, अब आगे से आपको कोई कहानी नहीं बेचूंगा।"

मैं कहता—"नहीं बेचना चाहते तो मत बेचो। इससे मेरा कोई नुकसान नहीं होगा। बाजार में काफी कहानी-सप्लायर हैं। मैं उन लोगों से कहानियाँ ख़रीदूंगा। दाना छींटने पर चिड़ियों की कमी नहीं होगी—इसे जान लो।"

हरिपद भी नाराज होकर कहता—"ठीक है सर, अगर आप यही चाहते हैं तो उन्हीं लोगों से कहानी ख़रीदिये। मुझे कोई एतराज नहीं है। मैं आपके बदले शिवशंकर बाबू को कहानी सप्लाई करूँगा। वे मुझे कहानी पीछे एक सौ रुपये देने को कहते हैं।"

मैं कहता—"ठीक है, तुम उन्हें दे सकते हो।"

हरिपद कहता—"जी हाँ, वहीं दूंगा। उन्हें कहानी बेचने पर आमदनी के साथ-साथ मेरा नाम भी होगा।"

मैं पूछता—"तुम्हारा नाम होगा, क्या मतलब ?"

हरिपद कहता—"नाम क्यों नहीं होगा ? उन्हें कितने पुरस्कार मिले हैं, यह आपको मालूम है ? रवीन्द्र-पुरस्कार, वंकिम-पुरस्कार, अकादमी-पुरस्कार, ज्ञानपीठ-पुरस्कार आदि सभी प्रकार के पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं। सुना है कि इस वार नोवेल पुरस्कार के लिए कोशिश कर रहे हैं। शायद मिल भी जाय। उनसे आपका क्या मुकावला ? आप तो इतने दिनों से लिख रहे हैं, पर एक भी पुरस्कार प्राप्त नहीं कर सके। आप वोगस लेखक हैं।"

नाराज हो जाने पर हरिपद को होश नहीं रहता। इसके वाद एक अर्से तक हरिपद से मुलाकात नहीं होती। गोकि वह कहानी सुनाने का पेशा नहीं करता। उसके खाने-पीने और रहने के खर्च के लिए एक सहज और निर्दिष्ट पेशा है। कहानी सप्लाई से जो कुछ मिलता है, वह उसकी अतिरिक्त आय है जिसे ऊपरी आमदनी कहा जाता है। एक प्रकार से 'फाउ'।

हरिपद द्वारा उपेक्षित हो जाने के कारण मुझे असुविधा होने लगी थी। नयी कहानियों के वारे में आइडिया लेने के लिए मुझे विदेशी पुस्तकों का अध्ययन करना पड़ रहा था। विदेशी फिलम देखने जाता था। शायद कहीं से कोई मसाला मिल जाय। हजार-हजार, लाख-लाख पृष्ठों को रँगने के वाद अक्सर मस्तिष्क ऊसर वन जाता है। उस वक्त वहाँ पैदावार नहीं होती। ऐसी स्थिति में कम्पोस्ट खाद या केमिकल फर्टिलाइजर देना पड़ता है। लेकिन इससे होगा क्या ? भला सहारा का रेगिस्तान कहीं चिरापूंजी वन सकता है ?

फिर भी कुछ न कुछ लिखना ही पड़ा। मगर अपने को ही नहीं जमा। मेरे कुछ भक्त-पाठकों ने अपनी लेखक-सूची से मेरा नाम काट दिया।

अव मैं क्या करूँ ? शायद हरिपद आजकल मेरे वदले शिवशंकर वावू को कहानी सप्लाई कर रहा है, क्योंकि उस घटना के वाद ही उन्हें कई पुरस्कार प्राप्त हुए।

कथा के प्लाट के लिए जो समय वे लगाते थे, अव उस समय का उपयोग वे पुरस्कार-प्राप्ति के लिए व्यय करते हैं। उनकी ख्याति

ढ़ती गयी। एक नया मकान भी खरीद लिया उन्होंने। पुरानी गाड़ी ो बेचकर एक नयी गाड़ी भी खरीदी है।

ठीक इन्हीं दिनों एक पत्रिका के पूजा-दीपावली विशेषांक में संपूर्ण पन्यास लिखने का आमंत्रण प्राप्त हुआ। प्लाट के अभाव के कारण ं परेशान हो गया। अधिक चिन्तन के कारण रक्तचाप बढ़ गया।

एक माह समय व्यतीत हो जाने पर भी जब एक लाइन भी नहीं लिख सका तब सोचने लगा कि अब क्या करूँ? क्या लिखूं? क्या ुझे पुनः हरिपद के दरवाजे पर जाना पड़ेगा?

गरज बावली होती है।

हरिपद का पता मेरी डायरी में दर्ज है। इससे पहले कभी मैं सके घर नहीं गया था।

अब तक जो नहीं किया था, वही करना पड़ा। उसके घर का पता ो है, पर ठीक किस स्थान पर है, इसकी जानकारी नहीं है।

कलकत्ता जैसे शहर में अगर किसीका पता मालूम रहे तो उसके र को खोजने में अधिक कष्ट नहीं होता। सड़क से चलकर किस ली से होकर, किस मकान में जाना है, राहचलतों से पूछने पर इसकी ानकारी हो जाती है।

आश्चर्य! मकान के सामने आते ही जो दृश्य देखा, उससे लगा ैसे आसमान से गिर पड़ा होऊँ।

आसपास जितने लोग थे, सभी जैसे यहीं चले आये थे। मैंने अनु-ान लगाया कि किसी उपलक्ष्य में लगभग दो सौ आदमी यहाँ ्कत्रित हैं।

पुलिस की लाल-सफेद रंग की एक जीप गाड़ी खड़ी थी। कुछ ुलिस वर्दी पहने लाठी भांज रहे थे। एक दूसरी प्राइवेट कार अलग ड़ी थी जिसके भीतर बैठी एक वृद्धा महिला जार-जार रो रही ी। बगल में बैठी एक महिला उन्हें सांत्वना देती हुई कह रही थी— 'चुप रहिये, चुप हो जाइये माँ! रोने से क्या होगा?"

वृद्धा रोती रहीं और जैसे मन ही मन कह रही थीं—"मुझे कहीं ो जहर ला दो, बहू। थोड़ा-सा जहर चाहिए। मैं जीना नहीं चाहती, ं अब जीना नहीं चाहती......तुम लोग थोड़ा-सा जहर ला दो—"

एक वृद्धा को इस तरह रोते देख, कुछ बेकार के लोग ...। देखने के लिए भीड़ लगाये खड़े थे।

मेरी समझ में कुछ नहीं आ रहा था। यहाँ तो मैं हरिपद की खोज में आया और आकर अप्रत्याशित दृश्य देख रहा हूँ—एक अचिन्तनीय नाटक।

हरिपद से मुलाकात हो जाने पर मैं निश्चिन्त हो जाता, पर ऐसा नहीं हुआ। इसके बदले एक अन्य समस्या ने मुझे उलझा दिया।

पास खड़े एक सज्जन से मैंने पूछा—"कहिये महाशयजी, क्या हुआ है यहाँ?"

यह महाशय भी मेरी तरह कौतूहली दर्शक हैं। उन्होंने कहा—"मैं क्या बताऊँ? मैं भी भीड़ देखकर आपकी तरह यहाँ आकर खड़ा हो गया।"

जानकारी प्राप्त करने के लिए मैं भीड़ में कुछ दूर आगे बढ़ गया, पर यहाँ कौन मुझे बतायेगा कि यहाँ क्या हुआ है। यहाँ इतनी भीड़ क्यों है, किसलिए लोग यहाँ खड़े हैं?

फिर मेरी निगाहें उस परिचित शक्ल को खोजने लगीं जिसे हरिपद कहते हैं। साही के काँटे जैसी दाढ़ी, मुहाँसे भरे गाल, रंग काला और सिर पर काले बाल। उसी हरिपद की तलाश करता रहा।

इसके बाद पता नहीं क्या हुआ, शायद भीड़ को तितर-बितर करने के लिए पुलिस लाठी भाँजने लगी। सिर के ऊपर लाठी घूमते देख लोग इधर-उधर भागने लगे।

मुझे भी जान बचाने के लिए वहाँ से भाग आना पड़ा। याद है, एक जमाना वह था जब अपनी जरूरत पर हरिपद मेरे यहाँ धरना देता था और उस दिन मैं अपनी गरज पर हरिपद के यहाँ धरना देने गया था।

लगता है, प्रयोजन ही शायद इस संसार का सबसे बड़ा चोर है। प्रीत का जो सम्पर्क है, उसमें भी लोग प्रयोजन का तगमा लगाकर विडम्बित करते हैं और शायद इसीलिए हमारे जीवन में इतनी विशृंखलता है, पृथ्वी पर इतनी अशान्ति है। हम लोगों ने अपने प्रयोजन के गुब्बारे को इतना फुला दिया है कि उसमें प्रीत के लिए एक इंच स्थान नहीं है।

जाने दीजिए यह सब बात। घर वापस आ जाने के बावजूद मेरा मन हरिपद के पास रह गया। कैसे मैं अपने प्रयोजन को पूरा करूँ? हरिपद के अलावा कौन मेरा इस संकट से उद्धार करेगा?

मनुष्य जहाँ जिम्मेदारी से बँध जाता है, वहाँ शर्म, भद्रता आदि की बाधाएँ उसे मुक्त नहीं कर पातीं।

मेरी भी वही हालत हुई।

कई दिनों से सोच रहा था कि एक बार पुनः हरिपद की खोज में जाऊँ, पर संकोच की बाधा का अतिक्रमण नहीं कर पा रहा था। हरिपद के निकट जाने का अर्थ है—अपनी हीनता। यही 'इगो' ही मुझे परेशान कर रहा था और इधर समय तेजी से गुजर रहा था।

ठीक इन्हीं दिनों घटना-चक्र से हरिपद एक दिन सड़क पर दिखाई दे गया।

एक झोला लेकर वह अपने डेरे की ओर जा रहा था। मुझे देखते ही तेजी से पास आया और कहा—"कहिये सर, मजे में हैं ?"

कहा—"हाँ, आजकल तुम्हारा क्या हालचाल है ?"

एक दिन उसकी खोज में उसके घर गया था, इस बात को प्रकट नहीं किया। प्रकट करने पर मुझे गरजमन्द समझकर अपना रेट बढ़ा देता।

हरिपद ने कहा—"मत पूछिये सर, मेरे ऊपर तो काफी आफत आयी थी।"

जान-बूझकर मैंने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा—"कैसी आफत ?"

हरिपद ने कहा—"बहुत बड़ा बखेड़ा था। सड़क पर खड़े होकर सारी बातें बताना कठिन है। आजकल मैंने डेरा बदल लिया है।"

मैंने कहा—"तुमने अपना डेरा बदल डाला और मुझे खबर तक नहीं दी ?"

हरिपद ने कहा—"आप अभी तक मुझे याद करते हैं, यह मैं कैसे समझ पाता। वैसे अपने नये डेरे के बारे में शिवशंकर बाबू को बता चुका हूँ।"

मैंने कहा—"उन्हें तो बताओगे ही। कुछ अधिक रुपयों के लालच के कारण तुमने मुझे छोड़ दिया। लेकिन एक बात याद रखना, मुझे कहानियों के प्लाट देनेवालों की कोई कमी नहीं है। तुमसे कम रुपये लेकर वे लोग मुझे कहानियों के प्लाट सप्लाई करते हैं।"

लगा जैसे हरिपद कुछ नरम हुआ।

उसने कहा—"मैं समझ रहा हूँ कि वे लोग कौन हैं।"

"कौन हैं, वे लोग ?"

हरिपद ने कहा—"उन लोगों के नाम बताने से क्या होगा ? लेकिन यह याद रखिये कि उन लोगों की तरह मैं कूड़ा-करकट सप्लाई नहीं करता। मैं यह भी जानता हूँ कि आर्थिक लाभ के कारण काफी लोग इस लाइन में आ गये हैं, लेकिन इससे मेरा बाजार चौपट नहीं होगा—इस बात को याद रखियेगा। आजकल के पाठक भी पहले की अपेक्षा अधिक सयाने हो गये हैं। वे इस बात को तुरन्त भाँप लेते हैं कि कौन-सा शुद्ध माल है और कौन-सा बोगस।"

समझते देर नहीं लगी कि आजकल हरिपद पहले की अपेक्षा काफी चालाक-चतुर हो गया है।

मैंने कहा—"इतने दिनों से लेखन-लाइन में हूँ, क्या इतनी समझ मुझमें नहीं है ?"

हरिपद ने कहा—"अभी कुछ दिन पहले शिवशंकर बाबू को एक प्लाट दे आया था। उसे लिखने पर उन्हें किसी पत्र से दस हजार रुपये मिले। इतनी बड़ी रकम पाकर वे इतने प्रसन्न हो उठे कि अब तक उन्होंने जो नहीं किया था, वही किया—यानी नोटों की गड्डी से पाँच सौ रुपये मुझे दिये।"

"पाँच सौ दिये ?"

हरिपद ने कहा—"अगर आपको विश्वास न हो तो आप टेलिफोन पर शिवशंकर बाबू से पूछ लीजिए। तब पता चल जायगा कि मैं सच कह रहा हूँ या भबकी दे रहा हूँ।"

हरिपद को हाथ में रखने के लिए मैंने मीठे स्वर में कहा—"नहीं, नहीं, यह बात नहीं है। आखिर तुम मुझसे झूठ क्यों कहोगे ? उन्होंने तुम्हें पाँच सौ रुपये जरूर दिये होंगे। मैं तुम्हारी बातों पर अविश्वास नहीं कर रहा हूँ।"

हरिपद ने आगे कहा—"केवल यही नहीं, उस कहानी पर कोई फिल्म बन रही है। इसके लिये मुझे एक हजार रुपये अलग से देने-वाले हैं। इसे उन्होंने स्वीकार कर लिया है।"

"हजार रुपये ?"

हरिपद ने कहा—"सिनेमा को कहानी देने की वजह से उन्हें तीस हजार रुपये एक साथ मिल रहे हैं। उसमें सिर्फ मुझे एक हजार रुपये दे रहे हैं। क्या यह बड़ी रकम है ?"

हरिपद की बातों को स्वीकार करना ही पड़ा। अविश्वास करने का कोई कारण समझ में नहीं आया।

मैंने पूछा—"बहरहाल, तुमने अपना डेरा क्यों बदला, यह नहीं बताया ?"

हरिपद ने कहा—"यह तो पहले ही कह चुका हूँ कि सड़क पर खड़े-खड़े सारी बातें बताना संभव नहीं है।"

"अच्छा, यह बताओ कि मेरे घर कब आ रहे हो ?"

हरिपद ने कहा—"यह बताना मुश्किल है। डेरा बदल लेने के कारण काफी परेशानी में फँस गया हूँ।"

"कैसी परेशानी ?"

हरिपद ने कहा—"देख नहीं रहे हैं ? बाजार से सौदा-सुलुफ ले जा रहा हूँ। आजकल मुझे अपने हाथ से भोजन बनाना पड़ता है।"

"क्यों ?"

हरिपद ने कहा—"क्या करूँ ? आखिर कुछ तो खाना होगा। पहले जिस मकान में रहता था, वहीं खाता-पीता था। मेरा भोजन उन लोगों के साथ बन जाता था। वे लोग खाते थे और मैं भी खाता था। अब कौन पकाकर देगा ?"

मैंने कहा—"जिस दिन मेरे घर आओगे, उस दिन मेरे साथ खा लेना। उस दिन तुम्हें भोजन बनाने की जरूरत नहीं होगी। तुम जब-जब आओगे तब-तब मेरे साथ भोजन कर सकते हो।"

"और रुपये ? कितने रुपये देंगे आप ?"

कहा—"शिवशंकर बाबू से जितनी रकम मिलती है, उतनी मुझसे ले लेना।"

"अगर उस कहानी की फिल्म बनी तब क्या देंगे ?"

कहा—"फिल्म बनने पर मैं भी तुम्हें एक हजार दूँगा।"

इस प्रकार उससे बात पक्की हो गयी। मुझे लगा जैसे मेरी बातों से वह संतुष्ट हो गया है। हरिपद के साथ मेरा पुराना सम्बन्ध है। मेरी बात भला वह टाल सकता है ?

वापस मुड़कर चलते-चलते सहसा वह पलटकर बोला—"एक बात है सर।"

कहा—"कहो, क्या कहना चाहते हो ?"

हरिपद—"एक बात और पूछने की इच्छा है।"

कहा—"कहो भी। क्या कहना चाहते हो। कहने में इतना संकोच क्यों ?"

हरिपद ने कहा—"अगर कहीं से कोई पुरस्कार मिला……।"

मैंने कहा—"पुरस्कार तो मुझे कई जगह से मिल चुका है।"

हरिपद ने कहा—"सर, आप मेरा मतलब नहीं समझे। आजकल अनेक प्रकार के पुरस्कार दिये जाते हैं। अगर आपको कोई पुरस्कार-उरस्कार मिले तो उसमें मेरा कमीशन कुछ रहेगा तो ?"

कहा—"अभी से कमीशन की बात कह रहे हो ? पहले तुम ऐसे नहीं थे।"

हरिपद ने कहा—"पहले एक जगह रहता था। आजकल दूसरी जगह हूँ। अब तो मकान-किराया भी देना पड़ता है, भोजन बनाना पड़ता है। एक अर्से से नौकरी की तलाश कर रहा हूँ, पर मिल नहीं रही है। आप मेरे लिए कहीं रहने की व्यवस्था कर सकते हैं ?"

कहा—"पहले एक दिन मेरे यहाँ आओ तब आगे देखा जायगा। कब आ रहे हो, यह बताओ।"

हरिपद ने पूछा—"पूजा-दीपावली विशेषांक का मामला तो नहीं है ? लगता है, इस विशेषांक में उपन्यास लिखने का आर्डर मिला है।"

हरिपद में यही एक दोष है। इसमें गुण अनेक हैं, परन्तु रुपये का लालची अधिक हो गया है। लगता है जैसे रुपये उसके लिए अस्थि-मज्जा हैं।

पर किया क्या जाय ? पृथ्वी पर जितने लोगों को मैंने देखा है, उनमें कितने लोगों का अर्थ पर लोभ नहीं है, यह नहीं मालूम। संभवतः नब्बे प्रतिशत लोग रुपये के अलावा कुछ नहीं चाहते। पहले रुपया, बाद में और कुछ।

हरिपद साधारण आदमी है। जीवन में बड़ा दुःख भोगा है, कष्ट पाया है। पढ़ा-लिखा है नहीं। पढ़ाई-लिखाई में भी पैसों की जरूरत होती है। उसके लिए यह रुपये कहाँ से लाता ?

इस दुनिया में ऐसे अनेक लोग हैं जिनके पास सब कुछ है, पर रुपये नहीं हैं। दूसरी ओर ऐसे अनेक लोग हैं, जिनके पास काफी रुपये हैं, पर जिन चीजों के रहने से आदमी अपने को सुखी समझता है, उनमें से एक भी नहीं है।

हरिपद एक ऐसा व्यक्ति है जो बुरी तरह अभावग्रस्त है और दूसरी ओर आश्रय-हीन। इस दुनिया में अपना कहने को उसका कोई नहीं है। जन्म लेने के बाद उसने देखा कि वह अकेला है और इतनी उम्र गुजर जाने के बाद भी देख रहा है कि अभी तक वह अकेला है।

हम लोग उससे कहानियाँ लेकर रुपये कमाते हैं या अपना पे पालते हैं, ऐसे लोग यानी हम सब उसे कभी अपना आदमी नहीं सम झते। हम लोग उसे एक साधारण उपकरण के अलावा और कुछ न मानते। हमें उसकी आवश्यकता होती है, इसलिए उसे घर बुलाक उसकी खातिरदारी करते हैं, आदर देते हैं, चाय-जलपान और भोज देते हैं। और जब हमारी जरूरत समाप्त हो जाती है तब उसे चूसे हु आम की गुठली की तरह कूड़ेखाने में फेंक देते हैं।

जिस हरिपद के बारे में यहाँ इतने विस्तार के साथ उल्लेख किय उसी व्यक्ति का आज एक विपरीत रूप देखा। आश्चर्य है! विश्व विधाता की सृष्टि में न जाने कितनी विचित्रताएँ हैं।

हरिपद के आने पर जो करता हूँ, इस बार भी वही किया। उस लिए चाय आयी।

चाय देखते ही हरिपद ने कहा—"सिर्फ चाय? और कुछ नहीं आज सवेरे से कुछ भी नहीं खाया।"

मैंने पूछा—"क्यों? कुछ खाया क्यों नहीं?"

हरिपद ने कहा—"खाने को कौन देगा? मुझे तो अपने हाथ खाना बनाना पड़ता है।"

मैंने कहा—"इससे अच्छा होता कि होटल में खाते। अके आदमी हो, रसोई-पानी का बखेड़ा क्यों करते हो? इससे समय व बचत होती है।"

हरिपद ने कहा—"होटल में खाने पर कितना खर्च होगा, यह आ जानते हैं? दस रुपये से कम निरामिष भोजन नहीं मिलता।"

अब इस बात का क्या जवाब देता। समझते देर नहीं लगी कि इन्हीं बातों के जरिये वह मुझसे अधिक रुपये वसूल करना चाहता है अब अगर मैं हरिपद को नाराज करता हूँ तो मेरा नुकसान होगा क्योंकि इस वक्त मेरे सामने जीवन-मरण की समस्या है। हलवाई के यहाँ से कचौड़ी, समोसा, रसगुल्ला, गुलाब-जामुन आदि मँगवाय ताकि भरपेट खाकर खुश हो जाय।

हरिपद ने खाते-खाते कहा—"समोसे के साथ मुझे चाय अच्छी लगती है, सर।"

हरिपद ने कहा—"अगर कहीं से कोई पुरस्कार मिला······।"

मैंने कहा—"पुरस्कार तो मुझे कई जगह से मिल चुका है।"

हरिपद ने कहा—"सर, आप मेरा मतलब नहीं समझे। आजकल अनेक प्रकार के पुरस्कार दिये जाते हैं। अगर आपको कोई पुरस्कार-उरस्कार मिले तो उसमें मेरा कमीशन कुछ रहेगा तो?"

कहा—"अभी से कमीशन की बात कह रहे हो? पहले तुम ऐसे नहीं थे।"

हरिपद ने कहा—"पहले एक जगह रहता था। आजकल दूसरी जगह हूँ। अब तो मकान-किराया भी देना पड़ता है, भोजन बनाना पड़ता है। एक अर्से से नौकरी की तलाश कर रहा हूँ, पर मिल नहीं रही है। आप मेरे लिए कहीं रहने की व्यवस्था कर सकते हैं?"

कहा—"पहले एक दिन मेरे यहाँ आओ तब आगे देखा जायगा। कब आ रहे हो, यह बताओ।"

हरिपद ने पूछा—"पूजा-दीपावली विशेषांक का मामला तो नहीं है? लगता है, इस विशेषांक में उपन्यास लिखने का आर्डर मिला है।"

हरिपद में यही एक दोष है। इसमें गुण अनेक हैं, परन्तु रुपये का लालची अधिक हो गया है। लगता है जैसे रुपये उसके लिए अस्थि-मज्जा हैं।

पर किया क्या जाय? पृथ्वी पर जितने लोगों को मैंने देखा है, उनमें कितने लोगों का अर्थ पर लोभ नहीं है, यह नहीं मालूम। संभवतः नब्बे प्रतिशत लोग रुपये के अलावा कुछ नहीं चाहते। पहले रुपया, बाद में और कुछ।

हरिपद साधारण आदमी है। जीवन में बड़ा दुःख भोगा है, कष्ट पाया है। पढ़ा-लिखा है नहीं। पढ़ाई-लिखाई में भी पैसों की जरूरत होती है। उसके लिए यह रुपये कहाँ से लाता?

इस दुनिया में ऐसे अनेक लोग हैं जिनके पास सब कुछ है, पर रुपये नहीं हैं। दूसरी ओर ऐसे अनेक लोग हैं, जिनके पास काफी रुपये हैं, पर जिन चीजों के रहने से आदमी अपने को सुखी समझता है, उनमें से एक भी नहीं है।

हरिपद एक ऐसा व्यक्ति है जो बुरी तरह अभावग्रस्त है और दूसरी ओर आश्रय-हीन। इस दुनिया में अपना कहने को उसका कोई नहीं है। जन्म लेने के बाद उसने देखा कि वह अकेला है और इतनी उम्र गुजर जाने के बाद भी देख रहा है कि अभी तक वह अकेला है।

हम लोग उससे कहानियाँ लेकर रुपये कमाते हैं या अपना पेट
लते हैं, ऐसे लोग यानी हम सब उसे कभी अपना आदमी नहीं सम-
ते। हम लोग उसे एक साधारण उपकरण के अलावा और कुछ नहीं
नते। हमें उसकी आवश्यकता होती है, इसलिए उसे घर बुलाकर
की खातिरदारी करते हैं, आदर देते हैं, चाय-जलपान और भोजन
हैं। और जब हमारी जरूरत समाप्त हो जाती है तब उसे चूसे हुए
म की गुठली की तरह कूड़ेखाने में फेंक देते हैं।

जिस हरिपद के बारे में यहाँ इतने विस्तार के साथ उल्लेख किया,
ी व्यक्ति का आज एक विपरीत रूप देखा। आश्चर्य है! विश्व-
धाता की सृष्टि में न जाने कितनी विचित्रताएँ हैं।

हरिपद के आने पर जो करता हूँ, इस बार भी वही किया। उसके
ए चाय आयी।

चाय देखते ही हरिपद ने कहा—"सिर्फ चाय? और कुछ नहीं?
ज सवेरे से कुछ भी नहीं खाया।"

मैंने पूछा—"क्यों? कुछ खाया क्यों नहीं?"

हरिपद ने कहा—"खाने को कौन देगा? मुझे तो अपने हाथ से
ना बनाना पड़ता है।"

मैंने कहा—"इससे अच्छा होता कि होटल में खाते। अकेले
दमी हो, रसोई-पानी का बखेड़ा क्यों करते हो? इससे समय की
त होती है।"

हरिपद ने कहा—"होटल में खाने पर कितना खर्च होगा, यह आप
नते हैं? दस रुपये से कम निरामिष भोजन नहीं मिलता।"

अब इस बात का क्या जवाब देता। समझते देर नहीं लगी कि
हीं बातों के जरिये वह मुझसे अधिक रुपये वसूल करना चाहता है।
अगर मैं हरिपद को नाराज करता हूँ तो मेरा नुकसान होगा,
ोंकि इस वक्त मेरे सामने जीवन-मरण की समस्या है। हलवाई के
ाँ से कचौड़ी, समोसा, रसगुल्ला, गुलाब-जामुन आदि मँगवाया
कि भरपेट खाकर खुश हो जाय।

हरिपद ने खाते-खाते कहा—"समोसे के साथ मुझे चाय अच्छी
ती है, सर।"

कहा—"और समोसा मँगा दूं ?"

हरिपद ने कहा—"तब तो सर, आपको एक कप चाय और मँगानी पड़ेगी। एक कप चाय से काम नहीं चलेगा।"

कहा—"कोई हर्ज नहीं। मैं एक कप चाय और मँगा दूंगा।"

वही किया। कुछ समोसे और दो-एक कप चाय पाने पर जो लोग संतुष्ट हो जाते हैं, वे सीधे स्वभाव के होते हैं। ऐसे लोग गृहस्थी में विशेष झमेला नहीं करते।

हरिपद खा-पीकर जब खाली हो गया तब उससे काम की बातचीत करने को तैयार हो गया।

मैंने कहा—"तुमने अपना डेरा क्यों बदल दिया, अभी तक बताया नहीं ?"

हरिपद ने कहा—"उस दुःख की बात मत पूछिये सर ! आपने इसके पहले कभी नहीं देखा था। अगर उन दिनों आप देखते तो समझ पाते कि मैं क्या था। मैंने इसके पहले अपना जो पता दिया था, वह मेरे घर का पता नहीं था। वह तो सरोज बाबू के घर का पता था।"

"सरोज बाबू ? सरोज बाबू कौन हैं ?"

हरिपद ने कहा—"सरोज बाबू माने सरोज सरकार।"

"उनके साथ तुम्हारा परिचय कैसे हो गया ? क्या वे तुम्हारे परिचितों में हैं ?"

हरिपद ने कहा—"वह एक लम्बी कहानी है, सर। मेरी उनसे कभी जान-पहचान नहीं थी, उनकी पत्नी को भी नहीं पहचानता था। सर्वप्रथम सरोज बाबू की पत्नी से मेरा परिचय हुआ था। मैं उन्हें भाभीजी कहकर पुकारता था।"

मैंने पूछा—"आखिर उक्त भाभीजी से कैसे तुम्हारा परिचय हुआ ?"

हरिपद ने कहा—"वह भी एक मजेदार घटना थी, सर। अगर आप चाहें तो इस घटना को लेकर एक कहानी लिख सकते हैं। अगर आप सचमुच इस घटना को लेकर कहानी लिखें तो आपका काफी नाम होगा।"

हरिपद की जबानी जो कहानी सुनी, इस सम्बन्ध में उसने कभी कोई चर्चा नहीं की थी।

एक दिन की बात है। हरिपद अपनी आदत के मुताबिक फुटपाथ पर बैठा था। उन दिनों हरिपद अधिकतर फुटपाथ पर ही रहता था।

यह उसका दैनिक कार्य था। इसे फुटपाथ पर बैठा देखकर लोग अवाक् रह जाते थे। मगर कोई कुछ कहता नहीं था। स्वयं हरिपद भी उप-याचक बनकर किसीसे कुछ नहीं कहता था। सामने एक बाजार था। इस बाजार में हर तरह के लोग सवेरे अपना आवश्यक सामान खरी-दने आते थे। इस बाजार में भंटा, आलू, साग, मछली, गोश्त आदि सभी चीजें बिकती थीं, इसीलिए काफी भीड़ होती थी।

हरिपद फुटपाथ पर अकेला नहीं बैठता था। उसके आसपास कई फेरीवाले और भिखमंगे भी बैठे रहते थे। फेरीवालों में कोई चावल बेचता तो कोई पकौड़ी-फुलौरी और कोई सब्जी। ग्राहकों की भीड़ के कारण चारों ओर चहल-पहल रहती थी।

दोपहर को भीड़ हल्की हो जाती। इसके बाद पुनः भीड़ हल्की होती रात दस बजे के बाद। उस वक्त सभी व्यापारी न जाने कहाँ गायब हो जाते थे, इस सम्बन्ध में हरिपद कुछ नहीं जान पाता था। कुछ लोग अपना माल लेकर वहीं जमीन पर सो जाते थे और फिर उनकी नाक की आवाजें सुनाई देने लगती थीं।

गैर कानूनी बाजार। सरकारी सड़कों पर बाजार लगाना एक प्रकार से अपराध है, ठीक उसी प्रकार वहाँ सामान बेचना भी अप-राध है।

पर इन्हें कौन हटायेगा ?

अगर इन्हें कोई हटा सकता है तो केवल एकमात्र सरकार। लेकिन सरकार कोई एक व्यक्ति नहीं है। सरकार का अर्थ है—एक पार्टी। पार्टी ही सरकार चलाती है। पर जो लोग सरकारी कानून तोड़ते हैं, उन्हें सजा देने के लिए है—पुलिस, अदालत आदि। इन्हें लम्बी तनख्वाह पर पाला जाता है। यह ड्यूटी इन्हीं लोगों की है।

लेकिन इस युग में कोई अपनी ड्यूटी करता है ?

अगर लोग अपनी-अपनी ड्यूटी करते रहें तो फिर चिन्ता किस बात की ? कलकत्ता शहर रातों-रात स्वर्ग बन जाता। लेकिन ड्यूटी करने से रुपये नहीं मिलते, इसीलिये यहाँ पुलिस के बदले कुछ दलाल आते हैं। ये दलाल रोज आते हैं। हृष्ट-पुष्ट शरीर, भरा-पूरा चेहरा। पायजामा और कमीज पहने रहते हैं। इनके हाथ में टीन का एक डिब्बा रहता है जिसमें एक छेद होता है।

दलाल छेदवाले डिब्बे को आगे बढ़ाकर कहता है—"अरे दुलाल ! चल, चन्दा दे ।"

दुलाल चन्दा देता है। इसे पच्चीस पैसे देने पड़ते हैं। इसके बाद गोपाल, फिर पराण ।

इसी प्रकार एक के बाद दूसरा, फिर तीसरा नाम आता है। लम्बी सूची है। फुटपाथ पर बैठने के लिए दैनिक चन्दा देना अनिवार्य है। चन्दा न देने पर जगह छोड़नी पड़ेगी। यही है इन फुटपाथों का अलिखित नियम ।

इसी माहौल में बेवकूफों की तरह हरिपद हमेशा बैठा रहता है। हरिपद कहाँ से आया है, किस शहर का निवासी है, घर-गृहस्थी है या नहीं और अगर है तो परिवार में कौन-कौन हैं—इसे कोई नहीं जानता और न किसीको जानने की गरज है।

हरिपद किसीके आगे हाथ नहीं फैलाता, इसलिए इसे कोई भीख नहीं देता। इसी प्रकार दिन गुजर रहे थे। सहसा एक दिन सवेरे एक अद्भुत घटना घटी। एक महिला उसके सामने आकर खड़ी हुई ।

महिला सुन्दरी थी। हरिपद ने उनकी ओर गौर से देखा। इसके पहले कभी कोई महिला इस तरह उसके सामने आकर खड़ी नहीं हुई थी।

आखिर यह महिला क्यों उसके सामने आकर खड़ी हुई, इसे हरिपद समझ नहीं सका ।

हरिपद एकटक महिला की ओर देखता रहा और उधर महिला भी गौर से हरिपद को देखती रही, जबकि वे एक-दूसरे को पहचानते नहीं थे।

काफी देर के बाद महिला ने पूछा—"तुम यहाँ बैठे-बैठे क्या करते हो ? क्या भीख माँगते हो ?"

हरिपद ने कहा—"नहीं माताजी, मैं भीख नहीं माँगता ।"

महिला ने कहा—"जब भीख नहीं माँगते तो यहाँ किसलिए बैठे हो ?"

हरिपद ने कहा—"यों ही—"

इसके बाद इधर-उधर की बातें हुईं।

महिला ने पूछा—"किस जिले के रहनेवाले हो ?"

हरिपद ने कहा—"यहाँ से काफी दूर, एक गाँव में मेरा घर है।"

"काम-काज करना कुछ जानते हो ?"

"कैसा काम-काज ?"

"मान लो, घर-गृहस्थी का काम।"

हरिपद ने कहा—"यह क्यों नहीं जानूंगा, माताजी ? हम लोग गरीब आदमी हैं। हमें घर का सारा काम-धाम अपने हाथ से करना पड़ता है।"

"तुम्हारा अपना कोई है या नहीं ?"

हरिपद ने कहा—"नहीं माताजी, मेरा अपना कोई नहीं है। एक भगवान् को छोड़कर अपना कहने को कोई नहीं है।"

अब महिला ने पुनः सवाल किया—"मैं नित्य देखती हूँ कि तुम यहाँ बराबर बैठे रहते हो। आखिर खाते-पीते कहाँ हो ? सोते कहाँ हो ?"

हरिपद ने कहा—"मुझे भला खाने को कौन देगा ? आपकी तरह कोई दयालु कभी केला-संतरा दे देता है तो वही खाता हूँ। अगर किसी दिन कुछ नहीं मिला तो उपवास करता हूँ।"

"और सोते कहाँ हो ?"

हरिपद ने कहा—"यहीं सो जाता हूँ।"

यह बात सुनकर महिला शायद अवाक् रह गयी। इस तरह के किसी व्यक्ति से आज के पहले कभी मुलाकात नहीं हुई थी। यहाँ तक कि कभी देखा या सुना भी नहीं था।

महिला ने पूछा—"तुम मेरे यहाँ रहोगे ?"

हरिपद ने सोचा—भगवान् की यह कौन-सी अद्भुत लीला है। अगर किसीको रहने के लिए जगह मिल जाय तो वह क्यों फुटपाथ पर सोयेगा ? एक समय था जब उसका घर था, अपना कहने को लोग थे। आज वह सब नहीं है, इसीलिए तो फुटपाथ पर रहना पड़ रहा है। भीख माँगने की आदत न होने के कारण भीख भी नहीं मांग पाता। अगर रहने को घर मिले तो क्यों नहीं चाहेगा ? भोजन मिले तो क्यों नहीं खायेगा ? भूख का दर्द कितना भयानक होता है ? भूख की ज्वाला को उसने जितने तीव्र रूप से अनुभव किया है, उसे भला और किसीने अनुभव किया है ?

महिला संभवतः बाजार से सामान लाने जा रही थी। हाथ में प्लास्टिक का एक झोला था। इसके बाद बिना कोई बातचीत किये वह जिधर जा रही थी, उधर चली गयी।

अब हरिपद क्या करता। पहले की तरह चुपचाप बैठा रहा। अचानक सिर चकराने लगा। आँखों के सामने तारे नाचने लगे। जिसके पास कोई काम नहीं रहता, वह सिर्फ चक्कर काटा करता है।

हरिपद उठकर खड़ा हो गया। इसके बाद एक-एक कदम बढ़ाकर एक ओर चलने लगा। उसका न तो कोई उद्देश्य है और न कोई उद्यम।

हरिपद की दृष्टि में एक और जमाना था। उन दिनों किसीके प्रति कोई शिकायत नहीं थी। पैदल चलते हुए वह किसी हलवाई की दुकान के सामने खड़ा हो जाता और देखता कि शीशे की आलमारी में रस-गुल्ले-गुलाब-जामुन आदि रखे हैं।

उन दिनों ऐसी घटनाएँ होती थीं। न जाने कितने लोगों को वह देख चुका है। उस वक्त वह सोचता जैसे संसार के सभी मनुष्यों को देख चुका है। उस समय इस बात की कल्पना भी नहीं थी कि अभी बहुत कुछ देखना बाकी है।

क्या कभी उसने यह सोचा था कि सरोज बाबू और जया माताजी को बगैर देखे, उसका यह दुनिया देखना अपूर्ण रहेगा? अगर वह सरोज बाबू तथा जया माताजी को न देखता तो उसका जीवन सार्थक न होता।

इधर-उधर चारों ओर घूमते रहने के कारण वह थककर चूर-चूर हो गया। अन्त में एक पार्क के भीतर जाकर बैठ गया।

पार्क में काफी लोगों की भीड़ थी। अनेक प्रकार के लोग तथा अनेक प्रकार के दृश्य देखता रहा। एक ओर झुरमुट में बैठा एक जोड़ा आपस में बातें कर रहा था। इस तरह के दृश्य वह कई बार देख चुका है। वह कैसी बातें कर रहे हैं, क्यों कर रहे हैं, यह सब वह नहीं समझ पाता था।

पैदल चलते-चलते जब वह काफी दूर चला जाता तब रात गहरी हो जाती। इसके बाद हरिपद अपने निर्दिष्ट स्थान पर आकर सो जाता। दिनभर खाने को कुछ नहीं मिला, आराम भी नहीं मिला। इतना होने पर भी नींद आने में कोई बाधा नहीं आती। फुटपाथ के चिरपरिचित स्थान पर वह सो जाता। भोर के वक्त झाड़ू लगाने-वाला जब आता तब उसके झाड़ू की आवाज से हरिपद की आँखें खुल जातीं।

उस दिन भी बाजार में चहल-पहल शुरू हो गयी थी। अपनी आदत के अनुसार हरिपद वहाँ अकेला बैठा था। अचानक जनानी आवाज सुनकर उसने चौंककर उनकी ओर देखा।

"आज भी तुम बैठे हो ?"

यह वही पहलेवाली महिला थी। इस प्रश्न का हरिपद क्या जवाब देता ? कई दिनों से किसीके पेट में अन्न का दाना न जाय तो उसकी जैसी हालत होती है, ठीक वही हालत इस समय हरिपद की थी। इस वक्त तो उसकी आँखों के सामने तारे नाच रहे थे।

धीरे से कहा—"हाँ, बैठा हूँ।"

हरिपद का उत्तर सुनकर पहले की तरह आज वे चली नहीं गयीं। खड़ी रहीं। बाद में पूछा—"तुम घरेलू काम कर सकते हो ?"

यह बात सुनकर हरिपद अवाक् रह गया। उसने पूछा—"आप मुझे काम देंगी ?"

महिला ने कहा—"अगर तुम मेरे घर काम करने को राजी हो तो तुम्हें काम दे सकती हूँ। तनख्वाह क्या लोगे ?"

हरिपद ने कहा—"तनख्वाह मुझे नहीं चाहिए, माताजी। मुझे तनख्वाह देने की जरूरत नहीं। भोजन देंगी ?"

महिला—"खाने को नहीं दूंगी तो तुम खाओगे कहाँ ? हम लोग जो कुछ खाते हैं, वही खाना तुम्हें भी दूंगी।"

हरिपद ने कहा—"तब चलिये। मैं अभी चलने को तैयार हूँ।"

महिला ने कहा—"अच्छी बात है। जरा ठहरो। मैं जरा बाजार से सामान खरीद लाऊँ। थोड़ी देर बाद लौट आऊँगी।"

थोड़ी देर बाद थैले में सामान लेकर वह महिला वापस आयी। आते ही हरिपद से बोली—"चलो, मेरे पीछे-पीछे आओ।"

हरिपद ने खड़े होकर कहा—"थैला कृपया मुझे दीजिए। मैं ले चलता हूँ।"

महिला से सामान का थैला लेकर हरिपद उनके पीछे-पीछे चल

पड़ा। कई गलियों को पार करने के बाद एक छोटे मकान के सामने आकर महिला खड़ी हुई। आँचल से चाभी निकालकर उन्होंने सदर दरवाजा खोला।

हरिपद भी उनके पीछे-पीछे मकान के भीतर आया। भीतर आने पर हरिपद ने देखा—एक मंजिलवाले मकान में दो कमरे हैं। घर में अन्य कोई व्यक्ति नहीं है। महिला ने कहा—"यही है मेरा घर। हम लोग यहाँ रहते हैं।"

थैले को एक ओर रखने के बाद हरिपद चारों ओर देखने लगा। कम-से-कम सड़क के फुटपाथ से यह जगह अच्छी है। चारों ओर दीवारें हैं। जगह-जगह से पलस्तर उखड़ गये हैं, फिर भी मकान के भीतर धूप और हवा की कमी नहीं। सिर के ऊपर एक छत है। पानी बरसने पर भींगने का डर नहीं रहेगा।

"इधर देखो, तुम यहाँ आराम करोगे।"

बरामदे के एक हिस्से को दीवारों से घेरकर कमरा बनाया गया है। हरिपद ने अच्छी तरह परखने के बाद सोचा—यह घर नहीं, स्वर्ग है।

महिला ने पूछा—"जगह पसन्द आयी ?"

हरिपद ने उत्तर दिया—"हाँ, माँ ! यह घर नहीं, स्वर्ग है।"

महिला ने कहा—"अब मेरे साथ थाने तक चलो।"

हरिपद डर गया। कहा—"थाने में ? थाने में क्यों ?"

"वाह रे, न तुम्हें पहचानती हूँ और न जानती हूँ। तुम्हें अपने यहाँ ले आयी। थाने में तुम्हारे गाँव का पता, नाम लिखवाना पड़ेगा। मान लो कि तुम चोरी करके गायब हो जाओ तब क्या होगा ?"

बात हरिपद को जँच गयी। उसने कहा—"तो क्या अभी चलना पड़ेगा, माताजी ?"

महिला बोली—"हाँ, अभी नहीं तो क्या, बाद में ? चलो, चलो, देर मत करो।"

कहने के साथ ही महिला उसी हालत में मकान से बाहर निकल आयी। सदर दरवाजे में ताला बन्द करने के बाद चल पड़ी।

हरिपद को लाचारी में महिला के पीछे-पीछे थाने की ओर जाना पड़ा।

मैंने पूछा—"इसके बाद ? इसके बाद क्या हुआ ?"

हरिपद के जीवन में कलकत्तावाला अध्याय इसी प्रकार प्रारंभ हुआ था। हरिपद से जब मेरा प्रथम परिचय हुआ तब यह सब मुझे नहीं मालूम था।

वह इसलिए कि यह सब जानने की जरूरत मुझे नहीं थी। हरिपद से पहले-पहले कैसे परिचय हुआ था, यह आज ठीक से याद नहीं आ रहा है। आज पहली बार हरिपद ने बताया कि सरोज सरकार के मकान में वह कैसे पहुँचा।

हरिपद की जबानी उसकी कहानी सुनने में आयी।

उसने जो कहानी सुनाई, वह अत्यन्त मार्मिक थी। मनुष्य का जीवन कितना विचित्र हो सकता है, यह कहानी इस बात का उदाहरण है।

जो महिला हरिपद को फुटपाथ से उठाकर अपने घर ले गयी थी, उसका नाम जया था। जया सरकार। वह सरोज सरकार की पत्नी थीं। घर में नौकर-नौकरानी न रहने के कारण ही जया फुटपाथ से उठाकर हरिपद को अपने घर ले गयी थी।

मैंने पूछा—"लेकिन इतने दिनों बाद तुमने वह घर क्यों छोड़ दिया ? क्या हुआ था ?"

मैं उस दिन सरोज सरकार के घर इसकी तलाश में गया था, इसे मैंने प्रकट नहीं किया। उस दिन उसी गली में पुलिस और जनता की भीड़ देखी थी, यह भी मैंने नहीं कहा। यहाँ तक कि एक प्राइवेट गाड़ी में एक वृद्धा को रोते देखा था, यह भी नहीं बताया। सोचा, यह सब न कहना ही उचित है। देखूँ, हरिपद सारी बातें कहता है या नहीं।

मैंने पूछा—"बोलो, मेरे सवालों का जवाब क्यों नहीं दे रहे हो ?

हरिपद ने कहा—"सरोज बाबू के यहाँ का काम क्यों छोड़ दिया, वही तो कहानी है। अगर उस कहानी को सुनाऊँगा तो आप उसके आधार पर कहानी लिख लेंगे और इधर मेरा नुकसान हो जायगा।"

"तुम्हारा कैसा नुकसान होगा ?"

हरिपद ने कहा—"वाह, कहानी सुन लेने के बाद भला आप मुझे रुपये देंगे ? मैं बंगाली-लेखकों को अच्छी तरह पहचान गया हूँ। मुझसे कहानी का प्लाट लेकर वे लिखते हैं और जब उनका नाम होता है तब कहते हैं कि बड़ा दिमाग लड़ाना पड़ा था।"

मैंने कहा—"अच्छा, यह बताओ, क्या मैंने तुम्हारे साथ ऐसा कभी किया है ? मैं तो बराबर तुम्हें प्लाट देने के बदले उचित मजदूरी देता आया हूँ। यहाँ तक कि मीटिंगों में न जाने कितनी बार कह चुका हूँ कि मेरी कहानियों का अधिकांश प्लाट मुझे हरिपद से मिला है।"

मुझे लगा जैसे मेरी बातों से हरिपद संतुष्ट हो गया। उसने कहा—"खैर, मैं अपनी ओर से कुछ भी नहीं कहूँगा, सर। ऊपर भगवान् हैं, वे अन्तर्यामी हैं। उनसे कुछ छिपा नहीं है, वे सब कुछ देख रहे हैं। एक न एक दिन इसका फैसला होगा ही। उस दिन ब्याज-सहित सारा मूलधन वापस होगा।"

मैंने कहा—"खैर, यह सब रहने दो। तुम उस महिला के बारे में कुछ सुनाओ। वही जया सरकार, जो तुम्हें फुटपाथ से उठाकर अपने घर ले गयी, फिर वहाँ से तुम्हें थाने तक ले गयी थी।"

हरिपद ने कहा—"जया माताजी का मुझे थाने तक ले जाना, कोई गलत कार्य नहीं था। आजकल कौन किसका विश्वास करता है, सर ! आप ही सोचिये। आजकल तो सारी दुनिया बदल गयी है। असली माल खरीदनेवाले कहाँ हैं ? सभी तो मिलावटवाले हैं।"

हरिपद में यही एक दोष है। वह हर वक्त काम की बात के अलावा बेकार की बातें करता है। क्यों वह सरोज सरकारवाला डेरा छोड़कर दूसरी जगह चला गया, इस बात को साफ-साफ कहने में उसे काफी समय लगा।

उसकी बेकार की बातों के दरम्यान मुझे जो कहानी प्राप्त हुई, वह यों है कि जया माताजी के पति कहीं नौकरी करते हैं। दरअसल उसका असली काम है—यूनियनबाजी। न जाने किस चीज की फैक्टरी में वह नौकरी करता है। वहाँ काम करने की अपेक्षा अधिकतर यूनियनबाजी करता है। जो लोग यूनियनबाजी करते हैं, कारखाने के मालिक उनसे अधिक सावधान रहते हैं। कहने का मतलब फैक्टरी के मालिक उनसे डरते हैं। उसके कार्यों से ही नहीं डरते, बल्कि उसके मिजाज से भी डरते हैं। सरोज सरकार काम रहने पर भी काम नहीं करता और उसके पास काम न रहने पर भी कोई उसे काम देने का साहस नहीं करता। किसमें इतना साहस है जो उससे यह कह सके कि तुम यह काम करो।

सरोज सरकार सभी को सुनाते हुए कहता है—"आजकल कैसा

जमाना आ गया है भाई जान, कोई काम नहीं करना चाहता। काम न करने पर मुल्क का नुकसान होता है, इस ओर कोई सोचता है ?"

उसकी बातों से ऐसा लगता है जैसे संसार के सारे कार्यों की जिम्मेदारी उसे देकर स्वयं विधाता भी निश्चिन्त हैं। अपने को सरोज सरकार इस ढंग से पेश करता है।

इधर घर पर उसका रूप कुछ और ढंग का होता है।

हरिपद को देखते ही कहेगा—"हरिपद, अरे हरिपद।"

हरिपद दादा बाबू को पुकारते सुनकर आयेगा।

पूछेगा—"क्या बात है, दादा बाबू ? मुझे बुला रहे थे ?"

दादा बाबू कहेंगे—"एक पाकेट सिगरेट ले आ।"

सिगरेट खरीदने का आदेश तो दादा बाबू ने दिया, पर पैसे नहीं दिये।

हरिपद को चुपचाप खड़ा रहते देख दादा बाबू ने कहा—"क्यों रे, खड़ा क्यों है ? मैंने क्या कहा, सुना नहीं ?"

हरिपद ने कहा—"पैसे ?"

"पैसे ?"

पैसे का नाम सुनते ही दादा बाबू जैसे आसमान से गिर पड़े। बोले—"क्या कहता है रे ? क्या नकद दिये बिना काम नहीं चलेगा ? दुकानदार से कहना कि शाम को पैसे मिल जायेंगे। इस वक्त नहीं हैं।"

फिर भी उसे उजबक की तरह खड़ा देख दादा बाबू उखड़ गये। बोले—"मैंने कुछ कहा कि नहीं ? क्या सुनाई नहीं दिया ? कहा तो, इस वक्त पैसे नहीं हैं। शाम को भिजवा दूंगा।"

लाचारी में हरिपद को घर से बाहर निकलना पड़ा। घर के पास कहां पान-सिगरेट की दुकान है, हरिपद को यह मालूम था। सड़क के मोड़ के समीप सिगरेट की दुकान पर जाकर उसने दादा बाबू के बारे में कहा।

दुकानदार उसकी बातें सुनकर अवाक् रह गया। पूछा—"और पैसे ?"

हरिपद ने कहा—"बाबू ने कहा है कि पैसे शाम को दे देंगे।"

"कौन बाबू ?"

हरिपद ने कहा—"यह जो सामनेवाली गली के भीतर पीला मकान है, उसी घर में बाबू रहते हैं।"

"क्या नाम है बाबू का ?"

हरिपद ने कहा—"सरोज बाबू यानी सरोज सरकार।"

दुकानदार बिगड़ उठा—"सरोज-फरोज बाबू को मैं नहीं पहचानता। उधार सिगरेट नहीं दूंगा। सौदा लेना है तो जाकर नकद पैसे माँग लाओ।"

दुकानदार की बातें सुनकर हरिपद भी अवाक् रह गया। साथ ही डर भी गया। अगर सिगरेट न ले गया तो शायद बाबू नाराज हो जायेंगे। ऐसी हालत में नौकरी से निकाल भी देंगे।

ऐसी स्थिति में वह क्या करे ? खाली हाथ वापस जाने में डर भी लगने लगा। धीरे-धीरे हल्के कदमों से आगे बढ़कर एक दूसरे दुकानदार के पास आया।

यहाँ भी वही बात हुई। इस दुकानदार ने कहा—"अबे, भाग जा। हम लोग उधार खाता नहीं चलाते। नकद पैसे लेकर आओगे तब सिगरेट मिलेगा।"

आखिर खाली हाथ हरिपद वापस चल पड़ा। मन ही मन सोचने लगा कि घर जाकर दादा बाबू से क्या कहेगा।

अचानक दूर कहीं से किसीने उसका नाम लेकर पुकारा।

भगवान् जब सहाय होते हैं तब ऐसी बातें होती हैं। हरिपद ने पलटकर देखा—दूर खड़ी जया माताजी उसे बुला रही हैं। डूबते को तिनके का सहारा मिला।

पास जाते ही जया माता ने पूछा—"तू यहाँ क्यों आया है ?"

हरिपद ने कहा—"दादा बाबू ने सिगरेट खरीदने के लिए भेजा है, पर कोई उधार नहीं दे रहा है। अब वापस घर जा रहा था।"

जया माँ शायद कालीघाटवाले मन्दिर का दर्शन करके वापस आ रही हैं। भीगे बाल पीठ पर लहरा रहे हैं। सिर पर आँचल है। ललाट पर सिंदूर का टीका।

अपने आँचल में बँधी रकम से एक रुपया देकर उन्होंने कहा—"यह ले। सिगरेट खरीदने के बाद बाकी पैसे वापस दे देना।"

हरिपद दौड़कर दुकान से एक पैकेट सिगरेट खरीद लाया। बाकी पैसे जया माँ के हाथ पर रख दिये। अब जाकर वह निश्चिन्त हो गया। अब दादा बाबू के सामने खड़े होने पर उसे डर नहीं लगेगा।

दोनों एक साथ चल रहे थे। जया माँ ने पूछा—"दाल तैयार हो गयी ?"

हरिपद ने कहा—"हाँ, तैयार हो जाने के बाद चूल्हे से उतारकर रख दी, फिर इधर चला आया।"

"छौंका नहीं ?"

हरिपद ने कहा—"छौंकने में डर लगने लगा, इसलिए सिर्फ उतारकर रखा था कि दादा बाबू ने सिगरेट लाने को भेजा।"

जया माँ का चेहरा देखने पर उसने अनुभव किया कि उसकी बातों से वे नाराज नहीं हुईं।

जया माँ ने कहा—"आज मन्दिर में बहुत भीड़ थी, इसलिए आने में देर हो गयी। जरा पैर बढ़ाकर चल। वहाँ आँच बेकार खराब हो रही है।"

आँच खराब होने का अर्थ है—बेकार का खर्च बढ़ाना। जया माँ बेकार-खर्च करना पसन्द नहीं करतीं।

जब दोनों सदर दरवाजे के पास आये तब भीतर से साँकल खोलने के बाद दादा बाबू ने पूछा—"क्यों रे, सिगरेट लाने में इतनी देर क्यों लगा दी ?"

सहसा सामने जया माँ को देखकर वे नरम हो गये।

जया माँ की ओर देखते हुए उन्होंने पूछा—"आज तुम्हें मंदिर से लौटने में इतनी देर क्यों हुई ? इधर सिगरेट समाप्त हो जाने के कारण मेरे सिर में दर्द पैदा हो गया।"

जया माँ ने कहा—"ऐसा नशा क्यों करते हो जिसके बिना सर-दर्द पैदा हो ? और फिर इस बात को अच्छी तरह जानते हो कि आजकल कोई कुछ उधार नहीं देता।"

सिगरेट पाते ही दादा बाबू ने तुरत एक सिगरेट मुँह में लगाया। थोड़ी ही देर में उनका मिजाज ठीक हो गया। बोले "मंदिर जाने की तुम्हें बाई चढ़ गयी है। मंदिर में जाकर उन पंडों को पैसा देने से क्या स्वर्ग-लाभ होता है ?"

जया माँ अक्सर ऐसे प्रश्नों का उत्तर नहीं देतीं। लेकिन आज बोलीं—"यह तुम नहीं समझोगे। अब तक जो तुम जीवित हो, वह इसलिए कि ऊपर से माँ की कृपा प्राप्त हो रही है।"

दादा बाबू ने कहा—"रहने दो यह सब बुर्जुआवादी बातें। अगर मेरी पार्टी पावर में आ गयी तो यह सब रूढ़िवाद स[illegible] [illegible]रवा दिया जायगा। यह जो काली-मंदिर है, सबसे पहले उ[illegible]
जायगा।"

"जब गिराओगे तब गिराना। उस वक्त देखा जायगा।"

इसके बाद रसोईघर में आकर जया माँ ने हरिपद से कहा—"अरे हरिपद, नमक नहीं है।"

हरिपद ने पूछा—"नमक नहीं है ?"

जया माँ ने कहा—"सवेरे इतना झंझट रहता है कि घर में नमक नहीं है, याद नहीं आया। तुझे पैसे देती हूँ, जरा जल्दी से नमक खरीद ला।"

विचित्र है यह गृहस्थी। एक ओर इतना अभाव है और वहीं दूसरी ओर काफी फिजूलखर्ची होती है। इन फिजूलखर्ची के अनेक उदाहरण हरिपद देख चुका है।

बिना सूचना के एकाएक एक दिन सरोज बाबू के घर उत्सव की बाढ़ आ गयी। उस दिन न जाने कहाँ-कहाँ से गाड़ी पर सरोज बाबू अपने कुछ मित्रों को लेकर आ गये। छोटा-सा मकान, शोरगुल से मुखरित हो उठा।

उस दिन हरिपद पर हुक्मों की वर्षा होने लगती है। बाजार से दो किलो गोश्त आता है, पैकेट पर पैकेट सिगरेट आती है और इसके साथ ही कई बोतलें शराब आती हैं। गोश्त पकाने का भार जया माँ को दिया जाता है। गोश्त के साथ पुलाव भी बनाना पड़ता है। इसके अलावा बाजार से चाप-कटलेट खरीदा जाता है। इन कामों की जिम्मेदारी हरिपद को दी जाती है। इसके ऊपर सरोज बाबू के मित्र अलग से उस पर रोब जमाते हैं।

"अरे हरिपद, कहाँ है ? सिगरेट खत्म हो गया। जा, जल्दी से पाँच पैकेट सिगरेट ले आ।"

दादा बाबू के मित्रों में से कोई अपने पर्स से दस रुपये का नोट निकालता है।

सिगरेट लाकर देते ही, फिर कोई नया हुक्म जारी हो जाता है।

"अरे हरिपद, सोडा नहीं है। चार बोतल झटपट लेता आ।"

दादा बाबू इस अवसर पर अपनी जेब से एक पैसा नहीं निकालते। ऐसे समारोहों में दादा बाबू की मित्र-मंडली मुक्तहस्त से खर्च करती है। बात-बात में अजीब हुक्म जारी करते हैं और इस कार्य के लिए भी मित्र-मंडली रकम खर्च करती है। शायद इन लोगों के पास इफरात रुपये हैं। इनकी शहंशाही देखने पर ऐसा लगता है जैसे बड़े घर के हैं

या अमीर बाप के बेटे हैं। मुमकिन है किसी बड़ी कम्पनी के मालिक या आला दर्जे के अफसर हैं।

जो लोग क्षण-क्षण में इस कदर रुपये लुटाते हैं, ऐसे लोगों के पास न जाने कितना बड़ा खजाना होगा ? हरिपद यह सोचकर अवाक् रह जाता।

"अरे हरिपद, खाना तैयार हुआ ?"

जया माँ खाना बनाने की जिम्मेदारी हरिपद को देकर मजलिस में जाकर बैठ गयी हैं।

पहली बार जब यह दृश्य हरिपद ने देखा था तब वह अवाक् रह गया था। अपने जीवन में कभी किसी महिला को शराब पीते उसने नहीं देखा था। शराब पीने के बाद जया माँ जैसे बदल जाती थीं। गौर से उनका चेहरा देखने पर ऐसा लगता था जैसे कोई बेवकूफ महिला है। कमरे के भीतर ही वे लड़खड़ाने लगती थीं।

लड़खड़ाती हुई वे रसोईघर के पास आकर हरिपद से पूछतीं—"क्यों रे, गोश्त तैयार हो गया ?"

बातें करते समय उनकी जबान लटपटाने लगती। बगल के कमरे में जिस वक्त दादा बाबू के मित्र और जया माँ खा-पी रहे थे, उस वक्त हरिपद गोश्त पकाने में लगा हुआ था।

जया माँ के प्रश्न करने पर हरिपद ने तुरन्त कहा - "तैयार हो चला है। बस, थोड़ी देर है। अब जल्दी ही उतारूँगा।"

जया माँ नाराज हो गयीं। बोलीं- "गोश्त पकाने में तू इतनी देर क्यों लगा रहा है ? देख तो रहा है, वे लोग चिल्ल-पों मचा रहे हैं। अब उन्हें मैं क्या जवाब दूं, बता ?"

हरिपद के पास कहने के लिए अनेक बातें हैं, कुछ कैफियत भी दे सकता है, पर जया माँ की उस वक्त की जो हालत है, उसे देखते हुए उसने अपने को रोक लिया। जिस कोयलेवाले के यहां से कोयला बराबर आता है, उसके पास कोयला नहीं था। दिया भी तो पत्थर दिया। दूसरी ओर हरिपद को ही सारा काम करना पड़ता है। बाजार से सौदा खरीदकर लाना, यहां तक कि सोडा-ह्विस्की भी लाना पड़ता है। फिर जिस दिन मित्र-मंडली आती है, उस दिन गोश्त खरीदकर लाना, पकाना, प्लेट के ऊपर सजाकर परोसना, सब कुछ तो उसे करना पड़ता है। अगर कहीं गोश्त में मिर्च या नमक कम या अधिक हुआ तो सभी लंका-कांड प्रारम्भ करते हैं।

मित्र-मंडली की यह मजलिस कब समाप्त होगी, इसका कोई ठीक नहीं। उस वक्त अगर बगल के कमरे से कोई उसे पुकारे और तुरत उत्तर न मिले तो नशे का सारा क्रोध हरिपद पर प्रकट होता है। कभी-कभी तो गाली-गुफ्ता भी शुरू हो जाता है।

दरअसल हरिपद एक इन्सान नहीं है। वह एक पेड़ या पत्थर है। मुमकिन है कि वह भी नहीं है। रहा वेतन का प्रश्न ?

वेतन की चर्चा करना ही बेकार है। वेतन किस बात का ? अब तक तो फुटपाथ पर रहता था। वहाँ से उठाकर हमने अपने यहाँ आश्रय दिया है। सोने की जगह दी है, भरपेट भोजन दे रहा हूँ, तिस पर वेतन चाहिए ? बड़ा आया है नवाब कहीं का।

अक्सर ऐसा भी हुआ है कि सारा गोश्त लोग चट कर गये। जितने पराठे बने, सब खा गये। अब हाँड़ी में एक रत्ती कुछ बचा नहीं। उस वक्त हरिपद के बारे में किसीको ध्यान नहीं आता। आखिर हरिपद क्या खायेगा, इस सवाल का कौन जवाब देगा ?

उस वक्त दो-तीन गिलास पानी पीकर वह चुपचाप सो जाता है। इसके अलावा वह कर भी क्या सकता है ? नींद आये, चाहे न आये, पर उसे सो जाना पड़ता है। फिर भी उसे नींद नहीं आती। नींद न आने पर जो होता है वही होने लगता है।

जया माँ की आवाज दादा बाबू के कमरे से बाहर सुनाई देती है।

दादा बाबू के गले की आवाज जरा मोटी है। दादा बाबू उसी आवाज में कहते हैं—"वे लोग आते हैं, आयेंगे।"

जया माँ की आवाज महीन होती है। जया माँ कहती हैं—"क्यों आयेंगे ? वे लोग क्यों नहीं दूसरे किसीके घर जाते ?"

दादा बाबू कहते—"जब मेरा मकान है तब वे लोग दूसरे के यहाँ क्यों जायेंगे ?"

जया माँ कहतीं—"फिर तुम सिर्फ क्यों उन लोगों को खिलाओगे ? वे लोग क्या एक दिन तुम्हें खिला नहीं सकते ?"

दादा बाबू कहते—"वे लोग मुझे क्यों खिलायेंगे ? मुझे खिलाने की उन्हें कौन-सी गरज पड़ी है ? मैं तो उनके यूनियन का लीडर हूँ। मैं लीडर हूँ और वे लोग हैं मेरे कैडर। उनकी बदौलत मैं, तुम, हरिपद सभी लोग खा-पी रहे हैं।"

जया माँ कहतीं—"तुम अल्ला-बल्ला खाते हो, ठीक है, खाओ।

मगर मुझे खाने-पीने को क्यों कहते हो ? यह जहर तुम्हारी वजह से कब तक पीती रहूँगी ?"

दादा बाबू कहते—"जहर ? ह्विस्की को जहर कह रही हो ?"

जया माँ कहतीं—"जहर नहीं कहूँगी तो और क्या कहूँगी ? अमृत ? अमृत कहूँ ?"

दादा बाबू नशे की तैश में हँस पड़ते। बाद में कहते—"सारी दुनिया जिसे अमृत समझती है, तुम उसे जहर कहती हो ? जानती हो, अंग्रेज शराब को 'तरल-स्वर्ण' कहते हैं। 'लिक्विड गोल्ड।' अगर शराब जहर होती तो सरकार उसे बेचने के लिए लाइसेंस न देती। जानती हो, शराब बेचकर संसार में न जाने कितने लोग करोड़पति हो गये हैं।"

जया माँ कहतीं—"होने दो करोड़पति। मैं ऐसे करोड़पतियों के मुँह पर थूकती हूँ।"

दादा बाबू कहते—"लगता है, आज तुम फिर शराब के नशे में आकर आँय-बाँय बकने लगी हो।"

जया माँ कहतीं—"नशे के लिए ही तो तुम लोग शराब पीते हो। मुझे शराब पिलाकर अब दोष दे रहे हो। कह रहे हो कि मतवाली हो गयी हूँ। शराब पिलाते समय इस बात का ख्याल नहीं रहता ? उस वक्त मुझे जबरन क्यों शराब पिलाते हो ?"

दादा बाबू कहते—"हम शराब पीते हैं मौज लेने के लिए। मतवाला होने के लिए नहीं।"

जया माँ कहतीं—"इसमें मेरी कौन-सी गलती है ? भला मैं क्या कर सकती हूँ ? शराब पीते ही मुझे नशा आ जाता है।"

दादा बाबू कहते—"इसीलिए लोग शराब पीते हैं। अगर सर न चकराये, पैर न लड़खड़ाये तो शराब पीने से क्या फायदा ?"

जया माँ कहतीं—"तुम लोगों की जो इच्छा है, करो। दया करके मुझे यह सब पीने को मत कहना।"

दादा बाबू कहते—"नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। एक साथ रहकर अलग-अलग रहना ठीक नहीं। वे लोग मेरे यहाँ आते हैं, तुम मेरी पत्नी हो और तुम अगर व्रत रखोगी तो उनका अपमान होगा। इतना तो समझना चाहिए।"

इस तरह की बातचीत इन दोनों में देर तक होती है। ह[illegible]

मित्र-मंडली की यह मजलिस कब समाप्त होगी, इसका कोई ठीक नहीं। उस वक्त अगर बगल के कमरे से कोई उसे पुकारे और तुरत उत्तर न मिले तो नशे का सारा क्रोध हरिपद पर प्रकट होता है। कभी-कभी तो गाली-गुफ्ता भी शुरू हो जाता है।

दरअसल हरिपद एक इन्सान नहीं है। वह एक पेड़ या पत्थर है। मुमकिन है कि वह भी नहीं है। रहा वेतन का प्रश्न ?

वेतन की चर्चा करना ही बेकार है। वेतन किस बात का ? अब तक तो फुटपाथ पर रहता था। वहाँ से उठाकर हमने अपने यहाँ आश्रय दिया है। सोने की जगह दी है, भरपेट भोजन दे रहा हूँ, तिस पर वेतन चाहिए ? बड़ा आया है नवाब कहीं का।

अक्सर ऐसा भी हुआ है कि सारा गोश्त लोग चट कर गये। जितने पराठे बने, सब खा गये। अब हाँड़ी में एक रत्ती कुछ बचा नहीं। उस वक्त हरिपद के बारे में किसीको ध्यान नहीं आता। आखिर हरिपद क्या खायेगा, इस सवाल का कौन जवाब देगा ?

उस वक्त दो-तीन गिलास पानी पीकर वह चुपचाप सो जाता है। इसके अलावा वह कर भी क्या सकता है ? नींद आये, चाहे न आये, पर उसे सो जाना पड़ता है। फिर भी उसे नींद नहीं आती। नींद न आने पर जो होता है वही होने लगता है।

जया माँ की आवाज दादा बाबू के कमरे से बाहर सुनाई देती है।

दादा बाबू के गले की आवाज जरा मोटी है। दादा बाबू उसी आवाज में कहते हैं—"वे लोग आते हैं, आयेंगे।"

जया माँ की आवाज महीन होती है। जया माँ कहती हैं—"क्यों आयेंगे ? वे लोग क्यों नहीं दूसरे किसीके घर जाते ?"

दादा बाबू कहते—"जब मेरा मकान है तब वे लोग दूसरे के यहाँ क्यों जायेंगे ?"

जया माँ कहतीं—"फिर तुम सिर्फ क्यों उन लोगों को खिलाओगे ? वे लोग क्या एक दिन तुम्हें खिला नहीं सकते ?"

दादा बाबू कहते—"वे लोग मुझे क्यों खिलायेंगे ? मुझे खिलाने की उन्हें कौन-सी गरज पड़ी है ? मैं तो उनके यूनियन का लीडर हूँ। मैं लीडर हूँ और वे लोग हैं मेरे कैडर। उनकी बदौलत मैं, तुम, हरिपद सभी लोग खा-पी रहे हैं।"

जया माँ कहतीं—"तुम अन्धा-धुन्ध खाते हो, ठीक है, खाओ।

मगर मुझे खाने-पीने को क्यों कहते हो ? यह जहर तुम्हारी वजह से कब तक पीती रहूँगी ?"

दादा बाबू कहते—"जहर ? ह्विस्की को जहर कह रही हो ?"

जया माँ कहतीं—"जहर नहीं कहूँगी तो और क्या कहूँगी ? अमृत ? अमृत कहूँ ?"

दादा बाबू नशे की तैश में हँस पड़ते। बाद में कहते—"सारी दुनिया जिसे अमृत समझती है, तुम उसे जहर कहती हो ? जानती हो, अंग्रेज शराब को 'तरल-स्वर्ण' कहते हैं। 'लिक्विड गोल्ड।' अगर शराब जहर होती तो सरकार उसे बेचने के लिए लाइसेंस न देती। जानती हो, शराब बेचकर संसार में न जाने कितने लोग करोड़पति हो गये हैं।"

जया माँ कहतीं—"होने दो करोड़पति। मैं ऐसे करोड़पतियों के मुँह पर थूकती हूँ।"

दादा बाबू कहते—"लगता है, आज तुम फिर शराब के नशे में आकर आंय-बांय बकने लगी हो।"

जया माँ कहतीं—"नशे के लिए ही तो तुम लोग शराब पीते हो। मुझे शराब पिलाकर अब दोष दे रहे हो। कह रहे हो कि मतवाली हो गयी हूँ। शराब पिलाते समय इस बात का ख्याल नहीं रहता ? उस वक्त मुझे जबरन क्यों शराब पिलाते हो ?"

दादा बाबू कहते—"हम शराब पीते हैं मौज लेने के लिए। मतवाला होने के लिए नहीं।"

जया माँ कहतीं—"इसमें मेरी कौन-सी गलती है ? भला मैं क्या कर सकती हूँ ? शराब पीते ही मुझे नशा आ जाता है।"

दादा बाबू कहते—"इसीलिए लोग शराब पीते हैं। अगर सर न चकराये, पैर न लड़खड़ाये तो शराब पीने से क्या फायदा ?"

जया माँ कहतीं—"तुम लोगों की जो इच्छा है, करो। दया करके मुझे यह सब पीने को मत कहना।"

दादा बाबू कहते—"नहीं, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। एक साथ रहकर अलग-अलग रहना ठीक नहीं। वे लोग मेरे यहाँ आते हैं, तुम मेरी पत्नी हो और तुम अगर व्रत रखोगी तो उनका अपमान होगा। इतना तो समझना चाहिए।"

इस तरह की बातचीत इन दोनों में देर तक होती है। हरिपद को

यह सारी बातें सुनने में समय गुजर जाता है। कुछ देर बाद उसकी आँखों में नींद उतर आती है। बाद में जब उसकी नींद खुलती है तब सवेरा हो जाता है। दादा बाबू अपने कमरे में उस वक्त खर्राटे भरते रहते हैं।

हरिपद सवेरे सोकर उठते ही देखता कि जया माँ नहा-धोकर काली-मंदिर चली गयी हैं।

उनके वापस आने पर देखता—ललाट पर सिन्दूर का टीका लगा है। इस वक्त की जया माँ में परिवर्तन हो जाता है। वे पहलेवाली महिला नहीं रहतीं। उस वक्त हरिपद से चाय की प्याली लेकर बगल के कमरे में जाकर आवाज लगाती–"अजी सुनते हैं, चाय ले आयी हूँ। उठिये भी।"

इस पुकार पर दादा बाबू आँखें खोलकर देखने लगते। किसी प्रकार उठकर प्याली में मुँह लगाते। लगता, जैसे जी में जी आ गया।

इस वक्त उन्हें चाहिए सिगरेट। अगर सिगरेट नहीं है तो जया माँ से कहकर खरीदने जायगा। सिगरेट खरीदने की जिम्मेदारी हरि-पद की है।

कभी-कभी जया माँ नाराज हो जाती हैं। कहती हैं—"इतना सिगरेट क्यों पीते हो? अधिक सिगरेट पीने से स्वास्थ्य खराब हो जाता है। क्या यह ठीक है?"

दादा बाबू कहते—"सिगरेट पीना अच्छा है या बुरा, इस बारे में तुम्हारा लेक्चर नहीं सुनना चाहता। मुझे तो इस वक्त सिगरेट चाहिए।"

इसी प्रकार जया माँ के यहाँ हरिपद के दिन गुजर रहे थे। जिस दिन जया माँ के साथ इस मकान में हरिपद आया, उसके बाद फिर किसी दूसरे मकान में नौकरी करने नहीं गया। न जाने कितने लोगों ने उसे फुसलाया, कितने लोगों ने अपने यहाँ काम करने के लिए बह-काया। अधिक तनख्वाह देने का लालच दिया, फिर भी हरिपद यहाँ की नौकरी छोड़कर अन्यत्र नहीं गया और न यहाँ कभी वेतन की माँग की।

हरिपद के इस चरित्र की व्याख्या मैं आज तक नहीं समझ सका। आखिर वह वेतन क्यों नहीं लेता, इसमें क्या रहस्य है, लाख कोशिश करने पर कुछ समझ नहीं सका।

हरिपद की जबानी उनकी कहानी सुनते समय मैं इन्हीं बातों को सोच रहा था। इसके बाद एकाएक मैं पूछ बैठा—"मैंने तुमसे यह सवाल किया था कि तुमने अपना पता क्यों बदला ? मेरे इस प्रश्न का जवाब देने के बदले तुम न जाने कहां के सरोज बाबू और उनकी पत्नी जया का पचड़ा ले बैठे। उनकी कहानी सुनने से मेरा क्या लाभ होगा ? यह सब बेकार की बातें रहने दो।"

हरिपद ने कहा—"आपमें यही ऐब है, सर। इसीलिए इतनी पुस्तकें लिखने के बावजूद आप एक भी प्राइज प्राप्त नहीं कर सके। दूसरे थर्ड क्लास के लेखक आजकल तरह-तरह के पुरस्कार प्राप्त कर चुके हैं जबकि आजकल अनेक प्रकार के प्राइज दिये जा रहे हैं।"

मैंने कहा—"बेकार की बातें रहने दो। पहले यह बताओ कि तुमने अपना डेरा क्यों बदल लिया ?"

हरिपद ने कहा—"आपमें यही एक कमजोरी है। अगर इतनी जल्दी कहानी समाप्त हो जाती तो चिन्ता किस बात की ? तब तो हर कोई लेखक बन सकता है। सांप पकड़ने का तरीका जानते हैं न ?"

स्वीकार करना पड़ा कि सांप पकड़ने का तरीका नहीं जानता।

हरिपद ने कहा—"सांप पकड़ते समय अगर कोई उसकी पूंछ पकड़ना चाहे तो वह पकड़ में नहीं आता। भले ही वह दो टुकड़ा हो जाय, फिर भी वह पकड़ में नहीं आयेगा। पहले उसके मुंह को पकड़ना पड़ता है। यही है सांप पकड़ने की असली तरकीब। कहानी सुनाते समय मैं इसी तरकीब को काम में लाता हूं, इसीलिए लेखक-मंडली में मेरी पूछ अधिक होती है।"

हरिपद कहानी सुनाते समय बेकार बातें काफी करता है, फिर भी मैं उसकी हरकतों को सहन करता हूं, क्योंकि उसकी कहानी के अंत में कुछ न कुछ तथ्य रहता है। कोई कहानी जल्दी समाप्त नहीं कर पाता।

हरिपद ने पुनः कहानी शुरू की। उसने कहा—"मैंने अपना पता क्यों बदला, उसका कारण ठीक समय पर बताऊंगा। न तो एक मिनट आगे बताऊंगा और न एक मिनट पीछे।"

कहते हैं—दुधारू गाय की लात खानी ही पड़ती है। मुझे भी खानी पड़ी। इसके अलावा और कोई उपाय नहीं था।

दो-चार दिन के भीतर ही जया माँ की गृहस्थी के सारे चित्र उसकी नजरों के सामने स्पष्ट हो गए। उसने देखा कि इस गृहस्थी के असली मालिक दादा बाबू हैं। और जया माँ ? दादा बाबू की कृपा के कारण ही जया माँ यहाँ रह पा रही हैं। यही वजह है कि दादा बाबू के प्रत्येक आदेश का पालन इन्हें आँख-मुँह बन्द करके करना पड़ता है।

किसी-किसी दिन काफी तायदाद में अपने दोस्तों को लेकर दादा बाबू आते हैं। आते ही आदेश देंगे—"गोश्त बनाओ, पुलाव बनाओ।" बाजार से सोडा ले आना पड़ेगा, सिगरेट खरीदना पड़ेगा हरिपद को। इसके बाद जया माँ की बुलाहट होगी। बुलाने के बाद अगर तुरत उनके कमरे में जया माँ नहीं जायेंगी तो इधर आकर दादा बाबू बिगड़ने लगेंगे।

कहेंगे—"कई बार तुम्हें आवाज दी, क्या सुनाई नहीं दी ? बहरी हो गयी हो क्या ?"

जया माँ कहेंगी—"अगर मैं उस कमरे में जाऊँगी तो यह सब जंजाल कौन पकायेगा ?"

दादा बाबू कहते—"क्यों ? हरिपद किसलिए है ? वह करता क्या है ? दिनभर सिर्फ सोता रहेगा ?"

जया माँ कहती हैं—"क्या वह काम नहीं करता ?"

दादा कहते हैं—"क्या करता है ? बाजार से सारा सामान तुम खरीद लाती हो, रसोई तुम बनाती हो। वह तो सिर्फ खाता है और टाँग पसारकर सोता है। आखिर उसे क्यों रखा है ? भगा दो।"

जया माँ कहतीं—"क्या कह रहे हो ? क्या वह काम नहीं करता ?"

"क्या करता है, जरा बताओ ?"

"क्या तुम्हारी आँखें नहीं है ? वह क्या-क्या करता है, देखते नहीं ? घर में झाड़ू लगाना, बासन माँजना, कपड़े कचारना, सारा काम तो वही करता है।"

दादा बाबू कहते—"यह सब भी क्या कोई काम है ? यह सब तो मैं भी कर सकता हूँ। वह सिर्फ खाता है और ठाठ से सोता है। चलो, उठो, उस कमरे में चलो।"

जया माँ कहती हैं—"उस दिन तुम्हारे कमरे में गयी थी। फिर आज क्यों ?"

दादा बाबू कहते—"एक दिन जाने के बाद क्या दूसरे दिन नहीं जाना चाहिए ?"

जया माँ कहतीं—"वहाँ जाने पर वे लोग फिर कबाड़ा चीज पिलायेंगे। वह सब पीना मुझे अच्छा नहीं लगता। उन चीजों को पीने-खाने के बाद मेरी तवीयत खराब हो जाती है।"

दादा बाबू कहते—"यह सब कहने से काम नहीं चलेगा। मैं इन लोगों का लीडर हूँ। अगर मैं इनकी बातें नहीं मानूँगा तो ये लोग मेरी बात क्यों मानेंगे ? हम जो कुछ खाते हैं, तुम जो साड़ी-ब्लाउज, साया पहनती हो, यह सब इनकी बदौलत प्राप्त होती हैं। अगर तुम्हारे पीने पर वे खुश होते हैं तो हर्ज क्या है ?"

जया माँ कहतीं—"वह सब मुझे अच्छा नहीं लगता।"

दादा कहते—"देखो, यह सब बेकार की बकवाद मुझे पसन्द नहीं। तुम्हें उस कमरे में जाना पड़ेगा और अच्छा न लगने पर भी तुम्हें पीना-खाना पड़ेगा।"

अव जया माँ कहती हैं—"ठीक है, चल रही हूँ। जब इतना कह रहे हो तो तुम्हारी बात मान लेती हूँ, पर मुझे अधिक पीने के लिए मजबूर मत करना।"

दादा बाबू कहते—"ठीक है, देखा जायगा। चलो, आओ।"

कहने के पश्चात् दादा वाबू चले जाते हैं।

इसके वाद जया माँ अपने कमरे में जाकर अपनी साड़ी बदलती हैं, नया ब्लाउज पहनती हैं। कपड़े पहनने के बाद हरिपद के पास आकर कहती हैं—"प्याज पीसकर कड़ाही में तेल डाल देना, फिर नमक-हल्दी खूब भून लेना, तब मिर्च डालना। बाद में गोश्त डालकर खूब अच्छी तरह भूनना।"

हरिपद को यह सारी बातें मालूम हैं। कहीं हरिपद गलती न कर बैठे, इसलिए तोता पढ़ाने की तरह जया माँ उसे सिखाती हैं।

इतना कहने के बाद वे आगे जाकर पुनः लौट आती हैं और हरिपद के पास आकर कहती हैं—"उस दिन गोश्त में मिर्च कम पड़ने के कारण लोगों ने खाया नहीं। आज कम न होने पाये। इसका ख्याल रखना।"

हरिपद को समझते देर नहीं लगती कि जया माँ अपनी इ
शराब नहीं पीतीं। दादा बाबू के अनुरोध पर जितना पीना आ

है, उतना पीती थीं। जया माँ कर भी क्या सकती थीं ? दादा बाबू आफिस यूनियन के प्रेसिडेण्ट हैं। दादा बाबू यूनियन के प्रेसिडेण्ट बने रहें, इसके लिए जया माँ को कुछ त्याग करना ही पड़ेगा।

दूसरे दिन सवेरे पहले की तरह जया माँ पुनः बदल जातीं। उस समय भोर में स्नान करने के बाद काली-मंदिर में जाकर पूजा कर आतीं। उनके ललाट पर सिन्दूर का बड़ा टीका लगा रहता। इस वक्त की जया माँ को देखकर कौन कह सकता है कि पिछली रात को यही महिला शराब पीकर झूम रही थीं और नशे में बकझक रही थीं।

कभी-कभी दादा बाबू बिना कुछ खाये आफिस चले जाते थे। वहाँ से फिर कब लौटेंगे, इसका कोई निश्चय नहीं था। शाम के वक्त वे स्वाभाविक मनुष्य रहते हैं। संपूर्ण रूप से स्वाभाविक। यूनियन की ओर से दादा बाबू को भिन्न-भिन्न स्थानों में जाकर मीटिंग करनी पड़ती है। दादा बाबू को ले जाने के लिए अक्सर पार्टी की गाड़ी आती है। रात को पुनः उसी गाड़ी से वापस आते हैं।

हरिपद पूछता—"दादा बाबू आज कब तक लौटेंगे, जया माँ ?"

"आज चुनाव होनेवाला है। लौटने में देर होगी।"

ठीक इन्हीं दिनों दोपहर के समय एक दिन एक गाड़ी सदर दरवाजे के सामने आकर रुक गयी। उस गाड़ी से एक वृद्धा उतरकर दरवाजे की साँकल पीटने लगी।

"कौन है ?"

ऐसे वक्त में आम तौर पर इस घर में कोई नहीं आता। इस समय जया माँ अपने कमरे में विश्राम कर रही थीं।

हरिपद ने दरवाजा खोलकर देखा—एक वृद्धा है। बिलकुल अपरिचित। आज के पहले इन्हें कभी नहीं देखा था।

महिला बिना कोई बात किये घर के भीतर आ गयी।

हरिपद ने पूछा—"आप कौन हैं ? किसे चाहती हैं ?"

इस प्रश्न का जवाब न देकर महिला बोली—"तू कौन है ?"

हरिपद ने कहा—"मैं ? मेरा नाम हरिपद है।"

उसकी बात पर बिना ध्यान दिये वह महिला सीधे कमरे के भीतर चली गयी। जिस गाड़ी पर वे आयी थीं, वह गाड़ी वापस चली गयी।

वह महिला जया माँ के कमरे के भीतर जाकर बोली—"क्यों री, जया ! सो रही है ?"

जया माँ हड़बड़ाकर उठ बैठी। बोली—"माँ, तुम ? कब आयीं ? दरवाजा किसने खोला ?"

इस प्रश्न का जवाब न देकर महिला ने पूछा—"बाहर एक लड़के को देखा। कौन है वह ?"

जया माँ ने कहा—"वह हम लोगों का नौकर है। हरिपद।"

"कहाँ मिल गया यह तुझे ?"

जया माँ ने कहा—"एक दिन बाजार से आ रही थी, फुटपाथ पर मिल गया। मैंने इससे पूछा कि घर का काम करोगे ? यह राजी हो गया और इसे घर ले आयी। तभी से मेरे यहाँ है।"

महिला ने कहा—"जान न पहचान, ऐसे लड़के को ले आयी। अगर कहीं चोरी करके भाग गया तो क्या करोगी ?"

जया माँ ने कहा—"थाने में इसका नाम-धाम सारा हुलिया लिखवा आयी हूँ। उन लोगों ने उँगलियों के निशान रख लिये हैं।"

"तब तो ठीक है। आजकल घरेलू नौकरों की काफी दिक्कत है। ऐसे मौके पर तुझे यह लड़का मिल गया, अच्छा हुआ। महीने में कितना देना पड़ता है ?"

जया माँ ने कहा—"तनख्वाह नहीं लेता। यों ही है।"

महिला ने कहा—"तब तो बड़ी अच्छी बात है। आजकल के जमाने में कामकाजी आदमी पाना भाग्य की बात है। देख, कितने दिनों तक रहता है। भरोसेवाले नौकरों को लोग बहकाते हैं। आखिर रुपये का लालच कोई कैसे छोड़ सकता है ?"

माँ-बेटी की सारी बातें बाहर बैठा हरिपद सुन रहा था।

थोड़ी देर बाद माँ ने पूछा—"सरोज आजकल क्या कर रहा है ?"

जया माँ ने कहा—"करेगा क्या, पहले जो करता था, वही कर रहा है।"

"और शराब ? क्या अभी भी पीता है ?"

जया माँ ने कहा—"हाँ, नशा भला कोई छोड़ सकता है ?"

"और तू ? क्या अभी तक जबरन तुझे पिलाता है ?"

जया माँ ने कहा—"हाँ।"

"तू क्यों पीती है ? बन्द कर दे।"

"बन्द करने से वह भला मानेगा ? मुझे जबरदस्ती पिलायेगा। न पीने पर कहेगा—मैं इन लोगों की पार्टी का लीडर हूँ। अगर तुम नहीं

। तो मुझे ये लोग लीडर नहीं वनायेंगे । मेरे भविष्य के वार मे
हुए जरा-सा मुँह लगाओ, वर्ना मेरी नौकरी छूट जायगी । जरा-
यो, इससे अछूत नहीं वन जाओगी ।"
हरिपद इन सारी वातों को ध्यान से सुनता और मन ही मन
त हो जाता । हरिपद राह का कंगाल है, अर्थात् खानदानी गरीव
ने का आदमी । उसके विचार से वड़े लोग उससे अधिक सुखी
ते हैं । वड़े लोगों के लिए कोई समस्या नहीं होती । लेकिन इस घ
आश्रय लेने के वाद से अव उसकी धारणा वदल गयी है । इनसे
च्छे तो वे हैं जो फुटपाथ पर सोते हैं । दरअसल फुटपाथ पर रहने-
वालों के लिए कोई समस्या ही नहीं है ।

माँ ने पूछा—"थियेटर में अव भी काम करती है ?"

जया माँ ने कहा—"हाँ, करना पड़ता है । तुम्हारा दामाद पिण्ड
नहीं छोड़ता । दरअसल नाटक करने पर काफी पैसे मिलते हैं । एक
वार स्टेज पर उतरने से २५०-३०० रुपये मिलते हैं ।"

"रुपये अपने पास रखती है या सरोज ले लेता है ?"

जया माँ ने कहा—"मैं अपने पास रुपये रखूँगी ? तव तो हो
चुका । अपने दामाद को अभी तक तुम पहचान नहीं सकी ? तुम्हें इस
कलकत्ता में और कोई दामाद नहीं मिला ? शायद इसीलिए इसके
साथ गेरा विवाह किया ।"

माँ ने कहा—"अव मैं क्या कहूँ, यह तो तेरा भाग्य है ।"

जया माँ ने कहा—"तेरा भाग्य कहकर टालने से होता क्या है ?
आखिर ऐसे व्यक्ति से मेरा विवाह क्यों कराया ?"

माँ ने कहा—"मैं तो औरत हूँ । घर के भीतर रहती हूँ । मैं इ
वारे में क्या समझ पाती ? सारा दोप तो तेरे छोटे भैया का है
सुवीर ही तो वार-वार सरोज के साथ विवाह करने के लिए
करता रहा ।"

भीतरवाले छोटे रसोईघर में चाय वनाते समय सारी वातें
पद सुन रहा था । उस यह सव सुनकर आश्चर्य हो रहा था कि
घरों में ऐसी घटनाएँ होती हैं ।

जया माँ अपने कमरे से वाहर आकर वोलीं—"अरे, ह
नानीजी के लिए एक कप चाय वना दे ।"

हरिपद ने कहा—"चाय का पानी चढ़ा चुका हूँ ।"
हीटर पर चाय का पानी गरम हो रहा है, देखकर जया

हो उठीं। भीतर जाकर अपनी माँ से कहने लगीं—"जानती हो माँ, मेरा हरिपद बहुत बुद्धिमान् है। तुम्हें देखकर चाय वनाने लगा है।"

माँ ने कहा—"मुझे भी एक ऐसा नौकर ठीक कर दे। इसका कोई भाई-वहन नहीं है ?"

जया माँ ने कहा—"छोटी भाभी का स्वभाव ऐसा है कि वहाँ कोई भी नौकर रह नहीं सकता।"

माँ ने कहा—"सिर्फ छोटी वहू का दोष क्यों देखती हो ? क्या मेरा सुवीर अच्छा लड़का है ?"

जया माँ ने कहा—"छोटे भैया की वजह से ही तो मेरा विवाह यहाँ हुआ। मैं वी० ए० पास हूँ और छोटे भैया ने एक ऐसे व्यक्ति से विवाह कराया जो मैट्रिक भी नहीं है।"

माँ ने कहा—"सब मेरे भाग्य का दोष है, वेटी। अव मैं क्या कह सकती हूँ ?"

तभी हरिपद चाय लेकर भीतर गया। इस वातचीत के आधे घण्टा वाद मकान के सामने एक गाड़ी आकर हार्न वजाने लगी।

माँ ने कहा—"शायद हमारी गाड़ी आ गयी है। मैं चल रही हूँ।"

कहने के साथ ही माँ चल पड़ी। जया माँ दरवाजे के पास विदा करने के लिए आयीं। गाड़ी पर बैठने के वाद माँ ने लड़की की ओर देखते हुए कहा—"सावधानी से रहना, वेटी। फिर कभी आऊँगी। तेरे वारे में काफी चिन्तित रहती हूँ। इसी चिन्ता में आजकल नींद नहीं आती।"

जब तक गाड़ी आँखों से ओझल नहीं हो गयी तव तक जया माँ दरवाजे के पास खड़ी रही। इसके वाद दरवाजा वन्द कर भीतर चली आयी।

मैंने पूछा—"इसके वाद ?"

कलकत्ता में नाना प्रकार के लोग रहते हैं, नाना प्रकार की गृहस्थियाँ हैं, सभी लोगों के बारे में हर प्रकार की बातों का पता लेखकों के लिए लगाना संभव नहीं होता। यही वजह है कि मैं हरिपद की

सहायता लेता हूँ। हरिपद जैसे लोग अन्दर महल में चले जाते हैं। यह सुविधा हमें प्राप्त नहीं होती। हम लोग अधिक-से-अधिक ड्राइंग रूम तक जा पाते हैं, पर हरिपद जैसे व्यक्तियों की गतिविधि शयन-कक्ष से लेकर रसोईघर तक रहती है।

जया और सरोज के जीवन का जिस प्रकार वर्तमान है, ठीक उसी प्रकार इनका अतीत भी था। इनके जीवन के आनन्द-विषाद, सुख-दुख, प्रेम-विरह, सफलता-असफलता आदि के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए हमें अतीत की ओर जाना पड़ेगा। पूर्ण रूप से उनके जीवन के मूल में, एक प्रकार से जड़ की शाखा-प्रशाखाओं को टटोलना पड़ेगा। तभी हम जान सकेंगे कि कैसे अमलवेत के वृक्ष में ऐसा आम उत्पन्न हुआ या कैसे उस आम में अमलवेत लग गया।

पहले सरोज को लिया जाय।

बचपन से ही यह लापरवाह रहा है। लापरवाह तो अनेक लोग होते हैं। लापरवाही की वजह से कोई व्यक्ति समाज के सिर पर चढ़-कर राजनीति की दुनिया में मंत्री बनता है और कोई हिमालय की गुफा में जाकर तथागत गौतम बुद्ध की तरह संन्यासी बनकर प्रातः-स्मरणीय बन जाता है।

गृहस्थी के जंजालों को दूर कर संन्यासी बनने में अनेक झमेले हैं। उसे संयमी बनना पड़ता है, सत्यवादी होना पड़ता है, मितभाषी होना पड़ता है, निष्काम होना पड़ता है। मंत्री बनने के लिए इन झमेलों से दूर रहने की जरूरत नहीं। अगर कोई व्यक्ति किसी देश का मंत्री बनना चाहे तो वह जितना असंयमी होगा, जितना झूठ बोल सकेगा, जितना अधिक वाचाल होगा, जितना कामुक होगा, उतना ही वह सफल होगा। ऐसा व्यक्ति निश्चित रूप से मंत्री बन सकता है। अगर भाग्य ने साथ दिया तो वह देश का प्रधानमंत्री बन सकता है।

इसी चरम लक्ष्य को सामने रखकर सरोज सरकार ने बचपन से पाठ पढ़ना प्रारंभ किया था। मंत्रियों में जिन गुणों की आवश्यकता होती है, उन सभी गुणों को वह अपनाने की कोशिश करता रहा।

उन गुणों को अपनाने पर जब वह लीडर बन गया तब फिर क्या पूछना। देश में न तो बेकारों की कमी है और न नशेबाजों की। सभी लोगों का एकमात्र लक्ष्य बन गया—मंत्री बनना।

मगर इस पद को कैसे प्राप्त किया जाय? विचार करने पर ज्ञात हुआ कि मंत्री बनने के लिए एक पार्टी बनाना आवश्यक है। हमारे

देश में अनेक पार्टियाँ हैं। इन पार्टियों में जाने पर हमेशा पदातिक वने रहना पड़ेगा, सेनापति बनने का अवसर नहीं मिलेगा। सेनापति वनने के लिए पहला कदम है किसी फैक्टरी में प्रवेश करके यूनियन बनाया जाय। इसके साथ ही यह आवश्यक है कि शराव पीने की प्रैक्टिस करना। प्रत्येक पेशे में शिक्षित बनना अनिवार्य है। शराव पीने पर यूनियन सहज ही वन जाता है। शराव एक ऐसी चीज है जिसके पीने पर पराये शीघ्र अपने हो जाते हैं। अगर यह प्रैक्टिस दीर्घकाल तक जारी रखी जाय तो एक दिन सभी लोग अपने वन जाते हैं। उस समय नशे के कारण या बिना नशे में लोग आपस में गले मिलते हैं। इस प्रक्रिया में मैत्री अनिवार्य हो जाती है।

इसी प्रकार सरोज के मित्रों की संख्या वढ़ती गयी।

ऐसे लोगों ने सरोज को अपना नेता मान लिया। सरोज के आदेश पर वे उठने और उसकी बात पर वैठने लगे। इनमें अधिकतर लोग भिन्न-भिन्न फैक्टरियों में काम करते थे। फैक्टरियों में चलनेवाली माँगों और नारों की चर्चा होती। इसी प्रकार एक दिन एक छोटी फैक्टरी से कुछ लोगों को निकाल दिया गया। इसके साथ ही शुरू हुई हड़ताल। निकाले गये श्रमिकों ने सरोज से निवेदन किया—"गुरु, हमें वचाओ।"

सरोज ने पूछा—"क्या हुआ है ?"

उन लोगों ने सारी बातें समझायीं तव सरोज ने पूछा—"आसामी कौन है ?"

मित्रों ने कहा—"आसामी है साला सुवीर घोष। वही फैक्टरी का मालिक है।"

सुवीर घोष की एक इंजीनियरिंग फैक्टरी है। आज से कई वर्ष पहले इस फैक्टरी की स्थापना हुई थी। इस कलकत्ता में कौन किसका भला चाहता है ? सुवीर की फैक्टरी की वगल में एक और फैक्टरी है। इस फैक्टरी का मालिक एक अर्से से सुवीर की फैक्टरी के पीछे पड़ा था। उसकी फैक्टरी के कर्मचारियों को घूस देकर हड़ताल करवायी थी। इसके वाद ही सुवीर की फैक्टरी में लालबत्ती जल उठी।

ठीक इन्हीं दिनों सुवीर के साथ सरोज सरकार का परिचय हुआ। और यह परिचय हुआ शराव की टेवुल पर। शराब की टेबुल पर परिचय होने पर जो-जो होता है, इस क्षेत्र में भी वही वातें हुईं।

सुवीर ने अपने यहाँ सरोज को भोजन करने के लिए निमंत्रित किया। इसी निमंत्रण में सरोज का परिचय जया से हुआ।

सुवीर ने जया की ओर इशारा करते हुए कहा—"यह मेरी बहन जया है। इसने इस साल कलकत्ता विश्वविद्यालय से बी० ए० पास किया है।"

कहाँ का पानी कहाँ जायगा, इसे कोई भी नहीं बता सकता। इस दिशा में भी वही हुआ। एक ओर मशहूर लेबर-लीडर और दूसरी ओर एक फैक्टरी के मालिक की बी० ए० पास सुन्दरी बहन। सुवीर की स्वार्थ-सिद्धि के लिए इससे अच्छा कौन-सा राजयोग हो सकता था ?

माँ के पास जब यह प्रस्ताव गया तो वे ऊहापोह करने लगीं। लड़का मैट्रिक पास भी नहीं है जबकि उनकी लड़की रूप, गुण और विद्या में राजकुमारी है। क्या इससे अच्छा लड़का नहीं मिल सकता ?

सुवीर ने कहा—"मैट्रिक पास करना ही क्या बड़ी बात है, तुम्हारी दृष्टि में ? तुम्हें यह नहीं मालूम कि इसी कलकत्ता में न जाने कितने मैट्रिक फेल मंत्री हैं। वे लोग कभी सरोज की तरह लेबर-लीडर थे। आजकल उन्हींके अण्डर में न जाने कितने बी० ए०, एम० ए०, डॉक्टर आठ-दस हजार रुपये की नौकरी कर रहे हैं।"

माँ ने पूछा—"क्या यह लड़का कभी मंत्री बनेगा ?"

सुवीर ने पूछा—"क्या कह रही हो ? अगले साल के चुनाव में सरोज सरकार मिनिस्टर बनेगा ही। उस वक्त तुम स्वयं देखोगी कि तुम्हारी बेटी और दामाद हवाई जहाज पर आज इंग्लैण्ड, कल अमेरिका, परसों रूस आदि देशों में चक्कर काट रहे हैं। उस समय तीन-चार सौ रुपयों की नौकरी के लिए न जाने कितने लोग तुम्हारी लड़की की खुशामद करते नजर आयेंगे। यहाँ तक कि लोग तुम्हारी भी खातिरदारी करेंगे। लोग कहेंगे कि आप ही हैं, फलाँ मिनिस्टर की सास। उन दिनों के बारे में एक बार सोचो।"

लड़की का विवाह करना कितनी बड़ी समस्या है, इसे उन लड़कियों की माँ समझती हैं जिनके यहाँ विवाह-योग्य कन्या हैं, खासकर जिन कुमारी लड़कियों के पिता जीवित नहीं हैं। शोभारानी जब विधवा हुई थीं, उस समय उनके दो जवान लड़के और एकमात्र लड़की थी। पति की मौत के बाद शोभारानी की आँखों के आगे अँधेरा छा

गया। उस समय उन्हें इस वात की कल्पना नहीं थी कि आगे चलकर वे इस प्रकार पुनः खड़ी हो सकेंगी।

उन दिनों के वारे में सोचते समय आँखों में पानी भर आता है। वड़ा लड़का सुशील कैसे पढ़-लिखकर वड़ा हुआ इसे वे भूल गयी हैं। आजकल वह अमेरिका में है। विवाह हो गया है, वच्चे भी हैं। वहाँ से नियमित पत्र भेजता है। केवल पत्र ही नहीं भेजता, माँ के हाथ-खर्च के लिए वरावर एक हजार रुपये भेजता है।

पत्र में लिखता है—"माँ, रुपये भेज रहा हूँ। तुम अपनी इच्छानुसार खर्च करना। अगर और जरूरत हो तो विना संकोच मुझे सूचित कर देना। हम लोग यहाँ सकुशल हैं। सुवीर की फैक्टरी कैसी चल रही है? जया का क्या समाचार है? वह तो अव तक काफी वड़ी हो गयी होगी। वी० ए० का इम्तहान कैसा हुआ? वह तो काफी तेज लड़की है। जरूर अच्छे डिविजन में पास हो जायगी। वी० ए० के वाद अगर एम० ए० में वह पढ़ना चाहे तो मुझे सूचित करना। इसके लिए जो खर्च होगा, मैं यहाँ से भेज दूँगा। आशा है, आप लोग सकुशल हैं। मेरा प्रणाम ग्रहण करें।"

आपका
सुशील

सुशील घर का वड़ा लड़का है। पिताजी उसकी उन्नति नहीं देख सके। उनकी किस्मत में यह वात नहीं थी। लेकिन शोभारानी देख रही हैं। शायद आज वे स्वर्ग में वैठ देख रहे होंगे।

सुवीर सुशील की तरह नहीं वन सका। नहीं वन सका तो इसके लिए दुःख करने से क्या लाभ होगा? हाथ की सभी उँगलियाँ वरावर नहीं होतीं।

एक अर्से वाद जया के विवाह की चर्चा चलते ही शोभारानी विचलित हो उठीं। वोलीं—"तेरे पिताजी नहीं रहे, सुशील अमेरिका में है। किससे सलाह करूँ, समझ में नहीं आ रहा है।"

सुवीर ने कहा—"इसमें किसकी सलाह लोगी? लड़का अच्छा है, इस वारे में सारी वातों का पता मैं लगा चुका हूँ।"

माँ ने पूछा—"लड़के के पिता, माता, भाई-बहन आदि कौन-कौन हैं ?"

सुवीर ने कहा—"आजकल के युग में इन सब बातों का पता कौन लगाता है ? असल में आज के युग में सभी स्वार्थी हो गये हैं। कोई किसीकी खबर नहीं लेता। असल में देखना यह चाहिए कि लड़का कैसा है ? इस बारे में मैं तुम्हें गारण्टी दे सकता हूँ। मैं कहे दे रहा हूँ कि अगले साल के चुनाव में तुम्हारा दामाद मिनिस्टर होगा।"

शोभारानी ने कहा—"तेरे बड़े भैया को एक पत्र दिया जाय तो कैसा रहे ?"

सुवीर ने कहा—"उन्हें पत्र लिख सकती हो, पर वे अमेरिका में रहते क्या समझ पायेंगे ? क्या मैं जया का भला नहीं चाहता ?"

कुछ देर रुकने के बाद पुनः उसने कहा—"इसके अलावा मेरी फैक्टरी के बारे में जरा सोचो। सरोज के साथ विवाह कर देने पर मेरी फैक्टरी की रक्षा होगी और जया की एक गति हो जायगी। अगर जीवित रहोगी तो स्वयं ही देखोगी कि जया कितनी सुखी है।"

संक्षेप में सरोज के विवाह का यही इतिहास है।

इसके बाद कई वर्ष बीत गये। न जाने कितनी बार चुनाव हुआ, न जाने कितने लोग मंत्री बने, पर सरोज जो पहले था, वही अब भी है। यही वजह है कि लड़के की गाड़ी लेकर शोभारानी अक्सर सरोज के घर आती हैं और सारी राम-कहानी सुनने के बाद दर्द से उनकी छाती कराह उठती है।

लेकिन अपने जिस मतलब से सुवीर ने जया का विवाह सरोज से कराया था, वह पूरा हो गया था। इस विवाह के बाद सुवीर की फैक्टरी में फिर कभी लाक आउट या क्लोजर नहीं हुआ। यह ठीक है कि इसके बदले सरोज को अक्सर आवश्यकता पड़ने पर कुछ रकम देनी पड़ती थी। लेकिन यह रकम वह अपने काम के लिए नहीं लेता है। पार्टी-फंड के लिए लेता है। इनके यूनियन के जो मजदूर बीमार होते हैं, जो लोग अकारण काम पर से निकाल दिये जाते हैं, जो लोग हड़ताल के दौरान बिना तनख्वाह के लम्बे अर्से तक बेकार रहने को मजबूर होते हैं, ऐसे लोगों की मदद सरोज करता है। विभिन्न कम्पनियों के मालिकों से इसके लिए चन्दा लेता है।

सुवीर इसी दृष्टि से सरोज को हजार-हजार रुपये चन्दा देता आया है। इससे दोनों लोगों को लाभ हुआ है। एक ओर सरोज के

यूनियन की सदस्य-संख्या में वृद्धि हुई है और दूसरी ओर सुवीर जैसे छोटे फैक्टरी-मालिकों को भिन्न-भिन्न लाभ हुए हैं। कम-से-कम लेवर-ट्रबुल के झमेले से उन्हें कुछ दिनों के लिए मुक्ति मिल जाती है।

हरिपद को चुप होते देख, मैं कहता—"इसके वाद ?"

हरिपद ने कहा—"यह वहुत वड़ी कहानी है, सर। आज समाप्त नहीं होगी। फिर किसी दिन आकर सुनाऊँगा। आज आज्ञा दीजिए—काफी वक्त गुजर गया।"

मैंने कहा—"यही तुममें सवसे वड़ा दोष है, हरिपद। एक कहानी को एक दिन में समाप्त नहीं करते। इसके पीछे काफी दिन लगा देते हो।"

हरिपद ने कहा—"सर, यह मेरे जीवन की कहानी है। इस कहानी को इसके पूर्व अन्य किसीको नहीं सुनाया। शिवशंकर बाबू ने मेरे यहाँ कई लोगों को भेजा था, पर मैं उनके यहाँ नहीं गया।"

"क्यों? गये क्यों नहीं?"

हरिपद ने कहा—"आजकल मेरे पास समय का वड़ा अभाव है। कल ही मुझे कलकत्ता के वाहर जाना पड़ेगा।"

"कलकत्ता के वाहर? आखिर कहाँ जाओगे?"

हरिपद ने कहा—"आपको वताने से क्या लाभ? आप लोग ठहरे वड़े आदमी, ग़रीबों का दुःख आप लोग नहीं समझ सकते। हम लोगों के मत्थे कितनी झंझटें रहती हैं, इसे वताने पर भी आप लोग नहीं समझ पायेंगे।"

हरिपद की वातचीत का ढंग इसी प्रकार का होता है। सभी मनुष्यों का स्वभाव एक-सा नहीं होता। जैसे सभी मनुष्यों की आकृतियाँ एक-सी नहीं होतीं, ठीक उसी प्रकार की बात है। हरिपद की वातों में जैसे कोई न कोई रहस्य रहता है। फलस्वरूप उसकी कहानी सुनने पर आखिर तक सुनने की इच्छा वनी रहती है।

एकाएक हरिपद ने खड़े होकर कहा—"सर, वीस रुपये देने की कृपा करें।"

मैं अवाक् रह गया। कहानी समाप्त करने के पहले रुपये माँगना

मैं पसन्द नहीं करता। जैसे रचना प्रकाशित होने के पहले पारिश्रमिक माँगना। यह खराब आदत है।

अपनी गरज पर सब करना पड़ता है। बिना चीं-चपड़ किये मैंने बीस रुपये दे दिये। हरिपद उसे जेब में डालकर चला गया। उसका नया डेरा कहाँ है, इस बारे में उसने कुछ नहीं कहा।

इसके बाद मेरी मानसिक स्थिति अकल्पनीय हो गयी। काफी माथापच्ची करने के बावजूद मैं जया और सरोज सरकार के जीवन के वास्तविक चित्र की कल्पना नहीं कर पाया। पति एक लेबर-लीडर है। अपनी पार्टी का मालिक बराबर बने रहने के लिए वह अपनी पत्नी को शराब पीने के लिए अनुनय-विनय करता है, आखिर इस कहानी का अन्त किस ढंग से होगा, इसका कोई ओर-छोर समझ में नहीं आ सका। मैंने अपना उपन्यास 'साहब, बीबी, गुलाम' इसी आधार पर लिखा है। लेकिन वह पुराने जमाने की कहानी है। इस युग में वह कहानी एक ही मार्ग पर अग्रसर नहीं हो सकती। वर्तमान युग में अनेक संभ्रांत घर की महिलाओं को शराब पीते मैंने देखा है। आजकल इसे बुरा नहीं समझा जाता। अब तो इसे एक प्रकार का स्टाइल या प्रेस्टिज समझा जाता है। यहाँ तक कि अब शराब आभिजात्य का प्रतीक बन गया है।

बहरलाल, अब क्या करता। निरुपाय होकर हरिपद के आने की प्रतीक्षा करने लगा। तीन-चार दिन बाद पुनः एक दिन हरिपद आ टपका। उसे आया देख, प्रसन्न हो उठा।

उससे पूछा—"कहो, कहाँ चले गये थे ?"

हरिपद ने कहा—"राँची।"

"राँची ? इतनी जगह रहते राँची क्यों चले गये ?"

हरिपद इस प्रश्न को टाल गया। कहा—"कभी फुरसत से इस बारे में बताऊँगा। शायद मुझे अभी कई बार राँची जाना पड़ेगा।"

मैं सोचने लगा कि शायद हरिपद का कोई रिश्तेदार राँची रहता हो। संभव है कि पागलखाने में कोई हो ?

बिना छेड़छाड़ किये मैंने हरिपद से पूछा—"अब तो बताओ कि तुमने अपना डेरा क्यों बदल डाला ?"

हरिपद ने कहा—"इस वात को कहने के लिए मुझे आगे की कहानी वतलानी होगी।"

मैंने कहा—"ठीक है, वही वताओ।"

जया माँ और सरोज सरकार के विवाह के दूसरे दिन ही एक विचित्र तमाशा सुवीर की फैक्टरी में हुआ। जितने श्रमिक हड़ताल पर थे, वे लोग चुपचाप वापस आकर काम पर लग गये। इसके वाद वहाँ कोई उपद्रव नहीं हुआ। यह प्रभाव सरोज सरकार का था। इतने दिनों वाद सुवीर के चेहरे पर मुस्कान अठखेलियाँ करने लगी। लेकिन शोभारानी प्रसन्न नहीं हुई। सुवीर की फैक्टरी पुनः चालू हो गयी, यह अच्छी वात है। लेकिन इसकी कीमत जया को चुकानी पड़ी।

एक दिन शोभारानी लड़की के घर आयी। देखा कि वह चुपचाप रो रही है। माँ अवाक् रह गयी।

वोली—"क्यों री जया, रो क्यों रही है ?"

जया कहना नहीं चाहती थी, पर वार-वार प्रश्न करने पर वोली—"माँ, तुमने किसके पल्ले मुझे वाँध दिया ? समझ में नहीं आता तुम्हारा दामाद किस प्रकृति का है ?"

"क्यों ? क्या हुआ ? दामाद ने कुछ कहा है क्या ? आखिर रो क्यों रही हो ?"

जया ने कहा—"अक्सर तुम्हारा दामाद किसी व्यक्ति को अपने साथ शाम को ले आता है। उसे खिलाना पड़ता है, उसकी खातिर करनी पड़ती है। इसके वाद 'जरूरी काम हैं' कहकर उस व्यक्ति को वैठाकर तुम्हारा दामाद गायव हो जाता है। आधी रात के वाद वापस आता है।"

माँ ने पूछा—"इसके वाद ? क्या वह आदमी तेरे कमरे में रह जाता है ?"

जया ने कहा—"हाँ। वाद में मुझसे लिपटने लगता है।"

"अरे, यह कैसी वात ? दामाद से इस वारे में क्यों नहीं शिकायत करती ?"

जया ने कहा—"कह चुकी हूँ। कई वार कह चुकी हूँ।" उल्टे सुनना पड़ता है—"इससे क्या हुआ ? अगर कोई छू लेता है तो उससे तुम्हारे तन पर फफोले तो नहीं पड़ जाते ?"

माँ ने कहा—"हाय भगवान्, यह सव क्या सुना रही हो ? इस तरह की वात तो किसी जन्म में भी नहीं सुनी थी।"

मैं पसन्द नहीं करता। जैसे रचना प्रकाशित होने के पहले पारिश्रमिक माँगना। यह खराब आदत है।

अपनी गरज पर सब करना पड़ता है। बिना चीं-चपड़ किये मैंने बीस रुपये दे दिये। हरिपद उसे जेब में डालकर चला गया। उसका नया डेरा कहाँ है, इस बारे में उसने कुछ नहीं कहा।

इसके बाद मेरी मानसिक स्थिति अकल्पनीय हो गयी। काफी माथापच्ची करने के बावजूद मैं जया और सरोज सरकार के जीवन के वास्तविक चित्र की कल्पना नहीं कर पाया। पति एक लेबर-लीडर है। अपनी पार्टी का मालिक बराबर बने रहने के लिए वह अपनी पत्नी को शराब पीने के लिए अनुनय-विनय करता है, आखिर इस कहानी का अन्त किस ढंग से होगा, इसका कोई ओर-छोर समझ में नहीं आ सका। मैंने अपना उपन्यास 'साहब, बीबी, गुलाम' इसी आधार पर लिखा है। लेकिन वह पुराने जमाने की कहानी है। इस युग में वह कहानी एक ही मार्ग पर अग्रसर नहीं हो सकती। वर्तमान युग में अनेक संभ्रांत घर की महिलाओं को शराब पीते मैंने देखा है। आजकल इसे बुरा नहीं समझा जाता। अब तो इसे एक प्रकार का स्टाइल या प्रेस्टिज समझा जाता है। यहाँ तक कि अब शराब आभिजात्य का प्रतीक बन गया है।

बहरलाल, अब क्या करता। निरुपाय होकर हरिपद के आने की प्रतीक्षा करने लगा। तीन-चार दिन बाद पुनः एक दिन हरिपद आ टपका। उसे आया देख, प्रसन्न हो उठा।

उससे पूछा—"कहो, कहाँ चले गये थे?"

हरिपद ने कहा—"राँची।"

"राँची? इतनी जगह रहते राँची क्यों चले गये?"

हरिपद इस प्रश्न को टाल गया। कहा—"कभी फुरसत से इस बारे में बताऊँगा। शायद मुझे अभी कई बार राँची जाना पड़ेगा।"

मैं सोचने लगा कि शायद हरिपद का कोई रिश्तेदार राँची रहता हो। संभव है कि पागलखाने में कोई हो?

बिना छेड़छाड़ किये मैंने हरिपद से पूछा—"अब तो बताओ कि तुमने अपना डेरा क्यों बदल डाला?"

हरिपद ने कहा—"इस बात को कहने के लिए मुझे आगे की कहानी बतलानी होगी।"

मैंने कहा—"ठीक है, वही बताओ।"

जया माँ और सरोज सरकार के विवाह के दूसरे दिन ही एक विचित्र तमाशा सुवीर की फैक्टरी में हुआ। जितने श्रमिक हड़ताल पर थे, वे लोग चुपचाप वापस आकर काम पर लग गये। इसके बाद वहाँ कोई उपद्रव नहीं हुआ। यह प्रभाव सरोज सरकार का था। इतने दिनों बाद सुवीर के चेहरे पर मुस्कान अठखेलियाँ करने लगी। लेकिन शोभारानी प्रसन्न नहीं हुई। सुवीर की फैक्टरी पुनः चालू हो गयी, यह अच्छी बात है। लेकिन इसकी कीमत जया को चुकानी पड़ी।

एक दिन शोभारानी लड़की के घर आयी। देखा कि वह चुपचाप रो रही है। माँ अवाक् रह गयी।

बोली—"क्यों री जया, रो क्यों रही है ?"

जया कहना नहीं चाहती थी, पर बार-बार प्रश्न करने पर बोली—"माँ, तुमने किसके पल्ले मुझे बाँध दिया ? समझ में नहीं आता तुम्हारा दामाद किस प्रकृति का है ?"

"क्यों ? क्या हुआ ? दामाद ने कुछ कहा है क्या ? आखिर रो क्यों रही हो ?"

जया ने कहा—"अक्सर तुम्हारा दामाद किसी व्यक्ति को अपने साथ शाम को ले आता है। उसे खिलाना पड़ता है, उसकी खातिर करनी पड़ती है। इसके बाद 'जरूरी काम है' कहकर उस व्यक्ति को बैठाकर तुम्हारा दामाद गायब हो जाता है। आधी रात के बाद वापस आता है।"

माँ ने पूछा—"इसके बाद ? क्या वह आदमी तेरे कमरे में रह जाता है ?"

जया ने कहा—"हाँ। बाद में मुझसे लिपटने लगता है।"

"अरे, यह कैसी बात ? दामाद से इस बारे में क्यों नहीं शिकायत करती ?"

जया ने कहा—"कह चुकी हूँ। कई बार कह चुकी हूँ।" उल्टे सुनना पड़ता है—"इससे क्या हुआ ? अगर कोई छू लेता है तो उससे तुम्हारे तन पर फफोले तो नहीं पड़ जाते ?"

माँ ने कहा—"हाय भगवान्, यह सब क्या सुना रही हो ? इस तरह की बात तो किसी जन्म में भी नहीं सुनी थी।"

जया रोती हुई बोली—"आखिर तुमने मेरी शादी यहाँ क्यों की ? इसके बदले मेरे गले में पत्थर बाँधकर गंगा में फेंक देती। मर जाती तो शान्ति मिलती।"

लड़की की आँखों में आँसू देखकर माँ भी रो पड़ी।

थोड़ी देर बाद आँचल से आँखें पोंछती हुई माँ बोली—"चल बेटी, तू मेरे साथ घर चल। अब तुझे यहाँ रहने की जरूरत नहीं है। उठ, अभी मेरे साथ चल।"

लेकिन जया राजी नहीं हुई। उसने कहा—"नहीं माँ। इस समय तुम्हारा दामाद घर में नहीं है। नौकर-नौकरानी भी नहीं है। आखिर किसके जिम्मे यह सब छोड़कर चली जाऊँ ? अगर वह वापस आकर देखेगा कि मैं घर में नहीं हूँ तो क्रोध में आकर न जाने क्या कर बैठे। बेकार एक बखेड़ा खड़ा हो जायगा।"

माँ ने कहा—"लेकिन तुझे इस हालत में छोड़कर कैसे चली जाऊँ ? तेरी सारी बातें सुनने के बाद कैसे मेरे पेट में अन्न जायगा ?"

जया ने कहा—"अब यह सब रोना रोने से क्या लाभ होगा ? विवाह के पहले सारी बातों का पता लगा सकती थीं।"

माँ ने कहा—"मैं ठहरी औरत जाति, भला मैं क्या कर सकती थी ? तेरे छोटे भैया ने ही तो इसे खोजा था। उसीने तो इसके साथ विवाह कराया। मुझे दामाद के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। मैं तो तेरा भला होगा जानकर राजी हुई थी।"

फिर जया को काफी सांत्वना देकर शोभारानी वापस चली गयीं। दोपहर को लड़का जब घर पर भोजन करने आया तब उन्होंने जया की रामकहानी सुनाई।

बोलीं—"उसे जिस स्थिति में छोड़ आयी हूँ, उसके बाद से मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है। इस बुढ़ापे में इतना कष्ट उठाना पड़ेगा, यह कभी सोचा भी नहीं था।"

सुवीर को जल्दी थी। भोजन करते हुए उसने कहा—"पति-पत्नी में यह सब हर घर में होता है, माँ। इन सब बातों में दिमाग खराब मत किया करो। फिर क्यों तुम बार-बार उनके घर जाती हो ? वे अपनी घर-गृहस्थी सम्हालें। धीरे-धीरे एक दिन सब ठीक हो जायगा।"

इतना कहने के बाद वह हाथ-मुँह धोकर फैक्टरी चला गया।

शोभारानी को समझते देर नहीं लगी कि जया के मामले में सुवीर कुछ सोचना नहीं चाहता। वह स्वयं अपनी चिन्ताओं से परेशान है।

हरिपद ने ये बातें एक दिन जया माँ से सुनी थीं।

जिस दिन जया का विवाह हुआ था, उसी दिन लोगों के मन में संदेह उत्पन्न हो गया था।

विवाह के दिन वर बराती लेकर विवाह करने आता है। यही सार्वजनिक नियम है। लेकिन यहाँ ऐसा नहीं हुआ। लग्न का वक्त बीतता जा रहा था, पर वर का कहीं पता नहीं था। यह देखकर शोभारानी डर गयीं। छोटे लड़के को बुलाकर उन्होंने पूछा—"क्यों रे, क्या हुआ ? तेरा मित्र कहाँ रह गया ? अभी तक बारात क्यों नहीं आयी ?"

सुवीर ने कहा—"लग्न क्या एक ही है ? रात बारह बजे एक लग्न और है। अगर इस वक्त विवाह नहीं होता तो उस समय होगा। जल्दी किस बात की है ?"

पुरोहित ने कहा—"अगर मुझे यह बात मालूम होती तो मुझे परेशान न होना पड़ता। अब मैं चल रहा हूँ। जरूरी कामों को जाकर निपटा लूँ।"

सुवीर नाराज हो गया। कहा—"चले जायेंगे, क्या मतलब ? न कन्यादान हुआ और न विवाह, और आप चले जा रहे हैं ?"

पुरोहित ने कहा—"नहीं जाऊँगा तो यहाँ क्या करूँगा ? हाथ पर हाथ रखे बैठे रहने से मेरा काम नहीं चल सकता।"

घराती यानी जो लोग लड़की की ओर से इस विवाह में निमंत्रित होकर आये थे, वे लोग भी बेचैन हो उठे। इनमें से कुछ लोग बहुत दूर से आये थे। यहाँ से उन्हें अपने घर वापस जाना है। कल सुबह आफिस जाना है।

इधर जया का आँचल आँसुओं से भीग गया।

माँ ने कहा—"मत रो बेटी। विवाह के दिन रोना नहीं चाहिए। चुप हो जा।"

अपने आँचल से माँ जया के आँसू पोंछने लगी।

जया बेमतलब नहीं रो रही थी। अगले दिन 'मैरेज रजिस्ट्रार' घर

पर आया था। इस विवाह को कानूनी बनाने के लिए। छोटे भैया के कहने पर ही वह आया था। आजकल सभी लोग अपने विवाह की रजिस्ट्री कराते हैं। प्रथम दिन रजिस्ट्री से और दूसरे दिन देशी रिवाज से।

शोभारानी लाचार थीं। इस बात पर राजी हो गयीं।

मैरेज रजिस्ट्रार अपने आदमियों के साथ आया। जया माँ, शोभारानी, छोटे भैया सुवीर और छोटी भाभी, सभी लोग थे। वर सरोज सरकार अपने दो-तीन मित्रों के साथ आया था। रजिस्ट्री विवाह में गवाहों का रहना आवश्यक है।

रजिस्ट्रार एक के बाद एक करके सवाल करता रहा और सरोज सरकार उसका उत्तर देता रहा। उन जवाबों को रजिस्ट्रार लिखता रहा। रजिस्ट्रार ने पूछा—"आपके पिताजी का क्या नाम है?"

"पिताजी का नाम?"

अपने पिताजी का नाम सरोज स्मरण नहीं कर सका।

रजिस्ट्रार ने पूछा—"आपको अपने पिता का नाम याद नहीं है?"

सरोज सरकार ने कहा—"पिताजी को देखा कहाँ है जो उनका नाम याद आये। मेरे पैदा होने के पहले उनकी मृत्यु हो गयी थी। ऐसी हालत में कैसे नाम याद रखूँ?"

"इसका यह अर्थ नहीं है कि आप अपने पिता का नाम न जान सकें। यह कैसे मान लिया जाय?"

सरोज सरकार ने कहा—"मेरे पिता प्रसिद्ध व्यक्ति नहीं थे, इसलिए नाम याद कौन रखता है। अगर वे मंत्री-संत्री होते तो नाम याद रहता। साधारण व्यक्ति थे। अगर दिग्गज होते तो सभी उनका नाम याद रखते।"

अधिक बहस चलने पर सरोज सरकार ने कहा—"नाम को लेकर आप इतना परेशान क्यों हो रहे हैं? विवाह तो मैं कर रहा हूँ, मेरे बाप नहीं कर रहे हैं। पिता के स्थान पर कोई भी नाम लिख लीजिए।"

जया के भावी पति की बातें सुनकर शोभारानी को संदेह हो गया था। यह कैसी बात? जिस व्यक्ति को अपने बाप का नहीं मालूम, वह व्यक्ति आगे चलकर न जाने कैसा बनेगा?

ठीक इसी प्रकार जया माँ को भी सरोज की बातें पसन्द नहीं आयी थीं।

सुवीर से माँ ने पूछा—"यह कैसा दूल्हा है तेरा ? इसे अपने बाप का नाम भी नहीं मालूम ?"

माँ की बातों को सुवीर ने अनसुनी कर दिया। प्रत्युत्तर में उसने कहा—"तुम औरत हो, तुम्हें क्या समझाऊँ ? मैं बिना पता लगाये विवाह कराने को तैयार हुआ हूँ ? मैं क्या लड़कपन कर रहा हूँ ?"

यह अगले दिन की बातें हैं और आज शादी है। इस विवाह में ऐसी बेमिसाल घटना होगी, इसे कौन जानता था ?

आखिर दूल्हा जब आया तब रात के १२ बजेवाला मुहूर्त समाप्त होने को था। उसके साथ ही कुछ बाराती आकर शोरगुल करने लगे। दूल्हा कमीज और पैण्ट पहने था जबकि उसे सिल्क का कुर्ता और धोती पहनना चाहिए था। चद्दर गले में रखनी चाहिए थी।

शोभारानी ने दामाद के लिए कुर्ता और धोती का प्रबंध पहले से ही कर रखा था। सरोज ने कहा—"क्या यह जरूरी है कि इन सबको पहनूँ ? क्या इन्हें न पहनने पर विवाह नहीं होगा ?"

शोभारानी ने कहा—"हम लोगों के यहाँ बाप-दादे के जमाने से इसी परम्परा का पालन होता आया है। इसे धारण न करने पर हिन्दुओं का विवाह भला कहीं होता है ? मेरा कहना मानो, इसे पहन लो।"

सरोज की इच्छा नहीं थी, पर लोगों के अनुरोध करने पर उसने पैंट के ऊपर चद्दर को लुंगी की तरह लपेट लिया। इसके बाद मंडप में आकर बैठ गया।

हिन्दुओं के विवाह में मंत्रोच्चार होता है। पुरोहितजी तैयार थे। वे एक-एक मंत्र पढ़ते और वर को दुहराने को कहते। इधर सरोज मुँह बन्द किये बैठा रहा। यह देखकर पुरोहित ने कहा—"बबुआ, चुप क्यों हैं ? आप भी बोलिये जो मैं कह रहा हूँ।"

सरोज ने कहा—"ठीक है, ठीक है। मैं मन हीं मन कह रहा हूँ। आप चिंतित न हों।"

इसी प्रकार देर तक नाटक चलता रहा। सरोज मन ही मन ठीक कह रहा है या नहीं, इसे कोई नहीं जान सका। ठीक इसी समय एक भयंकर घटना हो गयी।

बारातियों में से किसीने कन्यादान के समय भीतर आकर कहा—"सरोज दादा, सर्वनाश हो गया।"

"कैसा सर्वनाश हुआ रे ?"

"वरानगरवाले हमारे पार्टी आफिस में कोई बम फेंक गया है।"

"कौन लोग थे ?"

"यह नहीं मालूम। अभी-अभी समाचार आया है। तुम्हें एक बार चलना पड़ेगा, वर्ना सत्यानाश हो जायगा।"

सरोज सरकार ने कहा—"मगर......"

वाराती ने कहा—"विकास भाई ने कहा है कि यह खबर तुरत आपको दूं।"

"ठीक है, तब चल।" कहने के साथ ही लुंगी उतारकर वह चलने को प्रस्तुत हुआ।

पुरोहित ने टोंका—"कहाँ चले बबुआ ? अभी तो कन्यादान बाकी है।"

शोभारानी भी डर गयीं। बोलीं—"यह क्या बात है, बेटा ? विवाह के समय आसन छोड़कर चले जा रहे हो ? अभी शुभ कार्य चल रहा है। विवाह-मण्डप से उठकर कहीं नहीं जाना चाहिए।"

सरोज ने इन बातों पर ध्यान नहीं दिया। चलते-चलते उसने कहा—"मैं जल्द वापस आऊँगा। इसके लिए घबराने की जरूरत नहीं माँ।"

इसके बाद सुबीर की ओर देखते हुए उसने कहा—"आप कुछ मत सोचियेगा। मैं जाकर तुरत लौट आऊँगा।"

दामाद के इस व्यवहार को देखकर शोभारानी का सिर चकराने लगा और वे बेहोश होकर गिर पड़ीं। रहा जया माँ का प्रश्न। उस वक्त वे बनारसी साड़ी के घूंघट में फफक-फफक कर रो रही थीं।

पुरोहित महाशय अपने आसन से उठकर खड़े हो गये।

सुबीर ने चकित होकर पूछा—"आप कहाँ जा रहे हैं ?"

पुरोहित ने कहा—"इस प्रकार के विवाह में मुझसे पुरोहित का कार्य नहीं होगा। मुझसे अधर्मवाला कार्य मत कराइये। बेटा, तुम लोग इस विवाह के लिए कोई दूसरा पुरोहित ठीक कर लो। मुझे छुट्टी दो।"

इतना कहने के बाद पुरोहितजी चले गये।

यह सब घटनाएँ जया माँ की स्मृति में बनी रहीं। अपने विवाह के अवसर पर जो व्यक्ति ऐसा कर सकता है, वह भविष्य में कैसा व्यवहार करेगा, इसकी कल्पना जया माँ कर चुकी थीं।

पड़ोसियों को भी इन घटनाओं को देखकर आश्चर्य हुआ था। अब तक न जाने कितने विवाहों में ये लोग शामिल हो चुके हैं, परन्तु इस ढंग का विवाह इसके पूर्व कभी नहीं देखा था।

मैंने पूछा—"इसके बाद क्या हुआ ? वर वापस आया ?"

हरिपद ने कहा—"इसके बाद वर आया जरूर, पर उस वक्त तक रात गुजर चुकी थी। एक तो रजिस्ट्री-विवाह के अवसर पर वर अपने पिता का नाम नहीं बता सका, दूसरे, विवाह-मण्डप में ठीक से मंत्र नहीं पढ़ सका। यह सब देखकर जया माँ को सन्देह हो गया था यह कैसा आदमी है ? आखिर यह किस प्रकार का विवाह है ?

आखिर जब वर आया तब पड़ोस से एक अन्य पुरोहित को जगाकर ले आया गया। इस समय भी वर ने ठीक से मंत्रोच्चार नहीं किया। किसी प्रकार से राम-राम करते हुए जया माँ का विवाह सम्पन्न हुआ। यही है—जया माँ के विवाह का इतिहास।

"दूसरे दिन जया माँ को बिदा करके सरोज सरकार ले जानेवाला था। उस समय भी विचित्र घटना हुई।"

पूछा—"कैसी विचित्र घटना ?"

न जाने कहाँ का एक कम्पनी का गैर-बंगाली मालिक अपनी बड़ी गाड़ी लेकर जया माँ के दरवाजे पर आया।

उन्हें देखकर सुवीर वड़े आदर के साथ उनका स्वागत करने लगा। समझते देर नहीं लगी कि यह व्यक्ति जरूर महत्त्वपूर्ण आदमी है, वरना छोटे भैया इतना आदर-स्वागत न करते ? बड़े आदमी को देखते ही छोटे भैया इसी प्रकार की अभ्यर्थना करते हैं। लेकिन इस तरह की अभ्यर्थना छोटे भैया ने इसके पहले कभी किसीकी नहीं की थी।

जया माँ ने सोचा कि आगन्तुक सज्जन केवल करोड़पति नहीं संभवतः कई करोड़ का मालिक है वर्ना इतनी खातिरदारी क्यों सरोज सरकार इनकी फैक्टरी के लिए अवश्य ही महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है। आधुनिक मंत्रियों से भी अधिक सक्षम कोई होता है तो वह है—लेबर लीडर। अगर लेबर-लीडर अपना दोस्त हो तो फिर किसीसे डरने

जरूरत नहीं। यही लोग मुल्क के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति होते हैं। इन सभी बातों से जया माँ अच्छी तरह परिचित थीं।

छोटे भैया लगातार उनकी खुशामद करते जा रहे थे। एक बार उन्होंने कहा—"कम-से-कम मुंह तो मीठा कर लीजिए सर। गरीब के घर जब आये हैं तब जरा-सा मुंह मीठा करना ही होगा।"

आगन्तुक सज्जन हो-होकर हँस पड़े। बोले—"मीठा मुंह कर लूं ? मुंह में मीठा डालते ही मुझे मितली-सी होने लगती है। मैं मिठाई नहीं खाता।"

"तब किस चीज से आपका स्वागत करूँ ?"

उक्त सज्जन ने कहा—"आप मीठी बातें कह रहे हैं, इसीसे मन प्रसन्न हो गया। मुझे कुछ नहीं चाहिए।"

"कुछ नमकीन दूं ? नमकीन के साथ चाय चल जायगी।"

"नहीं-नहीं, यह सब मुझे कुछ नहीं चाहिए। आप सरोज बाबू को खिला दीजिए। उनके खाने पर मेरा खाना हो जायगा।"

"ऐसा कैसे हो सकता है ?"

उस सज्जन ने कहा—"होता है भाई। सरोज बाबू ही सब कुछ हैं। यही देखिये न, मैंने अब तक जो कुछ कमाया है या बनाया है, वह सब सरोज के कारण ही कर सका।"

इस वक्त फुरसत से बातें करने का मौका नहीं था। सभी व्यस्त और परेशान थे। एक तो विवाहवाला घर, दूसरे लड़की की विदाई होनेवाली थी। इधर माँ अस्वस्थ हैं। कल शोभारानी जो बेहोश हुई थीं, अभी तक होश में नहीं आयी हैं। इलाज चल रहा है।

अनजाने भय से जया माँ के पैर डगमगाने लगे। लगता था, जैसे वे भी बेहोश होकर गिर पड़ेंगी। उधर वर-पक्षवाले विदाई के लिए तंग कर रहे थे। वर-पक्ष यानी सरोज सरकार तथा उनके साथ आये अन्य लोग। पता नहीं क्यों, ये लोग जल्दबाजी कर रहे थे।

सभी एक के बाद एक करके कहते रहे—"अब किस बात की देर है ? जल्द विदा करिये।"

आगन्तुक सज्जन की बहुत बड़ी गाड़ी थी। पहले गाड़ी का मालिक जाकर बैठा। फिर सरोज सरकार और जया माँ सवार हुए। गाड़ी का मालिक ड्राइवर की बगलवाली सीट पर बैठा।

जया माँ विवाहवाले दिन से बराबर रो रही थीं। रातभर रोती रहीं। लगता है, उनकी आँखों का पानी अभी तक समाप्त नहीं हुआ है।

गाड़ी पर सवार होने के पूर्व जया माँ अपनी बेहोश पड़ी माँ के सिरहाने बैठकर पुकारने लगीं—"माँ–माँ–माँ।"

शायद यह आवाज माँ के कानों तक नहीं पहुँची। उस वक्त माँ बेहोश थीं। इधर वर-पक्षवालों को जल्दी थी। माँ बीमार हों या मर जायँ, इससे वर-पक्षवालों का क्या नुकसान होनेवाला है ?

आँसुओं से भीगी हुई जया माँ को वर-पक्षवालों ने गाड़ी पर बैठाया। वर की बगल में उन्हें बैठना पड़ा। उसी दिन से जया माँ इस मकान के लिए परायी हो गयीं।"

हरिपद यहाँ तक कहानी सुनाने के बाद चुप हो गया। मैंने पूछा—"क्या हुआ ? चुप क्यों हो गये ? इसके बाद क्या हुआ, उसे सुनाओ।"

हरिपद ने कहा—"मुझे बीस रुपये देंगे, सर ?"

मैंने कहा—"कहानी समाप्त नहीं हुई, फिर रुपये ?"

हरिपद ने कहा—"काफी जरूरत है सर! इसीलिए आपसे आग्रह किया। अगर आप दे दें तो मेरा उपकार हो जायगा। मैं वादा करता हूँ कि यह कहानी मैं पूर्ण रूप से आपको सुनाऊँगा। मेरा विश्वास कीजिए।"

आखिर मुझे रुपये देने पड़े। रुपये लेकर हरिपद चला गया।

मैं यह बात अच्छी तरह जानता हूँ कि हरिपद में अनेक दोष हैं, पर गुण भी अनेक हैं। इन गुणों में मुख्य गुण यह है कि वह अपने कौल का पक्का है। सिर्फ यही नहीं, वह तेज रफ्तार में कहानी सुनाने पर भी कहानी की समाप्ति इतने सुन्दर ढंग से करता है कि मन तृप्त हो जाता है।

आखिर एक दिन हरिपद सचमुच आया।

आते ही उसने कहा—"आप अपने आदमी से कहिये कि जरा चाय बनाये। पहले चाय पी लूँ तब आराम से आगे की कहानी सुनाऊँगा।"

इतना कहने के वाद साथ लाये कपड़े की पोटली को गोद में रखकर आराम से वैठ गया।

मैंने पूछा—"पोटली को वगल में रखकर जरा ठीक से वैठो।"

हरिपद—"अरे वाप रे। कहीं जाते समय भूल से यहीं छोड़कर चला गया तो मुश्किल होगा।"

मैंने कहा—"तुम्हारी गन्दी पोटली को कौन ले जायगा ? किसे गरज पड़ी है जो ऐसी गन्दी पोटली को गायव करे ?"

हरिपद ने इस प्रश्न का उत्तर नहीं दिया, वल्कि उस पोटली को पहले से अधिक मजवूती से पकड़कर वैठ गया।

उसने कहना प्रारंभ किया—"अव आगे की घटना सुनिये। दूसरे दिन शोभारानी के छोटे लड़के के घर वर-पक्षवाले आये। साथ ही पूर्व आगन्तुक सज्जन भी थे।

सुवीर वावू घर पर नहीं थे। उनकी पत्नी ने दरवाजा खोला। सरोज को नन्दा ने पहचान लिया था। वोली—"क्या हुआ ? कैसे आये आप ?"

"आपकी ननद कहाँ हैं ? क्या वे आपके यहाँ आयी हैं ?"

नन्दा ने पूछा—"क्या कह रहे हैं ? मेरी ननद यानी जया ? विवाह के वाद तो उसे आप लोग अपने साथ ले गये थे। वह मेरे यहाँ क्यों आयेगी ?"

सरोज ने कहा—"विवाह के वाद उसे अपने साथ जरूर ले गया था, यह वात ठीक है। लेकिन कहाँ चली गयी, इसका कुछ पता नहीं चल रहा है।"

"क्या मतलव ?"

सरोज ने कहा—"मतलव ? मतलव आप स्वयं नहीं वताना चाहतीं। वह जायगी कहाँ ? वह इसी मकान में जरूर कहीं छिपी होगी। हम लोग जरा खोजकर देखेंगे।"

नन्दा ने कहा—"खुशी से खोजिये। अगर आप मेरी वातों पर विश्वास कर सकें तो मैं कहूँगी कि वह यहाँ नहीं है।"

फिर सरोज और उसके साथ आये अन्य लोगों ने पूरे मकान के भीतर सभी जगह देखा, पर जया कहीं नहीं मिली। एक कमरे में वीमार शोभारानी सो रही थीं। कई लोगों की पदचाप सुनकर वे जाग गयीं। वोलीं—"कौन है ? तुम लोग कौन हो ?"

नन्दा ने आगे वढ़कर कहा—"माँ, आपका दामाद आया है।"

"क्यों बहू ?"

नन्दा ने कहा—"जया न जाने कहाँ गायब हो गयी है। इनके यहाँ से कहीं चली गयी है।"

"क्या कह रही हो बहू ? आखिर कहाँ गयी वह ?"

इतना कहने के बाद वे फफककर रोने लगीं। बाद में बोलीं—"जया को कहाँ रख आये बेटा ? वह कहाँ चली गयी ?"

सरोज सरकार को इन बातों का जवाब देने की फुरसत नहीं थी। सभी लोग एक साथ मकान के बाहर निकल आये।

उस समय भी शोभारानी रो रही थीं। बोलीं—"बहू, सुवीर ने कैसे लड़के के साथ उसका विवाह कराया ? इससे अच्छा था कि उसके गले में पत्थर बाँधकर नदी में ढकेल देती। सुवीर ने यह किया बहू। सुवीर मे मेरा सत्यानाश कर दिया।"

कलकत्ता की सड़कों पर रात गहरी हो गयी थी। जया माँ अँधेरे में दौड़ती हुई चल रही थी। रह-रहकर वह अपने अगल-वगल नजर दौड़ाती थी। उन्हें लगता, जैसे सभी उन्हें संदेह की दृष्टि से देख रहे हैं। इतनी रात गये यह लड़की इस साज-सज्जा में कहाँ भाग रही है ? उस घने अँधेरे के भीतर से एक आदमी जया माँ की ओर बढ़ आया। उसे देखते ही जया माँ भय से चीख उठी। ठीक इसी समय हरिपद जया माँ के पास आकर खड़ा हुआ। हरिपद उन दिनों पड़ोस के रेस्तरां में बरतन माँजता था। अपनी आँखों के सामने इस दृश्य को देखते ही हरिपद लोहे का पौना लेकर दौड़ा आया।

"कौन है रे ?"

एक नहीं, दो गुण्डे दोनों ओर से जया माँ को पकड़ने आ रहे थे। मेरे हाथ में लोहे का पौना था। अपने इस हथियार को लेकर मैं भिड़ गया।

लेकिन अकेला आदमी कैसे दो आदमियों से मुकाबला करता ? अगर उस दिन भगवान् सहायता न करते तो जया माँ को बचाना कठिन था।

सहसा पुलिस की गश्ती मोटर उधर आ गयी। उन लोगों ने जया माँ को बचाया। पुलिस की गाड़ी देखते ही गुण्डे भाग खड़े हुए। पता

नहीं, अँधेरे में कहाँ गायब हो गये। तुरत मुझे पकड़ा गया। पुलिस की शक्ल देखते ही मैं डर गया। दरोगा ने मुझसे पूछा—"तुम कौन हो ?"

मैंने कहा—"मैं हरिपद हूँ, सर।"

"हरिपद ? कहाँ रहता है ?"

मैंने कहा—"सामने फुटपाथ पर, सर।"

"फुटपाथ पर ? फुटपाथ पर कहीं आदमी रहते हैं ? किस जिले में घर है ?"

"फुटपाथ ही मेरा घर है, सर।"

"फुटपाथ घर है। अबे, खाता कहाँ है ?"

मैंने कहा—"जब कोई खाने को देता है तब खाता हूँ, सर।"

"झूठ बोलता है ? सच बता, कहाँ खाता है ? यह लोहे का पौना किसका है ?"

"सामनेवाले दुकानदार का।"

दरोगा साहब मेरी बात पर नाराज होकर बोले—"दुकानदार का है ?"

मैंने कहा—"वह जो सामने रेस्तराँ है न, सर। उनके जूठे बरतनों को मैं माँज देता हूँ। बदले में वे लोग मुझे खाना खिला देते हैं।"

"मगर यह बता कि तू इस महिला से छेड़खानी क्यों कर रहा था ?"

मैंने कहा—"नहीं, सर। मैंने कुछ नहीं किया। मैंने देखा कि दो गुण्डे इस महिला को पकड़ रहे थे। यह देखकर मैं बरतन माँजना छोड़कर गुण्डों को मारने चला आया।"

जया माँ अब तक चुप रहीं। अब बोलीं—"इसे छोड़ दीजिए। अगर यह न आता तो दोनों गुण्डे मेरा सर्वनाश कर देते। सच तो यह है कि इसने मुझे बचाया है। कृपया आप इसे छोड़ दीजिए।"

इस बात पर दरोगा साहब ने मुझे छोड़ दिया। इसके बाद जया माँ की ओर देखते ही वे अवाक् रह गये।

पूछा—"इतना शृंगार कर इस वक्त कहाँ से आ रही हैं ?"

जया माँ इस प्रश्न का जवाब नहीं दे सकीं।

दरोगा ने पुनः प्रश्न किया—"आप कभी नाटकों में अभिनय करती थीं ?"

तीक्ष्ण दृष्टि से देखते हुए दरोगा ने पुनः प्रश्न किया—"लगता है, आप स्टेज पर पार्ट करती हैं। आपको मैंने कहीं अभिनय करते देखा है। अच्छा, यह बताइये, क्या आपका नाम जया देवी है ?"

जया माँ चौंक उठीं। उन्होंने पूछा—"आपने मुझे कैसे पहचाना ?"

दरोगा ने कहा—"हमारे पुलिस क्लब में एक बार आपने अभिनय किया था। मुझे अच्छी तरह याद है।"

जया माँ को चुप रहते देख दरोगा ने पुनः प्रश्न किया—"जवाव क्यों नहीं दे रही हैं ? जवाव दीजिए।"

एकाएक दरोगा साहब मेरी ओर देखते हुए मारने की धमकी में रूल उठाकर बोले—"अवे, तू यहाँ खड़े-खड़े क्या सुन रहा है ? भाग यहाँ से। जल्द भाग।"

दरोगा साहव के धमकाने पर मैं डरकर भाग आया। इसके वाद मैंने दूर से देखा कि जया माँ को अपनी जीप पर वैठाकर दरोगाजी न जाने कहाँ चले गये ? इसका पता नहीं चला।

मैंने पूछा—"इसके वाद ?"

हरिपद ने कहा—"इसके वाद मैं क्या करता ? पुनः रेस्तरां में जाकर वाकी वरतनों को माँजने लगा। अगर न माँजता तो उस रात को भोजन न मिलता।"

मैंने पूछा—"क्या तुम इसी समय से जया माँ को पहचानते थे ?"

हरिपद ने कहा—"जी नहीं। उन दिनों भला मुझे इन सव वातों की जानकारी कहाँ थी ? वाद में मुझे मालूम हुआ कि उस दिन जया माँ रात वारह वजे अकेली क्यों जा रही थी।"

"उस दिन हुआ क्या था ?"

हरिपद ने कहा—"उस दिन विवाह के वाद जव जया माँ को अपने साथ लेकर सरोज बाबू चले गये तव चारों ओर की स्थिति देखकर वे घवरा गयीं। आठ या दस मंजिलवाला वड़ा मकान था। इसी मकान के नीचेवाले कमरे में जव वे गयीं तो देखा कि कमरे को काफी अच्छे ढंग से सजाया गया है। नये फर्नीचर, नया विछौना, नया पलंग, दीवारों पर पॉलिश, प्रत्येक खिड़की पर रंगीन पर्दे। जया माँ सोचने लगीं कि क्या यह मेरा ससुराल है या कहीं दूसरी जगह लायी गयी हूँ ?

थोड़ी देर बाद एक खानसामा ने आकर कहा—"खाना-पीना सब रेडी है।"

जया माँ को बगल के कमरे में जाकर खाने के लिए कहा गया। जया माँ ऊहापोह करने लगीं। बगल के कमरे से भोजन की महक आ रही थी। साथ ही ऐसा भी लगा जैसे शराब की भी महक आ रही है।

पूर्व परिचित कम्पनी के मालिक झूमते हुए आये। उन्होंने कहा—"आइये, मिसेज सरकार, आइये। खाना टेबुल पर लग गया है। क्या आप नहीं खायेंगी ?"

जया माँ ने कहा—"आप चलिये, मैं आ रही हूँ। जरा कपड़े बदल लूँ।"

उक्त सज्जन चले गये। बगल के कमरे से काफी लोगों की आवाजें इधर आ रही थीं।

जया माँ चुपचाप बाहर आकर खड़ी हो गयीं। चारों ओर सतर्क दृष्टि से देखने के बाद बरामदे के अन्त तक आ गयीं। लिफ्ट ऊपर आ रही है। अभी वह नीचे जायगी।

दरवाजा खोलकर जया माँ लिफ्ट के भीतर चली गयीं। तुरत लिफ्ट नीचे की ओर चल पड़ी।

नीचे आते ही वे सीधे सड़क पर चली आयीं। इसके बाद जिधर निगाह उठी, उधर ही दौड़ती हुई चलने लगीं। इसके बाद ही दरोगा साहब से मुलाकात हुई। उनके साथ थाने तक आयीं।

जीप पर बैठते ही दरोगा ने पूछा—"अब आप कहाँ जायेंगी ?"

जया माँ ने कहा—"आप जहाँ ले चलेंगे, वहीं जाऊँगी।"

"क्यों ? क्या आप अपने घर नहीं जायेंगी ?"

जया माँ ने कहा—"कल ही मेरा विवाह हुआ है। अगर मैं आज घर लौटूँगी तो छोटे भैया नाराज होंगे।"

"कल ही आपका विवाह हुआ है ? आपका ससुराल कहाँ है ?"

जया माँ ने कहा—"यह मैं नहीं जानती। मेरे पति मुझे जहाँ ले गये थे, वह मकान आठ-दस मंजिलवाला है।"

"वहाँ रहने में आपको आपत्ति क्या थी ?"

जया माँ ने जवाब दिया—"वहाँ मैं बुरी तरह डर गयी।"

"क्यों ?"

जया माँ ने कहा—"मैंने वहाँ सभी को शराब पीते देखा। इसी बीच मैं वहाँ से निकल पड़ी।"

"मतलब यह कि इस वक्त आप अपने घर नहीं जाना चाहतीं। अगर आप अपने घर जाने को राजी हों तो मैं अभी वहाँ पहुँचा सकता हूँ। क्या इच्छा है आपकी ?"

उत्तर देते समय जया माँ रो पड़ीं।

दरोगा ने पूछा—"आप रो क्यों रही हैं ? आपके घर में कौन-कौन हैं ?"

जया माँ ने कहा—"विधवा माँ, मेरा छोटा भाई और छोटी भाभी।"

जया माँ के साथ दरोगा साहब जब थाने पर आये तब रात के एक बज चुके थे। दरोगा साहब को आया देखकर थाना इंचार्ज तुरत खड़ा हो गया।

दरोगा ने कहा—"जहर, आपको ऊपर मेरे कमरे में ले जाओ। और सुनो, मालती से कह देना कि इनके लिए कुछ खाने का इन्तजाम कर दे।"

जया माँ मन ही मन पीपल के पत्ते की तरह काँपती रहीं। कहीं ताड़ से घिरकर खजूर में अटकना तो नहीं पड़ेगा ? अब क्या होगा ?

जया माँ का भय निरर्थक था। थाने के ऊपरवाले कमरे के भीतर आते ही उन्हें लगा जैसे वे अपने घर में आ गयी हैं। थाने के ऊपर स्थित इस कमरे में दरोगा साहब रहते हैं।

छोटे बाबू ने मालती से क्या कहा था, पता नहीं। मालती दरोगा साहब की पत्नी नहीं है, बल्कि उनके घर की काम-काज करनेवाली बुढ़िया नौकरानी है। गौर से उसका चेहरा देखने पर आदर करने की इच्छा होती है।

मालती हँसती हुई बोली—"सुना कि आप अभी तक कुछ खायी नहीं हैं। इस वक्त आप क्या खायेंगी, दीदी ?"

जया ने पूछा—"आप कौन हैं ?"

मालती ने कहा—"मैं दरोगा बाबू का खाना बनाती हूँ और इधर-उधर का काम करती हूँ। बाबू का अपना कोई नहीं है यहाँ।"

"क्यों ? क्या दरोगा बाबू की पत्नी नहीं है ?"

"नहीं।"

"बाबू के परिवार में कौन-कौन लोग हैं ?"

"वावू के पिता-माता के अलावा अन्य कोई रिश्तेदार नहीं है। न भाई और न वहन। हमारे वावू अपने माँ-वाप के इकलौते लड़के हैं। अच्छा, यह वताइये कि आप इस वक्त क्या खायेंगी ?"

जया माँ ने कहा—"इतनी रात को अव कुछ नहीं खाऊँगी।"

मालती ने कहा—"कुछ न खाने पर तवीयत खराव हो जायगी।"

जया माँ ने कहा—"दिनभर मैं कई झमेलों के कारण परेशान थी। इस वक्त मैं सोऊँगी।"

मनुष्य अपने जीवन में कितना कष्ट पाता है, शायद इसे अधिकांश मनुष्य नहीं जानते। शायद कुछ लोग जानते भी हैं। विवाह पुरुषों की दृष्टि में भोग है और नारी की दृष्टि में त्याग।

पर त्याग की एक सीमा होती है। ऐसा लगता है जैसे जया माँ के जीवन में विधाता ने त्याग की सीमा-रेखा नहीं खींची है। जया माँ की जैसी अनेक महिलाएँ हैं, पर केवल जया माँ को ही इतना दुःख और कष्ट सहन करना पड़ रहा है। आखिर उन्हें इतना क्यों भुगतना पड़ रहा है ? किसकी गलती या किसके पाप के कारण ऐसा हो रहा है ? आखिर इस प्रश्न का जवाव कौन देगा ?

मैंने हरिपद को डाँटते हुए कहा—"यह सव वेकार की वातें कहने की जरूरत नहीं। मैं तुमसे ज्ञान नहीं लेना चाहता। अगर जरूरत हुई तो यह सव वातें कहानी लिखते समय लच्छेदार भाषा में लिख दूँगा। तुम अपनी कहानी का सिलसिला जारी रखो।"

हरिपद ने कहा—"टालिये नहीं। मेरी जया माँ के भाग्य के वारे में एक वार सोचिये। विवाह के वक्त उसके पति ने ठीक से मंत्र नहीं पढ़ा, न वह रजिस्ट्रार के सामने अपने वाप का नाम वता सका, विवाह के समय आसन छोड़कर न जाने कहाँ गायव हो गया। पुरोहित भी विना विवाह कराये नाराज होकर चला गया और जाते-जाते कहता गया—'ऐसा अधार्मिक कार्य मुझसे नहीं होगा।' वाद में दूसरा पुरोहित आया। विवाह के वाद सभी लड़कियाँ ससुराल जाती हैं। ससुराल में कालरात्रि (एक रस्म) और फिर सोहागरात, वहू-भात (पार्टी) होता है। लेकिन जया माँ के विवाह में यह सव कुछ नहीं हुआ। आखिर ऐसा क्यों हुआ ?"

हरिपद ने जरा रुककर पुनः कहा—"जव आप इस कहानी को लिखें तव जोरदार शब्दों में इन वातों का उल्लेख करें। भाषा इतनी

सशक्त होनी चाहिए ताकि पढ़ते-पढ़ते पाठक रो पड़े। समझ गये न ? अगर कहीं इस उपन्यास की फिल्म बनी तो सिनेमा के टिकट ब्लैक में बिकना जरूरी है।"

मैंने कहा—"यह सब तुम्हें सोचने की जरूरत नहीं है। वह मेरा काम है। मेरी अपनी भी प्रतिष्ठा है, यह तो जानते होगे ?"

हरिपद ने कहा—"मेरा यह मतलब नहीं है, सर ! मैं तो आपके भले के लिए कह रहा था। मेरा क्या मैं तो रुपये लेकर अलग हो जाऊँगा। अगर पुस्तक की अधिक बिक्री हुई तो उसमें से मुझे हिस्सा थोड़े ही मिलेगा ?"

मैंने कहा—"मैं जो अच्छा समझूँगा, वही करूँगा। तुम अपनी कहानी सुनाते रहो। तुम्हारी जया माँ उस रात को दरोगाजी के कमरे में पहुँच गयी। इसके बाद क्या हुआ ?"

हरिपद ने ठंडे स्वर में कहा—"इसके बाद उस रात को बिना कुछ खाये जया माँ रह गयीं। सच तो यह है कि उस मनःस्थिति में खाना-पीना कहाँ अच्छा लगता है। बेचारी एक मिनट के लिए आँखें बंद नहीं कर सकीं। नींद आती भी कैसे ? मनुष्य का मन जब शांत रहता है तब नींद आती है।"

सुबह मालती दीदी ने आकर पूछा—"क्या खाओगी दीदी ?"

जया माँ ने कहा—"कुछ नहीं।"

"क्यों ना-ना कहती हैं ? कुछ न खाने पर तबीयत खराब हो जायगी।"

जया माँ ने कहा—"अगर मेरी तबीयत खराब हो जाती है तो नुकसान क्या है ? इस दुनिया में मेरा अपना कोई नहीं है। किसे मेरी चिन्ता है ? माँ जीते हुए भी न जीती हुई के समान है। भाई और भौजाई हैं, पर वे मेरा भला नहीं चाहते। मुझे घर से विदा करने में उन्हें संतोष होगा। मेरा मरना ही अच्छा है।"

"यह सब बातें नहीं कहनी चाहिए दीदी। दरोगा बाबू ने कहा है कि आपको कुछ न कुछ जरूर खिला दो।"

जया माँ ने पूछा—"तुम्हारे बाबू कहाँ हैं ?"

मालती ने कहा—"बाबू के पास एक-दो काम हैं ? अनेक काम रहते हैं। कल रात को आराम करने के बाद आज भोर में कहीं चले गये थे। आते ही उन्होंने पूछा कि आप भोजन कर चुकी हैं या नहीं।"

मालती की बातें समाप्त होते ही दरोगा ने उस कमरे में प्रवेश करते हुए पूछा—"कहिये, मजे में हैं ? रात को नींद अच्छी तरह आयी थी ?"

जया माँ ने कहा—"इतनी बड़ी दुर्घटना होने के बाद भला नींद आयेगी ?"

दरोगा साहब ने कहा—"मालती की जबानी पता चला कि आपने कुछ खाया नहीं। कुछ खा लेने पर ठीक हो जातीं, इसीलिए मालती से आपके खाने की व्यवस्था करने को कहा था। खैर, जाने दीजिए। आप अपनी भलाई स्वयं समझेंगी। अब सवाल यह है कि आपको हमेशा के लिए अपने कमरे में रख नहीं सकता। आप ठहरीं एक विवाहिता स्त्री। हाल में ही विवाह हुआ है। ऐसी हालत में मेरे जैसे बैचलर के क्वार्टर में आपको अधिक दिनों तक रखा नहीं जा सकता। कल रात की बातचीत से मैंने यह अनुभव किया कि आप अपने पति के घर नहीं जाना चाहतीं, माँ के पास भी नहीं जाना चाहतीं। ऐसी स्थिति में क्या करूँ, मेरी समझ में नहीं आ रहा है। क्या आप किसी 'नारी कल्याण आश्रम' में जाकर रहना पसन्द करेंगी ? इसका प्रबंध मैं कर सकता हूँ। लेकिन इसके लिए अदालत से आदेश लेना पड़ेगा।"

जया माँ ने कहा—"मैं ठीक से नहीं समझ पा रही हूँ कि क्या कहूँ ?"

दरोगा साहब ने कहा—"मेरी समझ से 'नारी-कल्याण आश्रम' में आपका जाना उचित नहीं होगा। वह इसलिए कि यह भी एक प्रकार का व्यवसाय बन गया है। वहाँ आजकल लड़कियों की खरीद-फरोख्त होने लगी है। इस व्यवसाय में कुछ लोग रुपये लगा रहे हैं और छोटे-छोटे लड़के-लड़कियों को बेचकर लाखों रुपये पैदा कर रहे हैं। अगर आप मेरी राय मानें तो मैं आपसे कहूँगा कि आप अपने घर चली जायँ।"

"लेकिन वहाँ मेरा एक भी हितैषी नहीं है। मेरी विधवा माँ जरूर हैं, पर छोटे भैया और छोटी भाभी मुझे तनिक भी पसन्द नहीं करते। यही वजह है कि इन लोगों ने षड्यंत्र करके मेरा विवाह इस लम्पट के साथ करा दिया है।"

"इनमें उनका क्या स्वार्थ है ?"

जया माँ ने कहा—"अगर संभव हो तो वे लोग मेरी माँ को भी घर से निकाल सकते हैं। पर मेरे बड़े भैया अमेरिका से हर महीने एक

हजार रुपये माँ के नाम भेजते हैं, इसीलिए वे लोग माँ को पाल रहे हैं ताकि वह जीवित रह सके। अगर माँ मर गयी तो बड़े भैया रुपये भेजना बन्द कर देंगे।"

दरोगा साहब ने कहा—"अब समझ गया। पर सवाल यह उठता है कि इस तरह से आपका विवाह क्यों कराया ?"

"मेरे छोटे भैया की लोहे की एक फैक्टरी है। वहाँ अक्सर लेबर-समस्या उत्पन्न होती रहती थी। लेबर-लीडर के साथ विवाह कर देने पर एक तीर से दो शिकार मारे जा सकते हैं। एक ओर बहन के बोझ से मुक्ति और दूसरी ओर अब फैक्टरी में कभी स्ट्राइक नहीं होगी। मैं बी० ए० पास हूँ। एमेच्योर क्लबों में पार्ट करने पर पारिश्रमिक में जो कुछ मिलता था, सब भाई-भाभी को दे देती थी ताकि वे दोनों मुझसे नाराज न हों। फिर भी वे लोग मुझसे कभी प्रसन्न नहीं हुए।"

दरोगा साहब ने कहा—"जब आप बी० ए० पास हैं तब कहीं कोई नौकरी क्यों नहीं कर लेतीं ?"

"नौकरी के लिए बहुत कोशिश कर चुकी हूँ। मेरा रूप ही मेरा दुश्मन है। एक प्रकार से अभिशाप कह सकते हैं। जहाँ भी नौकरी के लिए इंटरव्यू देने गयी, वहाँ के लोग मुझे होटल ले जाना चाहते थे। मेरे साथ सोना चाहते थे। दरअसल मेरी किस्मत ही खराब है।"

दरोगा साहब काफी देर तक न जाने क्या सोचते रहे। इसके बाद उन्होंने समझौते के स्वर में कहा—"देखिये, यह है थाना। इसके ऊपर मेरा क्वार्टर है। यहाँ आपको रखना उचित नहीं है और संभव भी नहीं है। आपको या तो ससुराल में या माँ के पास जाकर रहना चाहिए।"

जया माँ ने कहा—"मेरे निकट दोनों ही जगह नरक है।"

दरोगा साहब ने कहा—"अगर मेरी बात मानें तो मैं आपको यही सलाह दूँगा कि इस स्थिति में माँ के पास जाना उचित है।"

जया माँ ने कहा—"वहाँ मेरे छोटे भैया-भाभी हैं। वे लोग मुझे देखना भी पसन्द नहीं करते।"

"वे भले ही देखना पसन्द करें, पर वहाँ आपकी सगी माँ तो हैं।"

अब जया माँ क्या कहती ? चुप रह गयी।

दरोगा साहब ने कहा—"कल से आपको न नींद आयी और न आपने भोजन किया। ऐसी स्थिति में आपको किस जिम्मेवारी पर अपने क्वार्टर में रखूँ ? मान लीजिए, कोई दुर्घटना हो जाती है तो मैं कौनसा जवाब दूँगा ?"

थोड़ी देर रुककर पुनः उन्होंने कहा—"आप तैयार हो जाइये। मैं थोड़ी देर बाद आपको आपकी माँ के पास ले चलूँगा। कल रातभर मुझे भी नींद नहीं आयी थी।"

जया माँ ने पूछा—"क्यों ?"

दरोगा साहब ने कहा—"वाह, आप रातभर मेरे कमरे में थीं। मैं कौन-सा मुँह लेकर इस कमरे में रहता ? इसीलिए बाहर एक खटिया पर रातभर करवटें बदलता रहा। खटिया पर सोने की आदत न होने के कारण ठीक से नींद नहीं आयी।"

जया माँ ने कहा—"मेरे लिए व्यर्थ में आपको इतना कष्ट सहना पड़ा।"

दरोगा साहब ने कहा—"आप जल्द तैयार होकर नीचे चली आयें। गाड़ी तैयार है। आपको आपकी माँ के पास पहुँचाकर मैं निश्चिन्त हो जाऊँ।"

--

मैंने पूछा—"इसके बाद ?"

हरिपद में अनेक गुण हैं, यह पहले कह चुका हूँ। दोष केवल इतना है कि कहानी समाप्त करने के पहले ही बीच-बीच में रुपये माँगता है।

क्यों चाहता है ? राँची जाने के लिए। पहले मैं यह रहस्य भाँप नहीं सका था कि वह क्यों बार-बार राँची जाता है। हजार बार सवाल करने पर भी इसने नहीं बताया था। बस, जब इसे रुपयों की जरूरत होती तब टपक पड़ता था।

मैं पूछता—"क्यों, राँची गये थे, क्या हुआ ?"

हरिपद कहता—"हाँ, कल ही वापस आया हूँ। लौटते ही सीधे आपके यहाँ चला आया।"

मैंने कहा—"उसके बाद क्या हुआ, सो बताओ।"

हरिपद आराम से बैठकर कहानी सुनाने लगता है। वही जया के बारे में। जया माँ को जीप में बैठाकर दरोगा साहब सीधे जया माँ के घर ले आये।

उस समय वहाँ लोगों की काफी भीड़ इकट्ठी थी। सरोज सरकार भी अपने चेले-चाँटों के साथ वहीं था। वह रह-रहकर एक ही सवाल कर रहा था—"मेरी बहू कहाँ है ?"

विवाह के दूसरे दिन सरोज सरकार अपनी पत्नी को लेकर अपने घर गया। जाने के बाद से ही पत्नी गायव हो गयी। आखिर गयी कहाँ ? जरूर वह इसी मकान में आयी है। एक वार पहले खोजा जा चुका है। इस वार भी हर जगह खोजा, पर कहीं नहीं मिली। लेकिन उसकी शंका अभी तक दूर नहीं हुई थी। फिर खोजने आया। आते ही सवाल किया--"जया कहाँ है ?"

भीड़ देखकर अनेक पड़ोसी तमाशा देखने के लिए आ गये। सभी को इस वात पर आश्चर्य हो रहा था कि नयी ससुराल से वहू कहाँ भाग गयी। सभी से पूछा गया, पर कोई जवाव नहीं दे सका।

ठीक इसी समय दरोगा साहव अपने साथ जया को लेकर उपस्थित हुए।

जया माँ को गाड़ी से उतरते देख शोभारानी जोरों से रोती हुई पास आयीं। जया माँ भी अपनी माँ से लिपटकर रोने लगी।

जया माँ ने कहा—"माँ, मैं तुम्हारे पास रहूँगी। दूसरी जगह नहीं जाऊँगी।"

माँ समझाने लगीं—"ऐसा नहीं होता, बेटी।"

पुलिस की जीप देखकर सरोज सरकार डर गया था। दरोगा साहव ने घटना का विवरण लोगों को दिया। कैसे गुण्डों से वचाकर उन्होंने अपने यहाँ ले जाकर रखा था।

अपना काम समाप्त करने के वाद दरोगा साहब ने कहा—"अब मेरी ड्यूटी समाप्त। मैंने आपके यहाँ सुरक्षित ढंग से इन्हें पहुँचा दिया। अव आप लोगों के मन में जो आये, कीजिए। मैं चला।"

दरोगा साहब चले गये, पर समस्या का हल नहीं निकला।

शोभारानी अपनी लड़की को देर तक समझाती रहीं। अनेक अनुनय-विनय करती रहीं। अन्त में वोलीं—"ठीक है, चल, मैं तेरे साथ चलती हूँ। अव डर किस बात का ? तू मेरे साथ चल।"

अन्त में सभी इस वात से सहमत हो गये।

एक टैक्सी पर सरोज सरकार और उनके साथी सवार हुए और पीछेवाली टैक्सी में शोभारानी तथा उनकी लड़की जया वैठीं। एक छोटे-से मकान के पास आकर गाड़ी रुक गयी।

शोभारानी को मकान पसन्द आ गया। दो कमरे। वगल में वरामदा और उधर रसोई वनाने की जगह है। घर की स्थिति देखकर शोभारानी प्रसन्न हो गयीं। जया माँ से शोभारानी ने कहा—"यह घर

तो बहुत अच्छा है, जया। न ननद और न सास-ससुर। ऐसा कोई नहीं है जो हमेशा किचकिच करे। तू अपने मन लायक घर-गृहस्थी चला सकोगी। तेरे लिए तो बहुत बढ़िया हुआ।"

चलते समय शोभारानी ने अपने दामाद से कहा—"देखो बेटा, जया का ख्याल रखना। जीवन में कभी अकेली नहीं रही और न घर-गृहस्थी ही सम्हाली। इसके दोष, त्रुटि, घृणा को नजरअन्दाज कर देना। देख लेना, आगे चलकर जया तुम्हारी खूब सेवा करेगी। इसका अधिक ख्याल रखना। इसका कोई नहीं है।"

दोनों को समझाकर शोभारानी वापस चली गयीं।

पर दूसरे ही दिन से मुसीबत पैदा हो गयी।

मैंने पूछा—"कैसी मुसीबत ?"

हरिपद ने कहा—"जया माँ की जवानी जैसा सुन चुका हूँ, अक्षरशः उन्हीं बातों को दुहरा रहा हूँ, सर। पहली रात तो किसी प्रकार गुजर गयी। पिछली रात थाने में जया माँ ठीक से सो नहीं पाई थीं। एक प्रकार से रातभर जागती रहीं। दूसरे दिन बराबर झमेले लगे रहे। हिन्दुओं के विवाह में जितने षट्कर्म होते हैं, उनमें से एक भी नहीं हुआ। यहाँ तक कि दूसरों के विवाह में जया माँ जो कुछ होते देख आयी हैं, उनमें से एक भी नहीं हुआ। न कालरात्रि और न बहू-भात (विवाह की भिन्न-भिन्न रस्में); यहाँ तक कि सोहाग-रात भी नहीं मनायी गयी। एक प्रकार से यह अजीब विवाह हुआ था।

दूसरे दिन दोपहर की बात है। सरोज सरकार खा-पीकर कहीं चले गये थे। उस वक्त घर में जया माँ अकेली थीं।

अचानक सदर दरवाजे की साँकल बजने लगी।

इस आवाज को सुनते ही जया माँ पहले-पहल डर गयीं। संकोच के साथ दरवाजे के पास आयीं और भीतर से पूछा—"कौन है ?"

बाहर से जनानी आवाज आयी—"मैं हूँ बहू, खोलो।"

इतने पर भी जया माँ का भय दूर नहीं हुआ। पुनः पूछा—"मैं यानी कौन हैं आप ?"

बाहर से महिला की आवाज आयी—"मैं हूँ। मकान-मालकिन।"

धीरे से दरवाजा खोलकर जया माँ ने देखा—एक वृद्धा खड़ी है।

वृद्धा ने कहा—"तुम मुझे नहीं पहचानोगी, मैं भी तुम्हें नहीं

पहचानती । सरोज बाबू मेरे किरायेदार हैं । कल पता चला कि सरोज बाबू तुम्हें ब्याह करके यहाँ ले आये हैं, इसलिए तुमसे मिलने चली आयी ।"

जया माँ ने उन्हें आदर के साथ भीतर लाकर कमरे में बैठाया । मकान-मालकिन ने पूछा—"तुम्हारे बाप के घर में कौन-कौन हैं, बहू ?"

जया माँ ने कहा—"घर में मेरी विधवा माँ हैं। पिताजी का निधन काफी पहले हो गया था। इसके अलावा मेरे बड़े भाई साहब अमेरिका में रहते हैं। यहाँ के मकान में छोटे भाई और भाभी हैं।"

वृद्धा ने पूछा—"यह रिश्ता किसने किया ?"

जया माँ ने कहा—"मेरे छोटे भैया ने किया था ।"

वृद्धा न जाने क्यों चिंतामग्न हो गयी। इसके बाद बोली—"तुम्हारे छोटे भैया ने सरोज सरकार के बारे में सारी जानकारी प्राप्त कर ली थी ?"

यह एक अद्‌भुत प्रश्न था।

वृद्धा ने पुनः सवाल किया—"बहू, कहाँ तक पढ़ी हो ?"

जया माँ ने कहा—"बी० ए० पास कर चुकी हूँ ।"

वृद्धा ने कहा—"जब तुम बी० ए० पास हो तब कहीं नौकरी कर लेतीं। क्या बिना व्याह किये तुम्हारा काम न चलता ?"

जया माँ ने कहा—"प्रारंभ से ही मैं नौकरी करना चाहती थी, पर मेरे छोटे भैया ने जबरन यहाँ व्याह कर दिया ।"

इस उत्तर को सुनकर वृद्धा न जाने मन ही मन क्या सोचने लगी। कुछ देर बाद बोली—"पता नहीं बहू, मुझे बात अच्छी नहीं लग रही है। विवाह के पहले लड़के के बारे में अच्छी तरह पता लगाना उचित था ।"

इस बात का समर्थन न पाने पर वृद्धा कहने लगी—"पिछले साल भी सरोज बाबू ने ब्याह किया था और तुम्हारी तरह एक लड़की को यहाँ ले आया था। छह माह बीतने के बाद बहू न जाने कहाँ लापता हो गयी। तुम्हारी तो शादी हो गयी, अब छोटे भैया क्या कर सकते हैं, तुम्हीं क्या कर सकती हो और मैं भी क्या कर सकती हूँ ? जिसके भाग्य में जो लिखा है, उसे कौन दूर कर सकता है ? बहरहाल, जरा सावधानी से रहना बहू। अब मैं चलती हूँ ।"

वृद्धा बिना बुलाये जैसे आयी थी, उसी प्रकार चुपचाप वापस चली गयी। बाद में जब एक दिन माँ मिलने आयीं तब बेटी ने वृद्धा की सारी बातें सुनायीं।

बेटी की जबानी सारी बातें सुनने के बाद माँ क्या कहतीं। मन के दुःख को दबाकर बोलीं—"पता नहीं, भगवान् क्या करना चाहते हैं। जरा सावधानी से रहना। अब क्या कह सकती हूँ? मिल-जुलकर गृहस्थी चलाना। अब चलती हूँ, फिर किसी दिन आऊँगी।"

इतना कहने के बाद माँ चली गयीं।

किसीसे कोई सहायता न पाने तथा अन्य कोई उपाय न रहने के कारण जया माँ कालीघाटवाले मंदिर में जाकर नित्य पूजा करने लगी। शोभारानी कभी-कभी मुलाकात करने चली आती थीं। आते ही पूछतीं—"क्यों बेटी, सब कुशल-मंगल है न? कोई कष्ट तो नहीं है?"

जया माँ झूठ बोलती ताकि माँ को कोई कष्ट न हो। कहती—"नहीं माँ, कोई कष्ट नहीं है।"

माँ ने पूछा—"रोज कालीघाट-मंदिर में पूजा करने जाती हो न?"

"हाँ।"

इसी प्रकार की बातें होतीं। हजार कष्ट होने पर भी जया माँ अपनी माँ के सामने मुँह खोल नहीं पाती थी। कहने से होगा क्या? माँ इसके लिए कर क्या सकती है, सिर्फ मन मसोसकर रह जायगी। कुछ करने का साहस भी तो माँ में नहीं है।

इसी प्रकार जया माँ की गृहस्थी चल रही थी। इस समय तक जया माँ के यहाँ मैं नहीं आया था। उन दिनों मुझे यह नहीं मालूम था कि कलकत्ते में रहनेवालों का घरेलू जीवन कितना अवसादपूर्ण होता है, क्योंकि मेरा अनुभव फुटपाथ का था। मैं फुटपाथवाली जिन्दगी से परिचित था। बाद में जया माँ के यहाँ आने पर मेरी आँखें खुल गयीं।"

मैंने पूछा—"आगे? इसके बाद क्या हुआ?"

"एक दिन सरोज एक नया प्रस्ताव लेकर आया। जया माँ पहले कुछ समझ नहीं पाईं।

सरोज ने कहा—"मुझे पता चला है कि कभी स्टेज पर तुम नृत्य वगैरह करती थी।"

"किसने कहा तुमसे ?"

"तुम्हारे छोटे भैया ने ही एक बार कहा था।"

जया ने कहा—"कॉलेज के सालाना जल्सों में कई बार नाच चुकी हूँ। अब तो वह सब भूल गयी हूँ।"

सरोज ने कहा—"एक बार जिसे सीखा जाता है, फिर कहीं वह भूलता है ? प्रैक्टिस नहीं है, कह सकती हो।"

जया ने पूछा—"आज इतने दिनों बाद नाच की चर्चा क्यों कर रहे हो ? क्या मुझे कहीं नाचना पड़ेगा ?"

सरोज ने कहा—"हाँ, एक सज्जन मुझसे यही कह रहे थे।"

"कौन है वह ?"

"मेरे एक मित्र हैं। पार्क स्ट्रीट में उन्होंने एक नया रेस्तरां खोला है। वहाँ नाचने पर ढाई हजार मासिक वेतन मिलेगा।"

जया चुप रही। मन ही मन सोचने लगी—"उसे ग्राहकों की भीड़ एकत्रित करने के लिए नाचना होगा। मेरे जरिये रुपये कमाने की इच्छा है।"

धीरे से बोली—"लेकिन इसके पहले कभी जनता के सामने नाचने का अवसर नहीं मिला है।"

"पहले अवसर नहीं मिला है तो क्या हुआ ? अब तो मिल रहा है। अब नाच सकती हो। नृत्य के बाद फ्री डिनर देंगे।"

जया ने कहा—"और घर पर ? घर में कौन खाना पकायेगा ? रसोई बनाने के लिए यहाँ है कौन ?"

सरोज ने कहा—"पहले यह बताओ कि तुम राजी हो या नहीं ? रसोई बनाने के बारे में तुम्हें फिक्र करने की जरूरत नहीं है। भोजन तो होटल में भी किया जा सकता है। असली सवाल यह है कि तुम नाचने के लिए तैयार हो या नहीं ?"

फिर भी जया मन ही मन उधेड़बुन करने लगी। बाद में बोली—"मैं नाच सकूँगी या नहीं, यही सोच रही हूँ।"

सरोज ने कहा—"मगर मैंने उन्हें आश्वासन दे दिया है।"

"मुझसे बिना पूछे ऐसा क्यों किया ?"

"इससे क्या हुआ ? कुछ दिनों तक मैं तुम्हारे साथ रहूँगा। और जब तुम्हारा संकोच दूर हो जायगा तब सब ठीक हो जायगा।"

जया ने पूछा—"नृत्य के लिए विशेष पोशाक की जरूरत होती है।"

सरोज ने कहा—"इसके लिए क्यों चिन्ता करती हो? दर्जी को बुलाकर वे बनवा देंगे। सारा खर्च वे देंगे।"

बात यहीं समाप्त जरूर हो गयी, पर इस बारे में एक अर्से तक बहस चलती रही। जया माँ के लिए यह नवीन अभिज्ञता थी। सरोज अपने साथ उन्हें लेकर होटल आया था। उस होटल का नाम है—'ला ब्लू।' यहाँ नाश्ता और भोजन का ही प्रबंध नहीं था, बल्कि शराब की भी समुचित व्यवस्था थी। यहाँ अधिकतर लोग शराब पीने के लिए आते थे। इस कलकत्ता में इतने शराबी हैं, इसकी जानकारी जया माँ को नहीं थी। उनका ख्याल था कि सरोज और उनके मित्र जैसे लोग शराब पीते हैं। लेकिन यहाँ का दृश्य देखकर उनकी धारणा बदल गयी। ग्राहकों में हर तरह के, हर उम्रवाले लोग प्यासी नजरों से उसकी ओर देखते हैं और गिलास में शराब की चुस्की लेते हैं। यहाँ तक कि इन ग्राहकों में ७०-८० वर्ष के बूढ़े भी उपस्थित हैं।

जया के लिए नृत्यवाली जो पोशाक होटल की ओर से बनवायी गयी थी, वह काफी सोच-समझकर बनवायी गयी थी। दोनों हाथ, पीठ और पेट का अधिकांश भाग नग्न था।

कभी-कभी जब होटल बन्द हो जाता तब उसे अपने साथ ले जाने के लिए सरोज आता था। उस समय दोनों वहीं भोजन करते थे। इनके साथ-साथ अन्य लोग भी खाते थे। नाना प्रकार के आइटम परोसे जाते थे। बाजार में जितने प्रकार की मछलियाँ प्राप्त होतीं, वे सभी भिन्न-भिन्न ढंग से तैयार की जाती थीं। कई प्रकार के सूप तैयार किये जाते थे। चिकन की बहार का क्या पूछना। इन सबके ऊपर शराब होती। शराब के प्रति हर छोटे-बड़े की दृष्टि रहती है।

शराब की चुस्की लेने के बाद सरोज ने कहा—"जानती हो, तुम्हारा आज का नृत्य लोगों को बहुत पसन्द आया है। शायद तुमने देखा होगा कि एक बूढ़ा सिर पर शराब का गिलास रखे नृत्य कर रहा था। नाचते-नाचते स्वयं ही गिर गया।"

यह दृश्य जया देख चुकी थी, पर इस समय उसने जवाब नहीं दिया।

सरोज ने कहा—"तुम्हारे लिए एक सेट पोशाक और तैयार हो रही है। बिल्कुल लाल ब्रोकेड की। गहरे लाल रंग की। उसे पहनकर नाचने पर ग्राहकों की भीड़ बढ़ेगी।"

शराव की चुस्की लेने के कारण जया जरा सरूर में आ गयी थी। वोली—"मुझे यह नौकरी पसन्द नहीं है।"

"क्यों ? पसन्द क्यों नहीं है ? कम वेतन है इसलिए ?"

जया ने कहा—"यह वात नहीं है। दरअसल मेरी माँ यह नहीं चाहती कि इस तरह की पोशाक पहनकर नाचूँ, जिसमें शरीर का काफी अंश दिखाई देता हो।"

सरोज क्रुद्ध हो उठा। उसने पूछा—"इस वात का पता तुम्हारी माँ को कैसे चला ? क्या वे हमारे यहाँ आयी थीं ? क्या तुमने उनसे यहाँ के बारे में कुछ कहा था ?"

जया ने कहा—"नहीं। पड़ोस में कोई सज्जन रहते हैं, उनके लड़के की जवानी उन्हें पता चला था। उक्त सज्जन की पत्नी ने माँ को सारा समाचार सुनाया है।"

सरोज ने कहा—"दूसरों की वातों पर ध्यान देने से काम नहीं चलता।"

जया ने कहा—"तुम्हारा चले या न चले, पर मुझे यह सव सुनने में बुरा लगता है। अगर कोई मेरी बुराई करता है तो मुझे बुरा लगता है।"

सरोज ने कहा—"अच्छा होगा कि तुम इन सब बातों की ओर ध्यान मत दो। वस, झंझट खत्म।"

जया ने कहा—"मेरी बुराई सुनने पर माँ को बुरा लगता है। आखिर माँ को कैसे समझाऊँ ?"

सरोज ने कहा—"मेरे साथ तुम्हारा विवाह हुआ है। तुम्हारी माँ से कौन क्या शिकायत करता है, इसे लेकर परेशान होने की जरूरत नहीं।"

जया ने कहा—"मेरे कारण अगर माँ को तकलीफ होती है तो क्या मुझे दुःख नहीं होगा ?"

सरोज ने कहा—"आखिर तुम्हारी माँ हमारे यहाँ क्यों आती है ? न आयें।"

यह वात सुनकर जया नाराज हो गयी। बोली—"तुम्हारे साथ मेरा विवाह हुआ है तो क्या मेरे यहाँ माँ आ नहीं सकती ? जाने के कारण क्या मैं माँ के लिए परायी हो गयी ?"

इसी ढंग की बातें इन दोनों में बार-बार होती रहीं। प्रत्येक बार जया कहती रही कि अब वह होटल में नहीं नाचेगी, पर हर बार सरोज उस पर दबाव डालता रहा। फलतः जया को झुकना पड़ता था। अधिक रात तक नाचने पर भी जया प्रातःकाल जल्द सोकर उठती। स्नानादि से निबटकर चौड़ी लाल किनारेवाली साड़ी पहनकर काली-मंदिर दर्शन करने चली जाती। उस वक्त कोई यह नहीं कह सकता था कि यह वही महिला है जो पिछली रात को शराबियों के सामने नृत्य करती है। लोग इसकी कला को देखकर ताली बजाते हैं।

कभी-कभी ऐसा भी हुआ है कि मंदिर से वापस आते समय गृहस्थी का सामान खरीद लायी। रात का भोजन होटल में जरूर होता था, पर दिन के वक्त केवल खाने के लिए होटल जाना अच्छा नहीं लगता। घर पर बना लेने पर होटल तक आने-जाने के श्रम से बचत हो जाती थी।

उसे दिन के समय सरोज के खाने की चिन्ता नहीं रहती थी। वह इधर-उधर कहीं भी खा लेता था और रात को दोनों एक साथ होटल में डिनर लेते थे।

फिर एक अजीब घटना हो गयी। पोस्टमैन एक पत्र दे गया। पत्र पढ़ने के बाद जया माँ आश्चर्यचकित रह गयी। किसी अखबार में प्रकाशित विज्ञापन देखकर एक नौकरी के लिए उसने आवेदन-पत्र भेजा था, पर यह कभी कल्पना नहीं कर सकी थी कि वहाँ से जवाब भी आयेगा। आवेदन-पत्र भेजने पर जवाब भी आता है, यह ज्ञात नहीं था। आवेदन-पत्र भेजने के बारे में उसने सरोज से कोई चर्चा नहीं की थी।

'गन एण्ड सेल फैक्टरी' की ओर से आये पत्र में सूचित किया गया था कि अगले बुधवार को १२ बजे, इस कार्यालय में साक्षात्कार के लिए उपस्थित होने का कष्ट करें।

पत्र पढ़ने के बाद जया माँ ने अनुभव किया कि यह पत्र भगवान् का एक आशीर्वाद मात्र है। अब शायद नित्य उस विचित्र पोशाक को पहनकर होटल में नाचने से छुट्टी मिल जायगी। असंख्य पुरुषों की कामुक दृष्टि उसके नग्न शरीर से अब नहीं टकरायेगी। सबसे बड़ी बात यह होगी कि सारी घटना पल्लवित होकर माँ के कानों तक नहीं पहुँचेगी।

सरोज के आफिस चले जाने पर जया माँ ने खा-पीकर सदर दरवाजे में ताला लगाया और तव गन एण्ड सेल फैक्टरी की ओर रवाना हो गयी। दोपहर १२ वजे के पहले वहाँ पहुँचना था।

यहाँ आने पर जया ने देखा कि उसकी तरह अनेक महिलाएँ इंटरव्यू देने आयी हैं। देखने में सभी अच्छी लग रही थीं। एक-एक करके इंटरव्यू के लिए पुकार होती रही।

कुछ देर वाद जया माँ की पुकार हुई। कमरे के भीतर प्रवेश करते ही उन्होंने देखा कि तीन-चार व्यक्ति गंभीर मुद्रा में वैठे हैं। वह उन लोगों के सामने रखी कुर्सी पर बैठ गयी। एक के वाद एक करके प्रश्न पूछे गये।

"इसके पहले आप कहाँ सर्विस करती रहीं ?"

"कहीं नहीं।"

"उतनी दूर से यहाँ तक आने में आपको दिक्कत नहीं होगी ?"

"नहीं।"

"आपके कितने वच्चे हैं ?"

"एक भी नहीं।"

"अच्छा, तो अव आप जा सकती हैं। आपका चुनाव अगर हो गया तो ७-८ दिन के भीतर आपके पास नियुक्ति-पत्र भेज दिया जायगा।"

इंटरव्यू देने के वाद जया माँ सीधे घर चली आयी। शाम के वाद नियमानुसार 'ला ब्लू' होटल में जाना पड़ा। नित्य की भाँति दादा वावू के साथ एक ही टेबुल पर ह्विस्की और भोजन करना पड़ा। इसके वाद वहाँ से घर आ गयी।

दादा वावू को इसका आभास तक नहीं हुआ कि आज जया माँ किसी आफिस में इंटरव्यू देने गयी थीं। सप्ताह में एक दिन ड्राइ डे होता है। उस दिन जया माँ को छुट्टी मिलनी चाहिए, पर ऐसा नहीं होता। उस दिन दादा वावू के यूनियन के सदस्य घर आते थे। घर पर भोजन वनाना पड़ता था। चटकदार भोजन वनाने की जिम्मेदारी जया माँ को दी जाती थी। उन दिनों हरिपद इस घर में नहीं आया था। जया माँ को सारा काम अकेले करना पड़ता था। घर में झाड़ू लगाना, कपड़े साफ करना, कालीघाट स्थित मंदिर में दर्शन करना और शाम को 'ला ब्लू' होटल में शरावियों के सामने नाचना पड़ता था।

दादा बाबू कहते—"जरा मेहनत करो। बिना श्रम किये कहीं आमदनी बढ़ती है ? मुझी को लो। दिन-रात कितना श्रम करता हूँ।"

जया माँ ऐसे प्रश्नों का जवाब नहीं देती। जवाब देने का अर्थ है—विवाद बढ़ाना। जितनी बात बढ़ती जायगी, उतनी अशांति बढ़ेगी। कोई भी जान-बूझकर अशांति बढ़ाना नहीं चाहता। इधर जया माँ मन ही मन सोचती कि कहीं कोई नौकरी मिले तो इस पाप से छुटकारा मिले। यही वजह है कि जया माँ नियमित रूप से मंदिर जातीं और काली माँ से कहतीं—"माँ, अब मुक्ति दो। अब और कितने दिनों तक कष्ट दोगी ? अब मुझसे बर्दाश्त नहीं हो रहा है।"

एक दिन दोपहर को दरवाजे की घंटी बजने लगी। इस वक्त कौन आया है ? ऐसे समय तो कोई आता नहीं। दोपहर के वक्त जया माँ जरा अकेली रहती हैं। बेचैनी से इस समय को गुजारने के लिए वे शैशव से लेकर अब तक के जीवन की तमाम वारदातों को सोचने लगती हैं। आखिर क्या हुआ ? क्यों ऐसा हुआ ? कैसे हुआ ? जबकि वह एक साधारण महिला की तरह जीवन जीना चाहती थी। आम लोगों की तरह वह भी एक स्वाभाविक आदमी के साथ सहज तथा स्वाभाविक सम्पर्क रखना चाहती थी।

पुनः घंटी बज उठी।

जया ने सोचा—शायद माँ आयी है। जल्दी से जाकर उसने दरवाजा खोला तो देखा—सामने एक अपरिचित व्यक्ति खड़ा है।

"आप ?"

"क्या आप मुझे नहीं पहचान पायीं, मिसेज सरकार ?"

दिमाग पर काफी जोर देने पर भी जया माँ उन्हें नहीं पहचान सकीं।

"इतनी जल्दी भूल गयीं ? अभी उस दिन ही तो······"

पर जया नहीं पहचान पायी।

"अभी कुछ दिन पहले 'गन एण्ड सेल' फैक्टरी में मैंने आपसे इंटरव्यू लिया था। क्या यह भी भूल गयीं ?"

अब सामान्य धुंधली-सी रेखा मन में आयी। जिस इंटरव्यू में

चार-पाँच आदमी बैठे हों, उनमें सभी को पहचानकर स्मृति में रखना क्या संभव है ?

जया ने कहा—"आप यहाँ कैसे आये ? इस समय मेरे पति घर पर नहीं हैं।"

आगन्तुक ने कहा—"आपके पति नहीं हैं तो इससे क्या हुआ ? आप तो हैं। मैं आपसे ही मिलने आया हूँ। आपकी वह नौकरी—"

जया इसी आनन्दपूर्ण समाचार को सुनने के लिए उन्मुख थी। उत्सुकतावश पूछ बैठी—"तो क्या यह नौकरी मुझे मिल जायगी यानी सचमुच मिलेगी ?"

आगन्तुक ने कहा—"सचमुच मिलेगी। मिलने ही वाली है जानकर तो मैं आपके पास आया हूँ। शायद यह समाचार पाकर आप प्रसन्न हो उठें। इसलिए तो मैं……"

जया ने कहा—"आप ऐसे वेवक्त आये हैं कि मैं आपका स्वागत कैसे करूँ, समझ नहीं पा रही हूँ। मेरे घर में कोई है भी नहीं।"

"नहीं है ? तब तो ठीक है। एकान्त में आपसे शान्ति से बातें की जा सकती हैं। आजकल ट्राम, बस में इतनी भीड़ रहती है कि जी खोलकर बातें करने की कौन कहे, बैठने की जगह तक नहीं मिलती। एकान्त में कहीं बैठने की जगह भी नहीं मिलती। घबराइये नहीं, आपको यह नौकरी मिल जायगी।"

अभी तक आगन्तुक की बातों पर जया को विश्वास नहीं हो रहा था। जया को लगा जैसे शायद काली देवी की कृपा हो गयी है। इतने दिनों से प्रार्थना करती आयी हैं, पूजा करती हैं, अब सब सार्थक हो हो गया है।

"आपके पति कब तक आ जायेंगे ?"

जया ने कहा—"उन्हें लौटने में देर होगी। शायद रात साढ़े दस बजे तक आयेंगे।"

"ठीक है, तब चलिये, किसी एकान्त स्थान पर बैठा जाय जहाँ आराम से बातें हो सकें।"

"लेकिन कहाँ ? कलकत्ते में एकान्त स्थान कहाँ है ?"

आगन्तुक ने कहा—"रुपये खर्च करने पर कलकत्ता शहर में एकान्त स्थानों की कमी नहीं होगी। मैं आपको एक ऐसी जगह ले चल सकता हूँ जहाँ जाने पर आप पहचान नहीं सकेंगी कि कलकत्ता में ऐसी जगह है।"

जया ने कहा—"लेकिन……"

"लेकिन-वेकिन का चक्कर छोड़िये। अधिक सोचने-विचारने की जरूरत नहीं। चलिये, तैयार हो जाइये।"

जया ने कहा—"इस वक्त मेरे पास अधिक रुपये नहीं हैं।"

आगन्तुक ने जया की पीठ को दबाते हुए कहा—"रुपयों की चिन्ता करने की जरूरत नहीं। मैं जब आपके साथ हूँ तब आप इस ओर से बेफिक्र रहिये। लगता है, आपको मुझ पर यकीन नहीं है ?"

जया ने पुनः पूछा—"सचमुच मेरी नियुक्ति होगी ?"

"मैं देख रहा हूँ कि अभी तक आपको मेरी बात पर विश्वास नहीं हुआ।"

"अच्छा, यहाँ कितना वेतन देंगे ?"

आगन्तुक ने कहा—"यह सब बातें रास्ते में होंगी। मेरे ख्याल से आठ सौ से कम आपको नहीं मिलेगा। कुल मिलाकर आपको तेरह सौ दिये जायेंगे।"

जया को लगा जैसे उन्हें चाँद मिल गया हो। अगर यह नौकरी उसे मिल जाय तो सबसे अधिक प्रसन्नता माँ को होगी। पहले माह का वेतन पाते ही वह काली मंदिर में जाकर देवी की पूजा करेगी। वहाँ से प्रसाद लेकर सीधे माँ के पास जायगी। उसे अनाहूत की तरह आया देखकर माँ चौंक उठेंगी।

पूछेंगी—"क्यों री, सवेरे-सवेरे कैसे चली आयी ?"

जया कहेगी—"माँ, मुझे नौकरी मिल गयी है। यही समाचार देने आपके पास आयी हूँ।"

"तुझे नौकरी मिल गयी ?"

जया कहेगी—"हाँ माँ, इतने दिनों से काली मंदिर जा रही हूँ, अब मेरा दर्शन सार्थक हुआ।"

यह सुनकर शायद माँ कहेंगी—"खैर, अब मेरी चिन्ता दूर हुई। तेरे बारे में निरन्तर सोचते रहने के कारण मुझे ठीक से रात को नींद नहीं आती।"

कुछ देर बाद माँ पुनः पूछेंगी—"अच्छा, यह तो बता कि इस नौकरी में तुझे कितना वेतन देंगे ?"

जया कहेगी—"प्रारंभ में सब मिलाकर तेरह सौ देंगे।"

"तेरह सौ ?" रुपये की संख्या दुहराते हुए माँ प्रसन्न हो उठेंगी।

अचानक गाड़ी के पहिये गड्ढे में गिरने के कारण झटका लगा। गाड़ी साथ चल रहे सज्जन की है। इन्हींका ड्राइवर गाड़ी चला रहा है। कलकत्ते की सड़कें ही ऐसी हैं कि बिना हिचकोला के गाड़ी चल नहीं सकती।

जया इस झटके के बाद कल्पना-लोक से नीचे चली आयी। सहसा 'ला ब्लू' होटल की शाम याद आ गयी। कितने कुत्सित ढंग से वहाँ अंग-प्रदर्शन करना पड़ता है। सरोज के साथ शराब पीना पड़ता है।

आगन्तुक पास आकर सटकर बैठ गये। बोले—"आप चुप क्यों हैं? कुछ बातचीत कीजिए।"

जया ने कहा—"क्या सचमुच मुझे यह नौकरी मिल जायगी? वाकई मुझे तेरह सौ रुपये पगार मिलेंगे?"

आगन्तुक ने कहा—"कैसे समझाऊँ? आपको अभी तक विश्वास नहीं हुआ? उस दिन तो आपने देखा होगा कि कितनी महिलाएँ इंटरव्यू देने आयी थीं, उनमें से केवल आपका चुनाव हुआ। आखिर क्यों? आपका रूप देखकर नहीं, बल्कि गुण देखकर आपको चुना गया है।"

"आप लोगों ने मेरा कौनसा गुण देखा?"

आगन्तुक ने कहा—"आप बी० ए० पास हैं। बी० ए० अनेक महिलाएँ हैं। इस ओर हम लोगों ने कोई तवज्जुह नहीं दी। हम लोग स्वभाव-चरित्र पर अधिक ध्यान देते हैं।"

"मेरा स्वभाव-चरित्र कैसा है, इसके बारे में आप लोगों ने क्या अनुमान लगाया? क्या बाहर से किसीका स्वभाव-चरित्र समझा जा सकता है?"

आगन्तुक ने कहा—"हम लोग भाँप लेते हैं। अगर इतना ज्ञान न रहे तो सिलेक्शन-बोर्ड में हमें क्यों रखते हैं?"

"मेरा स्वभाव-चरित्र आप लोगों को अच्छा लगा था?"

आगन्तुक ने कहा—"यही समाचार सुनाने के लिए ही तो मैं आपके यहाँ आया हूँ।"

जया को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि गाड़ी पार्क स्ट्रीट की ओर मुड़ गयी। यह तो जानी-पहचानी सड़क है, नित्य इधर आती है। फिर अजीब पोशाक पहनकर शाम से लेकर रात तक नाचती है।

'ला-ब्लू' होटल के पास आने पर वह डर गयी। लेकिन नहीं,

गाड़ी आगे बढ़कर बायीं ओर रुक गयी। आगन्तुक पहले गाड़ी से उतरकर बोले—"चलिये, उतरिये।"

जया उतर रही थीं। आगन्तुक ने उनके हाथ को पकड़कर सहारा दिया। जया ने अनुभव किया कि आवश्यकता से अधिक जोर लगाकर उन्होंने हाथ दबाया है।

इसके बाद दोनों होटल के भीतर आये। दोपहर के वक्त इस तरह के होटल में जया कभी नहीं आयी थीं। भीतर प्रवेश करते ही बड़ा अँधेरा लगा। अगर आगन्तुक हाथ पकड़कर न चलते तो वह किसी मेज या कुर्सी से टकराकर गिर पड़ती।

आगन्तुक ने कहा—"मेरा हाथ पकड़कर आप आहिस्ता-आहिस्ता चले आइये। घबराइये नहीं।"

जया उनके सहारे आगे बढ़ रही थीं। इसके बाद एक सीढ़ी के पास आकर उक्त सज्जन ने कहा—"अब ऊपर चढ़िये। मेरे हाथ को पकड़कर दूसरी मंजिल तक चले आइये।"

जया उनके हाथ को पकड़कर चढ़ने लगी। चारों ओर घना अँधेरा था। अब इस अँधेरे को आँखें सह्य करने लगी थीं। इसी बीच उक्त सज्जन ने दो पेग ह्विस्की और दो बोतल सोडा लाने का आर्डर दिया।

अब आगन्तुक सज्जन ने कहा—"आपसे बिना पूछे मैंने ह्विस्की का आर्डर दे दिया। आप पियेंगी न? आगे कभी ह्विस्की पी चुकी हैं?"

जया इस प्रश्न का क्या जवाब देती। बोली—"नहीं।"

सज्जन ने कहा—"कोई हर्ज नहीं। एक दिन पीने से कोई दोष नहीं होता।"

"सर तो नहीं चकरायेगा?"

"सर नहीं चकरायेगा, बल्कि हल्का हो जायगा। मुमकिन है कि आप और अधिक पीना चाहेंगी।"

जया माँ ने कहा—"न जाने क्यों मुझे डर लग रहा है।"

"इसमें डरने की क्या बात है? फिर मैं तो आपके पास ही हूँ। अगर यह खराब चीज होती तो साहब और मेम इसे क्यों पीते? उधर देखिये, न जाने कितने साहब तथा मेम पी रहे हैं।"

जया ने नजरें उठाकर उधर देखा—चारों ओर सचमुच यही दृश्य था। ऐसा नहीं लगता था कि यह कलकत्ता शहर है। इसी

कलकत्ता में न जाने कितने गरीब, कितने भिखमंगे, कितने अन्धे, कितने लँगड़े घूमते रहते हैं, लेकिन यहाँ का रंग ही कुछ अलग है। यह होटल 'ला-ब्लू' से कहीं बड़ा है।

वेयरा आकर दो पेग शराव रख गया। साथ ही दो बोतल सोडा भी था। उक्त सज्जन ने दोनों गिलासों में सोडा उँड़ेला। अपने गिलास में मुँह लगाकर एक घूँट शराब पीने के बाद उन्होंने पूछा—"आप भी लीजिए। क्या सोच रही हैं? डरने की कोई बात नहीं है। मैं तो आपके साथ हूँ।"

फिर भी जया का ऊहापोह दूर नहीं हुआ। अन्त में काफी साहस के साथ हल्का घूँट उन्होंने भरा।

यह देखकर सज्जन प्रसन्न हो उठे। कहा—"लीजिए, और लीजिए। कुछ नहीं होगा। डर क्यों रही हैं जबकि मैं साथ हूँ?"

जया ने पूछा—"आपकी घड़ी में कितने वजे हैं?"

सज्जन ने पूछा—"समय क्यों पूछ रही हैं? क्या कहीं जाना है? आपने तो कहा था कि आपके पति रात साढ़े दस बजे के पहले घर नहीं आते।"

जया ने कहा—"यों ही पूछ रही हूँ।"

बाद में सज्जन के आग्रह करने पर जया ने पुनः गिलास में एक वार मुँह लगाया।

सज्जन ने पूछा—"अव कैसा अनुभव कर रही हैं? सर कुछ हल्का हुआ?"

इस प्रश्न का उत्तर देने के पहले न जाने कहाँ से एक अपरिचित व्यक्ति उसके टेबुल के पास आकर खड़ा हो गया। उसने बिना किसी संकोच के पूछा—"शायद आप श्रीमती जया सरकार हैं न?"

जया चौंक उठी। पूछा—"क्षमा करें, मैं आपको पहचान नहीं सकी।"

उस अपरिचित व्यक्ति ने कहा—"जरूर, आप मुझे नहीं जानती हैं, पर मैं आपको अच्छी तरह पहचानता हूँ।"

"आप मुझे कैसे पहचानते हैं?"

उस व्यक्ति ने कहा—"आपको स्टेज पर अभिनय करते देख चुका हूँ।"

"अभिनय?"

"जी हाँ। आपने कभी आफिस क्लब में अभिनय किया था ?"

जया ने कहा—"हाँ, दो-चार बार स्टेज पर काम कर चुकी हूँ। वह सामान्य भूमिका थी। उसका कोई महत्त्व नहीं है।"

उस व्यक्ति ने कहा—"लेकिन मुझे आपका पार्ट बहुत अच्छा लगा था। यही वजह है कि यहाँ आपको देखते ही मैं तुरत पहचान गया। क्या आप हमारे क्लब में अभिनय करना पसन्द करेंगी ?"

जया अवाक् रह गयी।

थोड़ी देर बाद पूछा—"आप लोगों के क्लब का क्या नाम है ?"

उस व्यक्ति ने कहा—"हम लोगों के क्लब का नाम आफिस क्लब है।"

"आप लोगों का आफिस क्या करता है ?"

उस व्यक्ति ने कहा—"अगर आप कृपा करके उस काउण्टर के पास चलें तो अच्छा हो। वहाँ रोशनी है। वहाँ मैं अपने आफिस का पता लिखकर आपको दे दूंगा। चलिये, उठिये।"

इसके बाद उस व्यक्ति ने टेबुल के एक ओर बैठे उक्त सज्जन से कहा—"कृपया क्षमा करें। मैं एक मिनट के लिए आपके साथी को काउण्टर तक ले जा रहा हूँ। अपने आफिस का पता इन्हें देते ही छोड़ दूंगा।"

सज्जन महाशय ने कोई जवाब नहीं दिया। जया को अपने साथ लेकर वह व्यक्ति नीचे के काउण्टर के पास आकर खड़ा हुआ। जब जया पास आयीं तब उसने कहा—"वाकई मैं आपको पहचानता हूँ। एक विशेष कारण से आपको यहाँ बुला लाया। आप मिस्टर सिन्हा के साथ यहाँ क्यों आयी हैं ?"

जया चकित भाव से बोली—"मिस्टर सिन्हा कौन हैं ?"

"जिसके पास बैठकर आप शराब पी रही थीं।"

जया ने कहा—"मैं उनका नाम नहीं जानती।"

"जब आप उनका नाम तक नहीं जानतीं तब यहाँ कैसे आ गयीं ? कितने दिनों से आप इन्हें जानती हैं ?"

जया ने कहा—"आज ही उनके साथ मेरा परिचय हुआ है। यही करीब दो घंटा पहले।"

"इनके साथ अचानक कैसे परिचय हुआ ?"

जया ने कहा—"वे स्वयं ही आज दोपहर को मेरे घर आये थे।

इसके वाद उन्होंने कहा कि जरा एकान्त में आपसे कुछ बातचीत करनी है और फिर यहाँ ले आये।"

"जान न पहचान, बड़ी बी सलाम। उन्होंने कहा और आप इनके साथ चली आयीं। आपके घर में कौन-कौन हैं ?"

जया ने कहा—"मेरे पति हैं। इस वक्त वे अपने आफिस में हैं। मैं घर में ताला लगाकर आयी हूँ।"

"इसका यह अर्थ हुआ कि इसके पूर्व इनसे आपका कोई परिचय नहीं था ?"

जया ने कहा—"था, पर बहुत मामूली।"

"मतलब ?"

जया ने संक्षेप में 'गन एण्ड सेल' फैक्टरी में दिये दरख्वास्त से लेकर इंटरव्यू तक की सारी रामकहानी सुनायी।

"आपने इन्हें ठीक से पहचान लिया कि यही वहाँ थे या इसने अपना गलत परिचय देकर आपके यहाँ चला आया ? बहरहाल आप सावधान रहिये। यह असली व्यक्ति नहीं है। ऐरे-गैरे के कहने पर किसी अपरिचित के साथ इस तरह आपको नहीं आना चाहिए। यह जो मिस्टर सिन्हा हैं, तीन-चार बार जेल की सजा भुगत चुके हैं। अब आप जल्दी से अपने घर वापस चले जाइये।"

एक तो तीन घूँट शराब पेट में जाकर उथल-पुथल मचा रही थीं, तिस पर इस अप्रत्याशित संकट से वे घबरा उठीं। कैसे क्या करूँ यह समझ नहीं पायीं। पूछ बैठीं—"भाग जाऊँ ?"

"जरूर भाग जाइये। अब एक मिनट के लिए यहाँ मत ठहरिये। अगर अकेले जाने में डर लगता हो तो मैं आपको आपके घर तक छोड़ आ सकता हूँ।"

जया द्विधा अनुभव करने लगीं।

उस व्यक्ति ने कहा—"मैं मिस्टर सिन्हा को अच्छी तरह से जानता हूँ। हजरत कई बार जेल की हवा खा चुके हैं, पर अभी तक अपनी आदत छोड़ नहीं सके हैं। चलिये, मैं आपको घर तक पहुँचा आऊँ।"

इसके वाद दोनों जल्दी से होटल के वाहर आये और एक टैक्सी को रोककर चल पड़े। गाड़ी पर वैठते ही उस व्यक्ति ने पूछा—"आपका मकान किस ओर है ?"

जया माँ ने एक ओर इशारा करते हुए निर्देश दिया।"

मैंने पूछा—"इसके बाद ?"

हरिपद ने कहा—"आज यहीं तक रहने दीजिए सर। इसके बाद किसी दिन पुनः आऊँगा।"

हरिपद का स्वभाव ऐसा है। कहानी कहते-कहते वह ऐसी जगह ले जाकर रोक देता है, आगे क्या हुआ यह जानने के लिए मन छटपटाता रहता है। और ठीक ऐसे मौके पर उसे जरूरी काम याद आता है।

मैंने कहा—"इसी मौके पर तुम्हें जरूरी काम याद आया ? इसके बाद क्या हुआ, यह तो बताओ ?"

हरिपद ने कहा—"आप मुझे स्वार्थी, गँवार आदि समझते हुए क्षमा कर दें। अगली बार जब आऊँगा तब पूरी कहानी सुनाऊँगा। आप अब तक जितना सुना चुका हूँ, उसे लिख लीजिए। बाद में जब आऊँगा तब बाकी घटनाएँ सुना दूंगा।"

लाचारी में उसे छोड़ दिया।

इसके बाद एक अर्से तक उसका पता नहीं चला। मेरी लेखनी रुक गयी। कहानी को आगे बढ़ा नहीं पा रहा था। वह व्यक्ति कौन था जो होटल से जया को लेकर उसके घर तक पहुँचा गया ? इसमें कौन-सा राज है ? अपनी गाँठ से रकम खर्च करके कोई किसी महिला को टैक्सी से क्यों पहुँचायेगा ? यह जानने का कोई उपाय नहीं रहा।

आखिर एक दिन हरिपद आया। काफी दिनों बाद आया। हरिपद की प्रतीक्षा करते रहने के कारण इस कहानी को पूरी करने की आशा छोड़ चुका था। आखिर सम्पादकजी कब तक कहानी पाने के लिए मेरी प्रतीक्षा करेंगे ?

इस बार हरिपद ने बड़े लज्जित ढंग से कहा—"सर, मुझसे अपराध हो गया है। कृपया क्षमा कर दीजिए।"

"अच्छा, यह तो बताओ कि तुम गये कहाँ थे ?"

हरिपद ने कहा—"जी, रांची गया था।"

मैंने पूछा—"आज तुम एक बात बताओ। आखिर तुम दनादन रांची क्यों जाते हो ? रांची में कोई रिश्तेदार है क्या ? मेरी समझ से रांची के पागलखाने में तुम्हारा कोई जरूर है। इस महीने में कई बार तुम रांची गये और आये। आखिर वहाँ तुम्हारा कौन है ?"

हरिपद ने कहा—"आपको यह बात अच्छी तरह मालूम है कि इस दुनिया में मेरा अपना कोई नहीं है। अपने बारे में मैं आपको सब

कुछ बता चुका हूँ। मैं फुटपाथ पर पड़ा रहता था। फुटपाथ ही मेरा घर-गृहस्थी सब कुछ था। जया माँ मुझे फुटपाथ से उठाकर अपने घर ले आयीं। राँची में मेरा अपना कोई नहीं है।"

उस समय तक हरिपद जया के आश्रय में नहीं आया था। यह सब घटनाएँ उसके आने के पहले की हैं। इन बातों को जया फुरसत के समय इसे बताती रहीं।

जो व्यक्ति जया को होटल से निकालकर उसे उसके घर तक पहुँचा गया था, उसका नाम तक वह नहीं जानती थी।

उस दिन घर तक पहुँचाने के बाद उस व्यक्ति ने पूछा—"क्या आप इसी मकान में रहती हैं ?"

जया ने कहा—"हाँ।"

वह व्यक्ति बोला—"इस तरह ऐरे-गैरे के साथ आप कहीं न जायँ। जमाना बहुत खराब हो गया है, इसे जान लीजिए।"

जया ने कहा—"क्या आप कुछ देर बैठने का कष्ट करेंगे ?"

"घर में कोई है या नहीं ?"

जया ने कहा—"नहीं, मेरे पति ऑफिस में हैं।"

वह व्यक्ति बोला—"ऐसी हालत में मैं भीतर नहीं जाऊँगा। जब आपके पति रहेंगे तब किसी दिन आऊँगा।"

आज के पहले इस ढंग की बातें कभी किसीने नहीं कहीं। जीवन-भर लोग उसके रूप और यौवन को देखकर आकृष्ट हुए हैं। यहाँ तक कि घर पर लोगों को अनुपस्थित रहते देख दुरुपयोग करने के लिए उतावले हुए हैं, पर यह व्यक्ति तो उन सबसे अलग है। आखिर यह कैसा इन्सान है ?

जया ने कहा—"अगर आप भीतर आते तो मुझे प्रसन्नता होती। आपकी कृपा से मेरी मुसीबत टल गयी। इसके लिए मैं किन शब्दों में आपको धन्यवाद दूँ, समझ में नहीं आ रहा है।"

उस व्यक्ति ने कहा—"देखिये, इस तरह आप किसी भी अपरिचित व्यक्ति को अपने घर बैठने के लिए आग्रह मत कीजिएगा। इसकी वजह से मुसीवत में फँस सकती हैं। मैं भी एक अपरिचित व्यक्ति हूँ।"

जया चुप रही।

उस व्यक्ति ने पुनः कहा—"आप एक टुकड़ा कागज दीजिए। मैं

उस पर अपना नाम, पता, टेलीफोन नम्बर लिख देता हूँ, अगर कभी रंगमंच पर अभिनय करने की इच्छा हो तो सूचना दे सकती हैं।"

कागज लेकर उस व्यक्ति ने अपना नाम, पता आदि लिख दिया। जया ने कागज लेकर पढ़ा। इस व्यक्ति का नाम है—रातुल यानी रातुल राय।

जया ने उत्सुकतावश पूछा—"उस शराबखाने से आप मुझे बचाकर घर ले आये। मगर आप नित्य वहाँ क्यों जाते हैं ? क्या शराब पीने के लिए ?"

रातुल ने कहा—"माना कि वह शराब का होटल है। आपका प्रश्न भी ठीक है। मगर वहाँ शराब के अलावा क्या और कुछ नहीं मिलता ? इसके अलावा—"

"इसके अलावा और क्या-क्या मिलता है ?"

रातुल ने कहा—"इसके अलावा मैं जिस ऑफिस में काम करता हूँ, वह है–मल्टी नेशनल ऑफिस। यहाँ प्रतिवर्ष अनेक अन्तर्राष्ट्रीय अतिथि आते हैं। मेरी ड्यूटी है कि उन्हें हर जगह ले जाऊँ। कभी बोटानिकल गार्डेन, कभी गांधी घाट, कभी शान्ति निकेतन। उन लोगों के साथ मुझे हर जगह घूमना पड़ता है। होटलों में लंच और डिनर खिलाने का प्रबंध करना पड़ता है। इसी सिलसिले में मैं गया था। वहाँ जाते ही मैंने आपको देखा और तभी मुझे झटका लगा जैसे आपको कहीं देखा है।"

"आप कभी 'ला ब्लू' होटल गये हैं ?"

"हाँ, वहाँ भी गया हूँ। विदेशी अतिथि यहाँ की हर अच्छी-बुरी चीज देखना चाहते हैं। वहाँ एक लड़की नाचती है, उसे देखने के लिए वहाँ काफी भीड़ होती है। मगर मैं जब उसे देखता हूँ तब उस पर दया आती है।"

"दया आती है, क्यों ?"

रातुल ने कहा—"दया इसलिए आती है कि शायद उस लड़की को रुपयों का लालच काफी है। अन्यथा एक बंगाली औरत उस तरह की पोशाक पहनकर भला वहाँ नृत्य करेगी ? आजकल सब कुछ हो रहा है। रुपयों के लिए मनुष्य सब कुछ कर रहा है।"

बात ही बात में राहुल की नजर घड़ी पर पड़ी। चौंककर उसने कहा—"मैं चल रहा हूँ। मेरे फारेन गेस्ट शायद मेरी प्रतीक्षा कर रहे

होंगे । आप मेरे दिये पते पर पत्र दे सकती हैं, चाहे तो फोन भी कर सकती हैं । अगर आपको नौकरी करनी पड़े तो उस तरह के शैतानों के अण्डर में नौकरी भूलकर भी न करें । मैं इससे अधिक रकम ऑफिस क्लब के नाटकों से दिला दूँगा ।"

फिर सहसा उसने कहा--"अच्छा, अब जा रहा हूँ ।"

इतना कहने के बाद वह तेजी से चला गया ।

इस घटना के बाद से ही जया माँ में तेजी से परिवर्तन होने लगा। दादा बाबू को इन घटनाओं के बारे में भनक तक नहीं लगी । नित्य जैसे होटल में जाकर जया नाचती रहीं, उसी प्रकार शाम के वक्त वहाँ नाचती थीं । यह सब होते हुए भी जया माँ काफी बदल गयीं ।

दादा बाबू अक्सर कहा करते थे—"क्या बात है, आजकल ग्राहकों को तुम्हारा नृत्य पसंद नहीं आ रहा है । कुछ हुआ है क्या ?"

जया माँ कहतीं—"नहीं तो—कुछ नहीं हुआ है ।"

दादा बाबू कहते—"फिर, पहले की भाँति अब तुम हँसती नहीं । नृत्य के समय काफी गंभीर दिखाई देती हो । क्या उस समय हँस नहीं पाती ?"

"कोशिश तो करती हूँ ।"

"अगर होटलवाले को तुमसे लाभ न हुआ तो वे तुम्हें क्यों रखेंगे ? बाजार में नाचनेवाली लड़कियों की कमी नहीं है । तुम्हारा स्थान लेने के लिए अनेक लड़कियाँ लाइन लगाकर खड़ी हैं । यह जान लो कि अगर तुमने यहाँ नाचना बन्द कर दिया तो उन्हें प्रसन्नता होगी ।"

जया माँ कहती—"इस तरह नाचना अब मुझे अच्छा नहीं लगता । इसके बदले किसी ऑफिस में मेरे लिए क्लर्क की पोस्ट ठीक कर दो ।"

"ऑफिस ? तुम ऑफिस में नौकरी करोगी ?"

"क्यों नहीं करूँगी ? मैं बी० ए० पास हूँ ।"

"इससे क्या हुआ ? आजकल बाजार में बी० ए० पास लड़कियों की क्या कोई कमी है ?"

इसी प्रकार इन दोनों में नित्य किचकिच होती थी । लेकिन रात को 'ला ब्लू' होटल में नृत्य के बाद जब ह्विस्की का नशा चढ़ता तब सारा मतभेद दूर हो जाता । बाद में दोनों आपस में सुलह कर लेते ।

दूसरे दिन भोर के समय जया माँ, एक नयी महिला बन जाती जिसका मन भी दूसरा हो जाता था। स्नान के पश्चात् टसर की लाल किनारेवाली साड़ी पहनती। काली-मंदिर में जाकर दर्शन करतीं। भाल पर लाल टीका लगातीं। उस वक्त की जया को देखकर कौन कह सकता था कि यही औरत कल रात को कसी पोशाक पहनकर मुग्ध दर्शकों के सामने नाचती रही ?

एक दिन अचानक माँ का आगमन हुआ। भीतर आते ही पूछा—"क्यों री, कैसी है ? पहले की तरह ही सब ठीक-ठाक चल रहा है ?"

जया ने कहा—"हाँ, माँ। अभी तक मुझे यमराज के शिकंजे से छुटकारा नहीं मिला है।"

माँ ने पूछा—"दामाद क्या कहता है ?"

जया ने कहा—"कहेगा क्या ? मेरे श्रम के पैसे से तुम्हारा दामाद मुफ्त में शराब पी रहा है। उसे और क्या चाहिए ?"

बेटी की बातें सुनकर माँ मर्माहत हो उठीं। इसके बाद बोलीं—"अब एक काम कर। चल, मेरे यहाँ चलकर रह। यहाँ रहने की जरूरत नहीं।"

"तुम्हारे यहाँ ?"

"क्यों ? मेरे यहाँ रहने में तुझे आपत्ति किस बात की है ?"

"तुम्हारे यहाँ जाकर रहने से अच्छा है कि नरक में जाकर रहूँ। तुम्हारे जिस लड़के ने अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए इसके साथ विवाह कराया, उसके यहाँ क्या इस जीवन में कभी जाऊँगी ? छोटे भैया ने ही तो मेरी जिन्दगी चौपट की है। छोटे भैया और छोटी भाभी दोनों ही बराबर हैं। अन्त में कभी ऐसा भी होगा जब मेरे भोजन में वे जहर मिलाकर मुझे मार डालेंगे।"

माँ इस सत्य से अच्छी तरह परिचित थी। जया की सारी बातें अकाट्य हैं, इसे माँ के अलावा और कौन समझ सकता है ? सुशील प्रत्येक माह माँ के लिए एक हजार रुपये भेजता है, इसीलिए वह माँ को कुछ नहीं कहता। अभी तक भोजन देता है, बीमार पड़ने पर डॉक्टर-वैद्य बुलाता है। अगर कभी बड़ा लड़का रुपये भेजना बन्द कर देगा तो उसी दिन से छोटी बहू लात-जूता चलाना प्रारंभ कर देगी।

तिस पर ऐसे माहौल में घर पर ननद रहेगी तो सोने में सोहागा हो जायगा। फिर क्या पूछना। उठते-बैठते दुर्गति करेगी।

माँ ने कहा—"सुना है कि आजकल मुकदमा करने पर तलाक ले लिया जा सकता है। क्या ऐसा कुछ नहीं किया जा सकता ?"

जया ने कहा—"क्या इस बारे में मैंने नहीं सोचा है ? सोच चुकी हूँ। लेकिन वह रास्ता भी बन्द है।"

माँ ने पूछा—"वह कैसे ?"

जया ने कहा—"छोटे भैया ने सिर्फ हिन्दू-मतानुसार ही विवाह नहीं कराया है। हमारा विवाह रजिस्ट्रार के द्वारा रजिस्ट्री कराया है। अगर हिन्दू-मत से विवाह होता तो मैं इसे छोड़कर किसी दूसरे से विवाह कर लेती, पर यह तो कोर्ट मैरेज है। जव तक कचहरी जाकर मुकदमा नहीं करूँगी तब तक तलाक नहीं मिलेगा। छोटे भैया ने सभी रास्तों को बन्द कर रखा है। ऐसा शैतान है तुम्हारा लड़का।"

वेटी की बातें सुनते ही माँ रोने लगी। सांत्वना देने लायक शब्द मुँह तक नहीं आये।

जया ने कहा—"तुम्हारे छोटे लड़के की गाड़ी आ गयी है। हॉर्न की आवाज सुनायी दे रही है। अगर तुम देर से जाओगी तो तुम्हारी छोटी बहू गाली वकेगी। अव देर मत करो, जाओ।"

शोभारानी क्या करतीं। बेटी के पास माँ जव तक रहती है तव तक केवल उसका रोना सुनती है। चलते-चलते माँ ने पूछा—"तूने किसी ऑफिस में नौकरी के लिए दरख्वास्त भेजी थी। उसका क्या हुआ ? वहाँ से कोई जवाब आया ?"

जया ने कहा—"नहीं माँ। शायद जवाव आयेगा भी नहीं। अगर मेरी किस्मत अच्छी होती तो ऐसे आदमी से मेरा विवाह ही क्यों होता ?"

माँ ने कोई जवाव नहीं दिया। आँचल से अपने आँसुओं को पोंछती हुई घर के वाहर आकर गाड़ी पर वैठ गयी। इसके वाद जव तक जया दिखाई देती रही तव तक खिड़की से झाँक-झाँककर देखती रही। आगे मोड़ पर गाड़ी के मुड़ते ही सव कुछ अदृश्य हो गया।

यही है मेरे जया माँ की कहानी।

दूसरे दिन भोर के समय जया माँ, एक नयी महिला बन जाती जिसका मन भी दूसरा हो जाता था। स्नान के पश्चात् टसर की लाल किनारेवाली साड़ी पहनती। काली-मंदिर में जाकर दर्शन करतीं। भाल पर लाल टीका लगातीं। उस वक्त की जया को देखकर कौन कह सकता था कि यही औरत कल रात को कसी पोशाक पहनकर मुग्ध दर्शकों के सामने नाचती रही ?

एक दिन अचानक माँ का आगमन हुआ। भीतर आते ही पूछा—"क्यों री, कैसी है ? पहले की तरह ही सब ठीक-ठाक चल रहा है ?"

जया ने कहा—"हाँ, माँ। अभी तक मुझे यमराज के शिकंजे से छुटकारा नहीं मिला है।"

माँ ने पूछा—"दामाद क्या कहता है ?"

जया ने कहा—"कहेगा क्या ? मेरे श्रम के पैसे से तुम्हारा दामाद मुफ्त में शराब पी रहा है। उसे और क्या चाहिए ?"

बेटी की बातें सुनकर माँ मर्माहत हो उठीं। इसके बाद बोलीं—"अब एक काम कर। चल, मेरे यहाँ चलकर रह। यहाँ रहने की जरूरत नहीं।"

"तुम्हारे यहाँ ?"

"क्यों ? मेरे यहाँ रहने में तुझे आपत्ति किस बात की है ?"

"तुम्हारे यहाँ जाकर रहने से अच्छा है कि नरक में जाकर रहूँ। तुम्हारे जिस लड़के ने अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए इसके साथ विवाह कराया, उसके यहाँ क्या इस जीवन में कभी जाऊँगी ? छोटे भैया ने ही तो मेरी जिन्दगी चौपट की है। छोटे भैया और छोटी भाभी दोनों ही बराबर हैं। अन्त में कभी ऐसा भी होगा जब मेरे भोजन में वे जहर मिलाकर मुझे मार डालेंगे।"

माँ इस सत्य से अच्छी तरह परिचित थी। जया की सारी बातें अकाट्य हैं, इसे माँ के अलावा और कौन समझ सकता है ? सुशील प्रत्येक माह माँ के लिए एक हजार रुपये भेजता है, इसीलिए वह माँ को कुछ नहीं कहता। अभी तक भोजन देता है, बीमार पड़ने पर डॉक्टर-वैद्य बुलाता है। अगर कभी बड़ा लड़का रुपये भेजना बन्द कर देगा तो उसी दिन से छोटी बहू लात-जूता चलाना प्रारंभ कर देगी।

तिस पर ऐसे माहौल में घर पर ननद रहेगी तो सोने में सोहागा हो जायगा। फिर क्या पूछना। उठते-वैठते दुर्गति करेगी।

माँ ने कहा—"सुना है कि आजकल मुकदमा करने पर तलाक ले लिया जा सकता है। क्या ऐसा कुछ नहीं किया जा सकता ?"

जया ने कहा—"क्या इस वारे में मैंने नहीं सोचा है ? सोच चुकी हूँ। लेकिन वह रास्ता भी वन्द है।"

माँ ने पूछा—"वह कैसे ?"

जया ने कहा—"छोटे भैया ने सिर्फ हिन्दू-मतानुसार ही विवाह नहीं कराया है। हमारा विवाह रजिस्ट्रार के द्वारा रजिस्ट्री कराया है। अगर हिन्दू-मत से विवाह होता तो मैं इसे छोड़कर किसी दूसरे से विवाह कर लेती, पर यह तो कोर्ट मैरेज है। जव तक कचहरी जाकर मुकदमा नहीं करूँगी तव तक तलाक नहीं मिलेगा। छोटे भैया ने सभी रास्तों को वन्द कर रखा है। ऐसा शैतान है तुम्हारा लड़का।"

वेटी की वातें सुनते ही माँ रोने लगी। सांत्वना देने लायक शव्द मुँह तक नहीं आये।

जया ने कहा—"तुम्हारे छोटे लड़के की गाड़ी आ गयी है। हॉर्न की आवाज सुनायी दे रही है। अगर तुम देर से जाओगी तो तुम्हारी छोटी वहू गाली वकेगी। अव देर मत करो, जाओ।"

शोभारानी क्या करतीं। वेटी के पास माँ जव तक रहती है तव तक केवल उसका रोना सुनती है। चलते-चलते माँ ने पूछा—"तूने किसी ऑफिस में नौकरी के लिए दरख्वास्त भेजी थी। उसका क्या हुआ ? वहाँ से कोई जवाव आया ?"

जया ने कहा—"नहीं माँ। शायद जवाव आयेगा भी नहीं। अगर मेरी किस्मत अच्छी होती तो ऐसे आदमी से मेरा विवाह ही क्यों होता ?"

माँ ने कोई जवाव नहीं दिया। आँचल से अपने आँसुओं को पोंछती हुई घर के वाहर आकर गाड़ी पर वैठ गयी। इसके वाद जव तक जया दिखाई देती रही तव तक खिड़की से झाँक-झाँककर देखती रही। आगे मोड़ पर गाड़ी के मुड़ते ही सव कुछ अदृश्य हो गया।

यही है मेरे जया माँ की कहानी।

यह कहानी सुनाते-सुनाते हरिपद स्वयं ही करुण हो उठा। लगा, जैसे वह अपने किसी आत्मीय के जीवन की मर्मान्तिक कहानी सुना रहा है।

मैंने पूछा—"तुम्हें जया सरकार के बारे में इतने विस्तार से सारी बातें कहाँ से मालूम हुई ?"

हरिपद ने कहा—"जया माँ ही इन बातों को समय-समय पर बता चुकी हैं। अगर वे न बतातीं तो मुझे यह सब बातें कैसे मालूम होतीं ?"

मैंने पूछा—"एक बात समझ में नहीं आयी कि तुम्हारी जया माँ और किसीको यह सब कहानी न सुनाकर तुम्हें क्यों सुनाने गयी ? आखिर तुम्हें कौन से सुर्खाब के पर लगे हैं ?"

हरिपद ने कहा—"यही तो मजेदार बात है। मन लायक आदमी मिलने पर ही लोग अपने दिल का दर्द सुनाते हैं। संभवतः जया माँ ने मुझे मनलायक आदमी समझा था। दूसरे और किसे वे यह सब बातें सुनातीं ? किसे अपने मन की बातें कहतीं ? उनका अपना कहने को था कौन ? केवल मैं था। इसके अलावा एक व्यक्ति और था, पर उसे मनचाहे समय पर पाया नहीं जा सकता था।"

पूछा—"कौन है वह ? किसे मनचाहे समय पर नहीं पाया जा सकता था ?"

हरिपद ने कहा—"रातुल राय। जिसके बारे में आगे बता चुका हूँ। रातुल राय ने ही एक दिन जया माँ को एक शैतान के पंजे से बचाया था। कृपया आप इस रातुल राय के बारे में अच्छी बातें लिखियेगा। ऐसे आदमी कम होते हैं।"

मैंने पूछा—"उसे तुमने कैसे पहचाना ? क्या उसे तुमने देखा है ?"

"क्या कह रहे हैं ? भला उसे नहीं देखूंगा। उन दिनों मैं जया माँ के यहाँ काम करता था।"

मैंने पूछा—"उसका चेहरा-मोहरा कैसा है ?"

हरिपद सोचने लगा। कुछ देर बाद उसने कहा—"अब आपको कैसे समझाऊँ, समझ नहीं पा रहा हूँ, सर।"

पुनः वह मन ही मन न जाने क्या-क्या सोचता रहा। सहसा उसका चेहरा प्रसन्नता से खिल उठा।

उसने कहा—"हाँ, ठीक। ठीक उसी तरह है।"

मैंने पूछा—"क्या उसी तरह ठीक है ?"

हरिपद ने कहा—"आपने दिलीपकुमार को देखा है ?"

मैं समझ नहीं सका। पूछा—"कौन दिलीपकुमार ?"

अव हरिपद बौखला उठा। कहा—"साहव, आपको समझाना कठिन है। आप साहित्यिक नहीं, घोंघा बसन्त हैं। जव आप दिलीपकुमार को नहीं जानते तव कैसे साहित्यिक हैं ? क्या कभी सिनेमा नहीं देखते ?"

जवाव दिया—"नहीं।"

"अरे ! क्या कह रहे हैं ?"

मैं सिनेमा नहीं देखता जानकर मेरे प्रति उसकी जितनी श्रद्धा-भक्ति थी, वह क्षणमात्र में उड़ गयी। उसने कहा—"शायद आप नहीं जानते कि अगर किसी कथाकार की कहानी पर फिल्म वनती है और उसमें दिलीपकुमार पार्ट करता है तो कथाकार अपने को धन्य समझता है। शिवशंकर वावू की कहानियों पर वनी अधिकांश फिल्मों में दिलीप-कुमार ने अभिनय किया है। इधर आप दिलीपकुमार का नाम तक नहीं जानते, वड़ी लज्जा की वात है। अगर और कोई यह वात सुनेगा तो आप पर हँसेगा। भविष्य में यह वात किसी और से मत कहियेगा।"

मैं चुपचाप उसकी बातें सुनता रहा। जव वह अपनी वात समाप्त कर चुका तव मैंने उससे पूछा—"शायद तुम वरावर सिनेमा देखते हो ?"

हरिपद ने कहा—"मैं कैसे सिनेमा देखूँगा, सर ? मेरे पास इतने पैसे कहाँ से आयेंगे ?"

"तव तुमने दिलीपकुमार को कहाँ देखा ? कैसे देखा ?"

"कहाँ देखा ? शहर की अधिकांश दीवारों पर उसके चित्रों के पोस्टर लगे रहते हैं। हर शहर की दीवारों तथा सिनेमा के गेटों पर चिपके पोस्टरों में उसके चित्र रहते हैं। लगता है, आपने कभी नहीं देखा ?"

थोड़ी देर रुककर उसने कहा—"वहरहाल, जया माँ का पत्र लेकर एक दिन साहव के यहाँ गया।"

मैंने पूछा—"कौन साहव ?"

"अभी तो नाम वताया, रातुल राय साहव के यहाँ। रातुल राय

के चेहरे-मोहरे के बारे में जरा विस्तार से लिखियेगा, सर। क्या गजब के बाल हैं सिर पर, चेहरे पर हमेशा मुस्कान थिरकती रहती है।"

मैंने हरिपद को डाँटते हुए कहा—"मैं किसका चेहरा किस तरह से वर्णन करूँगा, इसका ज्ञान तुम्हें देने की कोई जरूरत नहीं। तुम सिर्फ आगे क्या हुआ, यह बताओ।"

रातुल राय अपने ऑफिस का न केवल बड़ा अफसर है, बल्कि ऑफिस-क्लब द्वारा आयोजित नाटकों में अभिनय करता है। बाहरी ग्रूप थियेटरों का पण्डा है। रवीन्द्र सदन, अकादमी के अलावा अन्य कई जगह उसके क्लब का नाटक देखने के लिए दर्शकों की अपार भीड़ होती है।

हरिपद जब उसके निजी कमरे में गया तब वहाँ दो-चार अन्य व्यक्ति भी बैठे थे।

हरिपद को देखते ही राय साहब ने पूछा—"क्या बात है?"

हरिपद ने साथ लाये पत्र को राय साहब की ओर बढ़ाते हुए कहा—"साहब, मेरी माँ ने आपके पास यह पत्र भेजा है।"

"तुम्हारी माँ? कौन है तुम्हारी माँ?"

हरिपद ने कहा—"मेरी जया माँ।"

जया माँ का नाम सुनने के बाद भी राय साहब कुछ समझ नहीं सके। लिफाफे के भीतर से पत्र निकालकर पढ़ने के साथ ही उनके चेहरे की रंगत बदल गयी। सामने बैठे लोगों को उन्होंने तुरत विदा कर दिया। इसके बाद हरिपद से पूछा—"क्या नाम है तुम्हारा?"

हरिपद ने विनय के साथ कहा—"सर, मेरा नाम हरिपद है। हरिपद हालदार।"

"कितने दिनों से यहाँ काम कर रहे हो?"

"आज एक साल से माँ की सेवा कर रहा हूँ।"

"सेवा?"

हरिपद ने कहा—"जी हाँ, ऐसी माँ की सेवा करने का मुझे अवसर मिला है, यह मेरे लिए सौभाग्य की बात है।"

राय साहब ने कहा—"ठीक है। अब तुम जा सकते हो। अपनी माँ से जाकर कहना कि किसी दिन मिलने आ जाऊँगा।"

पत्र में क्या लिखा था, हरिपद को मालूम नहीं था। उसे यह जानने

की उत्सुकता भी नहीं थी। माँ ने आज्ञा दी, उसने काम किया। जमीन से माथा टेककर राय साहब को प्रणाम करने के बाद वह ऑफिस के बाहर निकल आया।

घर वापस आने पर माँ ने दरवाजा खोला और फिर वे विस्तर पर जाकर सो गयीं। लेटे ही लेटे जया ने पूछा—"क्यों रे, वाबू के साथ मुलाकात हुई ?"

हरिपद ने कहा—"हाँ, माँ। राय साहब ने कहा कि किसी दिन आ जाऊँगा।"

"और कुछ कहा उन्होंने ?"

हरिपद ने कहा—"और कुछ नहीं कहा।"

जया ने कहा—"मुझे बुखार है, यह तूने कहा था या नहीं ?"

"नहीं। यह कहने को आपने नहीं कहा था।"

जया माँ ने पुनः पूछा—"दादा वावू के वारे में कुछ कहा था ?"

"ना, उनके बारे में कोई वात नहीं हुई।"

"दादा वावू सात-आठ दिन के लिए जलपाईगुड़ी गये हैं, यह भी उनसे नहीं कहा तूने ?"

"नहीं, यह भी नहीं कहा।"

"ठीक है। जा, जाकर खा-पी ले।" इतना कहकर जया करवट वदलकर सो गयीं।

हरिपद ने पूछा—"तुम कुछ नहीं खाओगी, माँ ?"

जया ने कहा—"नहीं। मैं तो कह चुकी हूँ कि मैं कुछ नहीं खाऊँगी। तू जाकर खा ले।"

थोड़ी देर वाद जया माँ ने हरिपद को बुलाकर कहा—"एक वात सुन ले, अगर 'ला ब्लू' होटल से कोई मुझे खोजने आये तो उससे कहना कि मुझे तेज बुखार है। मैं उनसे मुलाकात नहीं कर सकती। ठीक यही वात कहना, समझा ?"

इतना कहने के वाद वे आँखें वन्द कर सोने की कोशिश करने लगीं।

सरोज सरकार को पार्टी के लिए काफी काम करना पड़ता है। वह दिनभर यूनियन के कार्य में व्यस्त रहता है। सिर्फ कलकत्ता में ही नहीं, कलकत्ता के वाहर भी ज़ाता है। कभी आसनसोल तो कभी सिलिगुड़ी और कभी जलपाईगुड़ी जाना पड़ता है। कभी-कभी दिल्ली

भी जाता है। ज्यों-ज्यों दिन गुजरते जा रहे हैं, त्यों-त्यों पार्टी का कार्य बढ़ता जा रहा है। अक्सर पार्टी के कार्यों के लिए उसे कलकत्ता से बाहर ही बाहर घूमते रहना पड़ता है। समग्र भारत को पार्टी के कब्जे में कैसे लाया जाय—दिन-रात इसी फिराक में वह लगा रहता है। इन्हीं बातों की चिन्ता में वह ह्विस्की तथा जिन के गिलासों में डूबा रहता है। घरवाली कैसी है, घर कैसे चल रहा है, वह क्या सोचती है, उसे किस बात का कष्ट है, यह सब देखने या सोचने का अवकाश उसके पास नहीं है।

ठीक इसी समय दरवाजे की घंटी बजने लगी। जया के कान में ज्योंही आवाज गयी त्योंही उसने कहा—"हरिपद, सुन। लगता है, 'ला ब्लू' होटल से कोई आया है। कह दे कि मुझे बुखार है। मैं उठ नहीं सकती।"

हरिपद इसके लिए तैयार था। वह दरवाजा खोलने गया। सहसा आगन्तुक को देखकर वह गूंगा बन गया। कुछ देर तक मौन खड़ा रहा। उसके सामने राय साहब खड़े थे।

उनसे बिना कुछ पूछे वह भीतर की ओर दौड़ गया। जया माँ के कमरे में जाकर उसने कहा—"माँ, माँ, राय साहब आये हैं।"

"कौन आया है ? किसका नाम बताया ?"

जया को जैसे हरिपद की बात पर विश्वास नहीं हुआ।

हरिपद ने कहा—"आपके रातुल राय साहब आये हैं जिन्हें आपने पत्र लिखा था।"

क्षणभर में जया का बुखार जैसे १०५ डिग्री तक पहुँच गया। जोर लगाकर बिछौने पर उठकर बैठने लगी, पर कमजोरी के कारण पुनः गिरकर सो गयी।

तब तक हरिपद राय साहब को लेकर भीतर आ गया था। जया माँ के कमरे में।

यह देखकर जया माँ अपने वस्त्र सँभालते हुए बोलीं—"बाबू को बैठने के लिए एक कुर्सी तो दे दे।"

रातुल ने कहा—"आपको परेशान होने की जरूरत नहीं है, मिसेज सरकार। मगर आपने अपने पत्र में अपनी बीमारी के बारे में कुछ नहीं लिखा। डॉक्टर को दिखा चुकी हैं ?"

जया ने कहा—"कोई सीरियस बीमारी नहीं है। यह अपने-आप ठीक हो जायगी। इसके लिए डॉक्टर बुलाना बेकार है।"

रातुल ने कहा—"बुखार कितना है यह आपने देखा है ?"

जया ने कहा—"घर में थर्मामीटर नहीं है।"

"इसका अर्थ यह नहीं है कि शरीर के साथ लापरवाही वरती जाय। जरा आपका सिर देखूँ तो।"

इतना कहने के बाद रातुल जया के माथे पर हाथ रखकर बुखार का अन्दाजा लगाने लगा। बाद में कहा—"बुखार तो अभी तक बना हुआ है।"

जया ने कहा—"उस दिन आपने जिस अपमान से मुझे बचाया है, उसके लिए क्या कहकर धन्यवाद दूँ, समझ नहीं पा रही हूँ।"

रातुल ने कहा—"उस दिन जब मैंने आपको देखा तभी मुझे यह अहसास हुआ था कि आप सरल प्रकृति की हैं और एक शैतान के चंगुल में फँस गयी हैं।"

जया ने कहा—"मैं भला यह सब कैसे समझती ? मैं तो पुरुष नहीं हूँ।"

"जब आप नाटकों में अभिनय करती हैं तब तो अनेक पुरुषों के सम्पर्क में आती होंगी।"

"वह सम्पर्क भला कोई पहचान है ? जितना सम्पर्क रखना आवश्यक होता है, बस उतना ही रखती हूँ। इससे अधिक नहीं।"

तभी हरिपद हीटर पर चाय बनाकर ले आया।

रातुल ने कहा—"चाय का झंझट क्यों लगाया आपने ? मैं अपने ऑफिस से चाय पीने के बाद रवाना हुआ हूँ। इसके अलावा अधिक चाय पीना अच्छी बात नहीं है।"

जया ने पूछा—"क्यों ?"

रातुल ने कहा—"चाय हमारे यहाँ का उत्पादन है। अगर हम लोग मिलकर चाय पी लेंगे तो विदेशों में क्या सप्लाई करेंगे ? विदेशों में सप्लाई करने पर ही हमें लाभ होगा।"

जया ने कहा—"ऐसी बात आज के पहले किसीसे नहीं सुनी।"

रातुल ने कहा—"अन्य लोग यह बात जानते कहाँ हैं ? मैं जिस ऑफिस में काम करता हूँ, वहाँ एक्सपोर्ट का काम होता है। हम लोग प्रत्येक माह करोड़ों रुपये की चाय बाहर भेजते हैं।"

इसके बाद चाय की प्याली उठाते हुए उसने पुनः कहा—"जब आपने चाय दे दी है तो इसे फेंक नहीं दूँगा। मगर आगे कभी आया

तो कृपया मुझे चाय देने का कष्ट न करें। अगर चाय पीने की इच्छा हुई तो कहकर बनवा लूँगा।"

जया ने पूछा—"अर्थात् आप पुनः आ सकते हैं ?"

रातुल ने कहा—"आप ऐसी बात क्यों कह रही हैं ? क्या आप यह चाहती हैं कि मैं दोबारा न आऊँ ?"

जया ने कहा—"नहीं, ऐसी बात नहीं है। कृपा करके आप मेरे यहाँ आये हैं, इसके लिए मैं आपको किन शब्दों में धन्यवाद दूं ?"

रातुल—"यह सब बातें जाने दीजिए। अगर मुझे धन्यवाद न भी देंगी तो कोई हर्ज नहीं। आपने अपने पत्र में एक बार मिलने के लिए लिखा है।"

जया ने कहा—"जी हाँ, यही लिखा था और यह भी लिखा था कि समय-तारीख की सूचना मिलने पर मैं उसी तारीख को जाकर आपसे मिलती। अपने घर पर आपको बुलाऊँ, यह अधिकार मुझमें कहाँ है ?"

रातुल ने कहा—"नहीं, नहीं। आप ऐसी बातें क्यों कह रही हैं ? ऐसी बातें कहेंगी तो आगे मैं फिर कभी नहीं आऊँगा।"

जया ने कहा—"क्षमा करेंगे। मैं वचन देती हूँ कि आगे ऐसी बातें नहीं कहूँगी। लाचारी में ही कहना पड़ा। यदि आप मेरे मन के भीतर झाँककर देखते तो समझ पाते कि आखिर मैंने ऐसा क्यों कहा।"

रातुल ने कहा—"यह बात मैं उसी दिन समझ गया था जिस दिन आपको स्टेज पर पहले-पहले अभिनय करते देखा था। इसके बाद मैंने आपको कई बार रंगमंच पर देखा है। बाद में एक दिन आपको मैंने मिस्टर मिनहा के साथ होटल में जब देखा, उस दिन अनुभव किया कि आप जैसी सरल महिला बहुत कम देखने में आती है। अगर आप सरल न होतीं तो उस शैतान की बातों के चक्कर में न आतीं। यही वजह है कि आपको बचाने के लिए मैं कूद पड़ा। बहरहाल, वह शैतान फिर कभी इधर आया या नहीं ?"

जया ने कहा—"नहीं।"

रातुल ने कहा—"मेरा भी यही ख्याल था कि अब वह कभी इधर नहीं आयेगा। मुझे वह पहचानता है। मुझे देखते ही उस दिन डर गया था। मेरे क्लब की महिलाओं की ओर उसकी बुरी नजर पड़ी थी। एक बार उसकी नाक पर ऐसा घूंसा मारा कि एक माह तक अस्पताल में पड़ा इलाज कराता रहा।"

जया ने पूछा—"आपके विरुद्ध उसने केस नहीं किया ?"

"केस करेगा ? जो लोग शैतान होते हैं, वे अन्तर से डरपोक भी होते हैं। इस घटना के बाद जब कभी मुलाकात हुई तब ठंडा पड़ जाता है।"

जया ने कहा—"सचमुच आपने उस दिन ऐसा उपकार किया था कि उसके सम्बन्ध में क्या कहूँ ?"

रातुल ने कहा—"आपका चेहरा ऐसा है कि ऐसे शैतान बराबर पीछे पड़े रहेंगे।"

जया ने कहा—"आपका कहना ठीक है। मेरी शक्ल ही मेरा सबसे बड़ा दुश्मन है। जीवन में मैंने यही अनुभव किया कि हमउम्र के पुरुष मुझसे मित्रता करने के लिए उन्मुख रहते हैं। जिन दिनों मैं स्कूल में पढ़ती थी, उसी समय से इस बात पर गौर करती आ रही हूँ। जब कॉलेज जाने लगी तब बस में अधिकांश पुरुष मुझसे सटकर खड़े होते थे। बस में अन्यत्र जगह रहने पर भी सारी भीड़ मेरे पास मँडराती थी।"

रातुल ने कहा—"ऐसा होता है। मैं एक अर्से से रंगमंच से जुड़ा हूँ। इस तरह के दृश्य बराबर देखता हूँ।"

जया ने कहा—"मगर इसमें मेरी क्या गलती है ?"

रातुल ने कहा—"इसमें आपकी कोई गलती नहीं है, यह ठीक है, किन्तु अब आगे से आपको सावधान रहना होगा। आप कहीं भी जायँ तो मिस्टर सरकार को साथ लेकर जायँ। अकेली न जायँ।"

जया ने कहा—"उन्हें वक्त कहाँ मिलता है ?"

"क्यों उन्हें समय क्यों नहीं मिलता ?"

"उनके पास काफी काम रहता है। मुझे लेकर कहाँ तक परेशान होते रहेंगे ?"

"पर चौवीसों घण्टे कोई काम नहीं करता। कुछ समय आपके लिए वे व्यय कर सकते हैं। प्रत्येक पति को यहीं करना चाहिए।"

इस जवाब को सुनकर जया गंभीर हो गयी।

रातुल ने पूछा—"क्या बात है, आप अचानक गंभीर क्यों हो गयीं ? क्या बुखार बढ़ रहा है ?"

कहने के पश्चात् रातुल ने ज्वर देखने के लिए सिर का स्पर्श किया। रातुल ने आश्चर्य के साथ देखा कि जया की आँखों से सावन-भादों की बरसात होने लगी। अवाक् होकर उसने पूछा—"यह क्या ?"

रातुल कोशिश करने पर भी यह समझ नहीं पाया कि श्रीमती सरकार को अचानक क्या हो गया। वह कुर्सी पर से उठकर खड़ा हो गया। इस स्थिति में उसे क्या करना उचित है, वह समझ नहीं सका। क्या मैंने श्रीमती सरकार के मर्म को छू दिया है? इस तरह के कई प्रश्न उसके मन में उत्पन्न हुए।

अचानक उसने कहा—"अच्छा मिसेज सरकार, अब मुझे आज्ञा दीजिए। मैं चल रहा हूँ। कोई ख्याल मत कीजिएगा। अगर मुझसे कोई भूल हो गयी हो तो क्षमा कर दीजिएगा।"

कहकर रातुल कमरे के बाहर आते ही रोने की आवाज सुनाई दी। मुड़कर देखने पर उसने देखा, जया कह रही है—"आप मत जाइये रातुल बाबू, आप मत जाइये।"

रातुल ने कहा—"इस वक्त आपको आराम की सख्त जरूरत है। मेरी मौजूदगी में आप आराम नहीं कर सकेंगी। मैं पुनः किसी दिन आ जाऊँगा। अब चल रहा हूँ।"

कहकर वह तेज कदमों से बाहर निकल आया। अचानक उसे लगा जैसे पीछे से कोई उसे पुकार रहा है। पीछे पलटकर देखने पर देखा कि हरिपद दौड़ता हुआ आ रहा है।

हरिपद के पास आने पर रातुल ने पूछा—"क्या हुआ?"

हरिपद ने कहा—"जया माँ आपको बुला रही हैं।"

"क्यों? मैं तो तुम्हारी जया माँ से कहकर ही वहाँ से चला, फिर क्यों बुला रही हैं?"

हरिपद ने कहा—"यह नहीं मालूम। मुझे उन्होंने कहा कि जल्द उन्हें बुला ला। कृपया तुरत चले चलिये। शायद कोई जरूरी काम है।"

फलतः रातुल को वापस आना पड़ा। इधर तब तक जया बिछौने पर उठकर बैठ गयी थी।

रातुल को देखते ही जया बोली—"आप नाराज होकर वापस जा रहे थे देखकर मुझे बहुत बुरा लगा; इसीलिए बुलवाया।"

"आप बैठ क्यों गयीं? कहीं बुखार तेज न हो जाय।"

"अगर आप चले जायेंगे तो मेरा बुखार बढ़ सकता है। पास रहेंगे तो ठीक हो जाऊँगी। विश्वास करिये, मैं झूठ नहीं कह रही हूँ।"

रातुल ने कहा—"तब एक काम करूँ तो ठीक होगा। आप मिस्टर सरकार के ऑफिस का पता मुझे बताइये। मैं वहाँ जाकर आपकी बीमारी की सूचना दे देता हूँ।"

जया ने कहा—"इसकी कोई जरूरत नहीं। उनके आने पर मेरा बुखार दूर नहीं होगा और इस वक्त वे कलकत्ता में नहीं हैं।"

यह बात सुनकर रातुल चौंक उठा। कहा—"वे नहीं हैं? अब तक आपने बताया क्यों नहीं? कहाँ गये हैं?"

रातुल अभी तक खड़ा था। जया ने कहा—"पहले आप आराम से बैठिये तब बताती हूँ। कृपया बैठ जाइये।"

रातुल बिना प्रतिवाद किये बैठ गया। कहा—"लीजिए बैठ गया। अब बताइये वे कहाँ गये हैं?"

जया ने कहा—"वे जितने दिन घर पर न रहें, उतने दिन अच्छे होते हैं। मैं शान्ति से रहती हूँ।"

रातुल ने विस्मय के साथ कहा—"क्या कह रही हैं?"

जया ने कहा—"पता नहीं, आज सवेरे किसका मुँह देखा था। शायद इसीलिए आप जैसे व्यक्ति से मुलाकात हुई। अन्यथा आप यहाँ क्यों आते? सोचिये तो भला।"

प्रारंभ से ही रातुल जया की इस पहेली को समझ नहीं पा रहा था। कहा—"मैं आपकी बातें समझ नहीं पा रहा हूँ।"

जया ने कहा—"अभी कुछ देर पहले आप मिस्टर सिनहा के बारे में बातें कर रहे थे। मिस्टर सरकार भी इसी प्रकार के एक मिस्टर सिनहा हैं। इन दोनों में फर्क सिर्फ इतना है कि मिस्टर सिनहा कई बार जेल की सजा भुगत चुके हैं और इन पर अभी तक पुलिस की निगाह नहीं पड़ी है।"

इस बात का उत्तर रातुल क्या दे, समझ नहीं सका। केवल अवाक् रह गया।

जया ने कहा—"आपने कृपा करके मिस्टर सिनहा के जाल से बचाया है, पर मिस्टर सरकार के हाथ से मुझे कौन बचायेगा?"

"मिस्टर सरकार तो आपके पति हैं। उनके जाल से मैं आपको कैसे बचा सकता हूँ?"

जया ने कहा—"आपका कहना ठीक है। मिस्टर सरकार मेरे पति हैं, पर आपने अब तक यह नहीं पूछा कि जब आपके पति मिस्टर सरकार हैं तो मेरी माँग में सिन्दूर क्यों नहीं है, मेरे हाथों में शंखचूड़ी

(सोहाग-चिह्न) क्यों नहीं है। यह सब चिह्न तो सधवाओं के श्रृंगार हैं।"

बात ठीक है। अब तक इधर रातुल ने ध्यान नहीं दिया था। उसने देखा—जया की माँग में न तो सिन्दूर है और न हाथ में कंगन। उसने विस्मय के साथ पूछा—"वाकई आप ठीक कह रही हैं। आखिर आपकी माँग में सिन्दूर और हाथ में कंगन क्यों नहीं है? आप लोग हिन्दू हैं न?"

जया की आकृति पर करुणामिश्रित मुस्कान फैल गयी। इसे मुस्कान की संज्ञा नहीं दी जा सकती। उसके बदले रोदन कहना उचित होगा। बोली—"मैं कहाँ की हिन्दू और कैसी मेरी शादी?"

"क्यों? ऐसा क्यों कह रही हैं?"

जया ने कहा—"क्यों नहीं कहूँगी?"

रातुल ने कहा—"मैं अब तक यही जानता आया हूँ कि आप एक सधवा महिला हैं। यही वजह है कि उस दिन एक शैतान के पंजे से आपको बचाया। आपको वहाँ से घर तक पहुँचाया। उस वक्त आपने घर में आने को कहा था, पर मैं भीतर नहीं आया। अगर आज आपका यह पत्र न मिलता तो शायद मैं न आता।"

कुछ देर चुप रहने के बाद रातुल ने पुनः कहा—"वाकई आपकी बातें सुनकर मैं आश्चर्यचकित हूँ। सोचता हूँ कि क्या कलकत्ता में ऐसा परिवार भी है? अब तक किसी उपन्यास या कहानी में इस तरह की बातें पढ़ने में नहीं आयीं। कृपया आप सारी बातें साफ ढंग से बतायें।"

जया ने कहा—"उपन्यासों में ऐसी घटनाएँ कहाँ से मिलेंगी? मेरी तरह अभागी इस कलकत्ता में कौन कहे, पृथ्वी के किसी भी शहर में नहीं है। असल में मैं न तो किसीकी पत्नी हूँ और न कोई मेरा पति।"

रातुल ने पूछा—"आपके माता-पिता, भाई-बहन कोई है?"

जया ने कहा—"सच पूछिये तो मेरा कोई नहीं है।"

"क्या सचमुच आपका कोई नहीं है?"

जया ने कहा—"पिताजी नहीं हैं। काफी पहले उनकी मृत्यु हो गयी है। उन्हें मैंने देखा नहीं। इसके अलावा बाकी सभी हैं। इस दुनिया में जितने रिश्तेदार होते हैं, सभी हैं। मेरी विधवा माँ हैं। बड़े

ई अमेरिका में रहते हैं। कलकत्ता में छोटे भाई साहव हैं, छोटी भी हैं। सभी हैं। इन सवके रहते हुए भी मेरा कोई नहीं है। मैं दुनिया में अकेली हूँ। इससे अधिक वताने में मैं असमर्थ हूँ।"

रातुल ने पूछा—"आप इनके यहाँ नहीं जातीं ?"

"नहीं। वहाँ जाने लायक मैं नहीं हूँ।"

"क्यों ? माँ के पास जाने में क्या हुआ है ?"

जया ने कहा—"कोई खास वात नहीं, पर मेरा भाग्य ही ऐसा है र वही हुआ है। मेरी माँ छोटे भैया के यहाँ नौकरानी की तरह हैं। रे वड़े भैया अमेरिका से प्रत्येक माह माँ के लिए रुपये भेजते हैं। सी लालच में छोटे भैया ने अव तक माँ को जीवित रखा है वर्ना व तक शायद उन्हें मारकर भगा देता।"

इन वातों को सुनते-सुनते रातुल पत्थर की तरह जड़वत् हो गया।

जया ने आगे कहा—"आपको जानकर आश्चर्य होगा कि पति के र आने के वाद से एक दिन भी चैन की रोटी मयस्सर नहीं हुई। ड़कियों के लिए वाप के घर एक आश्रय रहता है। मगर मेरा कहीं ी कोई ठाँव नहीं है। न पति के घर और न पिता के यहाँ।"

कुछ देर चुप रहने के वाद जया ने पुनः कहा—"एक वात सुनने र आप चकित हो जायेंगे। आप कभी पार्कस्ट्रीटवाले 'ला ब्लू' होटल में गये हैं ?"

रातुल ने कहा—"हाँ। वहाँ कई वार अपने आफिस के अतिथियों को लेकर गया हूँ।"

"वहाँ होनेवाला कैवरा डांस भी आपने देखा होगा।"

"हाँ, देखा है। वहाँ 'मिस हट' का कैवरा डांस देखने का अवसर मिला है। उनका नृत्य देखने के लिए ही वहाँ भीड़ होती है।"

जया ने कहा—"मैं ही उस 'ला ब्लू' होटल की 'मिस हट' हूँ।"

"क्या ? आपका दिमाग तो ठीक है ?"

जया ने कहा—"वहाँ जिस पोशाक को पहनकर मैं नाचती हूँ, उसे देखने पर आप मुझे पहचान नहीं सकते।"

"वड़े आश्चर्य की वात है।"

जया ने कहा—"आपको इस पर आश्चर्य हो रहा है। इसी तरह की और भी वातें हैं जिन पर आप विश्वास नहीं करेंगे। मिस्टर सरकार के कारण कभी-कभी मैं किराये पर चलती हूँ।"

रातुल ने पूछा—"क्या आज आप नाचने नहीं जायेंगी ?"

जया ने कहा—"नहीं।"

"क्यों ? आज वहाँ कौन नाचेगा ?"

जया ने कहा—"सिर्फ आज ही नहीं, मैं कई दिनों से वहाँ नहीं जा रही हूँ। कलकत्ता में नाचनेवाली लड़कियों की कमी नहीं है। पैसा फेंकने पर भिखमंगों की कमी नहीं होती।"

"मिस्टर सरकार इसके लिए आपको कुछ नहीं कहेंगे ?"

"जरूर कहेंगे, क्योंकि इस वजह से उनका नुकसान जो हो रहा है। वापस आने पर लाल-पीले भी हो सकते हैं। अगर वे नाराज होते हैं तो मैं क्या कर सकती हूँ ?"

रातुल ने पूछा—"वे गये कहाँ हैं ?"

"जलपाईगुड़ी।"

"कब तक लौटेंगे ?"

जया ने कहा—"वे लेबर-लीडर हैं। यूनियन के काम से उन्हें अक्सर बाहर जाना पड़ता है। अगर किसी ऑफिस में हड़ताल करा देते हैं तो काफी रकम हाथ लगती है। सात-आठ दिन हुए वे जलपाई-गुड़ी गये हैं और १५-१६ दिन बाद वापस आयेंगे। इसके पहले नहीं आयेंगे। मुमकिन है कि २-४ दिन और देर हो जाय।"

कुछ देर रुकने के बाद पुनः जया कहने लगी—"दिनभर अकेली रहने के कारण मन बड़ा उदास हो गया था। ठीक ऐसे मौके पर आपके हाथ का लिखा पता मेरे हाथ लगा। उस समय मेरी मानसिक स्थिति ऐसी थी कि कहीं भाग जाने की इच्छा थी। ऐसे समय आपकी याद आ गयी, इसीलिए आपके नाम एक पत्र लिखकर हरिपद के हाथ भेजा। सोचा, अगर कोई मुझे इस मुसीबत से बचा सकता है तो केवल आप ही ऐसे समर्थ व्यक्ति हैं।"

रातुल ने कहा—"मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि मैं आपका क्या उपकार करूँ ?"

जया ने कहा—"चाहे जैसे भी हो आप इस मुसीबत से मेरा उद्धार कीजिए। एक अर्सा पहले आपने एक शैतान के पंजे से मुझे बचाया था। इस समय आपके अलावा मेरा ऐसा कोई नहीं है जो मुझे इस मुसीबत से बचा सके।"

रातुल ने कहा—"बाहर से वापस आने पर जब आपको मिस्टर

सरकार घर पर नहीं देखेंगे तव क्या होगा ? आखिर हैं तो आप उनकी विवाहित पत्नी ।"

जया ने कहा—"क्या कुछ मंत्र पढ़ने से विवाह हो गया ?"

रातुल ने पूछा—"आपका विवाह तो रजिस्ट्री ऑफिस में भी तो हुआ है । वहाँ के रजिस्टर में आप दोनों के नाम पति-पत्नी के रूप में दर्ज है । तब क्या करेंगी ?"

जया के कुछ कहने के पहले ही दरवाजे की घंटी वजने लगी । रातुल नहीं समझ सका । जया वोल उठी—"इस वक्त कौन चला आया ?"

हरिपद ने आकर कहा—"माँ, नानीजी आयी हैं ।"

इसके साथ ही माँ ने कमरे में प्रवेश किया । जया ने ही परिचय कराया । केवल परिचय ही नहीं कराया, वल्कि अपनी समस्या का उल्लेख किया ।

जया की माँ को अपने जीवन में कभी शान्ति नहीं मिली । लड़कों के जरिये उनकी कोई भी इच्छा कभी पूरी नहीं हुई । जिस लड़के के रहने पर इस उम्र में कुछ सुख-शान्ति मिलती, वह भी भाग्य-दोष के कारण विदेश रहने लगा है । लड़की का विवाह छोटे लड़के ने एक ऐसे लड़के से कर दिया जो अनपढ़ है । अव ऐसी हालत में माँ कर ही क्या सकती है ? सव कुछ भाग्य के भरोसे छोड़कर कोई कव तक जीवित रह सकता है ?

सारी वातें सुनने के वाद माँ ने रातुल से कहा—"वेटा, अव जव तुम आ गये हो तब एक तुम ही मेरी जया को वचा सकते हो ।"

रातुल ने कहा—"अब आप ही वताइये कि मैं कैसे वचा सकता हूँ ? आगे चलकर आपके दामाद और लड़की मिलकर मेरे नाम मुक-दमा दायर कर दें तो उस समय न जाने कितना झमेला होगा । अख-वारों के जरिये सारा कलकत्ता जान लेगा । इस तरह का चटपटा समाचार छपने पर मेरी क्या हालत होगी, इस वारे में कुछ कल्पना कर पा रही हैं ?"

जया की माँ ने कहा—"अब सुनो वेटा, आज तुम्हें सारी घटना का खुलासा कर दे रही हूँ । असल में जया का विवाह ठीक से हुआ ही नहीं है । रजिस्ट्रार के सामने दामाद अपने वाप का सही नाम नहीं वता सका । ऐसी हालत में इस विवाह को ठीक विवाह कैसे कहूँ ? इसके वाद पुरोहितजी के सामने हिन्दू-धर्म के अनुसार जो विवाह हुआ, वह

भी ठीक से नहीं हुआ था। विवाह-मण्डप में बैठने के कुछ देर बाद दामाद न जाने कहाँ चला गया। हमारे पुरोहित ने उसी समय कहा था—'ऐसा अधर्मवाला काम मुझसे नहीं होगा।' बाद में दो-तीन घण्टे बाद वर आया तब पड़ोस से एक नये पुरोहित को बुलाया गया। किसी प्रकार से कार्य सम्पन्न हुआ। वर ने ठीक से मंत्र भी नहीं पढ़ा।"

रातुल ने पूछा—"फिर क्या हुआ ?"

जया की माँ ने कहा—"यह सब दृश्य देखकर मैं तो उस दिन बेहोश हो गयी थी। जब होश में आयी तब पता लगा कि दामाद-लड़की चले गये हैं। बाद में सुना कि वहाँ कोई रस्म नहीं हुई। भगवान् जाने यह कैसा विवाह हुआ ?"

रातुल ने कहा—"अब सारी बातें समझ में आ गयीं। मुझे भी कुछ-कुछ याद आ रहा है। काफी दिन पहले जिस दिन आपकी लड़की की शादी हुई थी, उस दिन मैंने ही आपकी लड़की को बचाया था। इन्हें ले जाकर थाने पर रखा था।"

यह बात सुनते ही जया माँ ने कहा—"सच ? क्या आप वही दरोगा साहब हैं ?"

रातुल ने कहा—"हाँ। उस नौकरी को छोड़कर आजकल इस नयी कम्पनी में नौकरी कर रहा हूँ। पुलिस की नौकरी मुझे पसन्द नहीं आयी।"

माँ ने कहा—"यह अच्छा हुआ। एक बार तुमने मेरी बेटी को बचाया था। इस बार भी बचा लो।"

रातुल ने कहा—"इसमें समय लगेगा। जब तक कचहरी से फैसला नहीं होगा तब तक इन्तजार करना पड़ेगा।"

माँ ने कहा—"अगर यहाँ कुछ दिन और रहेगी तो किसी दिन दामाद ही इसे मार डालेगा। यहाँ से हटकर अन्यत्र कहीं चली जाय तब चाहे कितनी बार अदालत दौड़ना पड़े, कम-से-कम मेरी लड़की जीवित तो रहेगी।"

कुछ देर चुप रहने के बाद माँ ने पुनः कहा—"नहीं बेटा, अब एतराज मत करो। मेरी आँखों के सामने मेरी बेटी की मौत हो जाय, इसे मैं बर्दाश्त नहीं कर सकूँगी।"

रातुल ने कहा—"मेरे माता-पिता अभी जीवित हैं। उनसे बिना राय लिये मैं कुछ कह नहीं सकता।"

"अगर उन लोगों की राय न हुई तो क्या मेरी लड़की की मौत

इसी घर में होगी ? क्या तुम भी यही चाहते हो वेटा ? तुम तो होशियार हो, वुद्धिमान् हो, तुम किससे विवाह करोगे या नहीं करोगे, इसे स्वयं तुम समझोगे। मैं कालीघाटवाले मन्दिर में जाकर अपने सामने विवाह कराऊँगी। वहाँ अनेक पुरोहित हैं। वे लोग सारी व्यवस्था कर देंगे। अब तुम इस विषय में 'ना' मत कहो।"

मैंने पूछा—"इसके वाद क्या हुआ ? क्या उन दोनों का विवाह हुआ ?"

हरिपद ने कहा—"सर, आज यहीं तक रहने दें। मुझे तुरत एक जगह जाना है। वड़ा जरूरी काम है। अव मुझे आज्ञा दीजिए।"

हरिपद का यही स्वभाव है। कहानी जव सस्पेन्स तक पहुँचती है तभी वह न जाने कहाँ अन्तर्धान हो जाता है। उस वक्त हरिपद को रोकना कठिन हो जाता है। वह चला जाता है।

खड़ा होकर उसने कहा—"कुछ रुपये चाहिए, सर।"

मैंने कहा—"अभी उस दिन तुम्हें दस रुपये दिये थे, फिर रुपये माँग रहे हो ?"

हरिपद ने कहा—"वगैर जरूरत के मैं कभी आपसे माँगता हूँ ? जरूरत है इसलिए आपके आगे हाथ फैला रहा हूँ।"

इस वार भी रुपये लेकर वह चला गया। इसके वाद एक अर्से तक नहीं आया। फिर अचानक एक दिन आ गया।

मैंने कहा—"आ गये ? मैं एक अर्से से तुम्हें खोज रहा हूँ। अगर तुम्हारा वर्तमान पता मालूम रहता तो वहाँ जाकर पता लगाता। तुमने अभी तक अपना नया पता भी नहीं वताया।"

हरिपद ने कहा—"वताऊँगा सर, अव किसी दिन वता दूँगा। आजकल वड़ी परेशानी में हूँ।"

मैंने कहा—"अपनी कहानी वीच ही में छोड़कर चले गये। इसके वाद कितनी घटनाएँ हुईं वताओ।"

हरिपद से पूरी कहानी सुन लेना कठिन कार्य है। थोड़ी कहानी सुनाने के वाद गायव हो जाता है।

मैंने कहा—"इसके वाद क्या हुआ, उसे सुनाओ।"

हरिपद को सारी वातों की जानकारी थी। राय साहव से जया

भी ठीक से नहीं हुआ था। विवाह-मण्डप में बैठने के कुछ देर बाद दामाद न जाने कहाँ चला गया। हमारे पुरोहित ने उसी समय कहा था—'ऐसा अधर्मवाला काम मुझसे नहीं होगा।' बाद में दो-तीन घण्टे बाद वर आया तब पड़ोस से एक नये पुरोहित को बुलाया गया। किसी प्रकार से कार्य सम्पन्न हुआ। वर ने ठीक से मंत्र भी नहीं पढ़ा।"

रातुल ने पूछा—"फिर क्या हुआ ?"

जया की माँ ने कहा—"यह सब दृश्य देखकर मैं तो उस दिन बेहोश हो गयी थी। जब होश में आयी तब पता लगा कि दामाद-लड़की चले गये हैं। बाद में सुना कि वहाँ कोई रस्म नहीं हुई। भगवान् जाने यह कैसा विवाह हुआ ?"

रातुल ने कहा—"अब सारी बातें समझ में आ गयीं। मुझे भी कुछ-कुछ याद आ रहा है। काफी दिन पहले जिस दिन आपकी लड़की की शादी हुई थी, उस दिन मैंने ही आपकी लड़की को बचाया था। इन्हें ले जाकर थाने पर रखा था।"

यह बात सुनते ही जया माँ ने कहा—"सच ? क्या आप वही दरोगा साहब हैं ?"

रातुल ने कहा—"हाँ। उस नौकरी को छोड़कर आजकल इस नयी कम्पनी में नौकरी कर रहा हूँ। पुलिस की नौकरी मुझे पसन्द नहीं आयी।"

माँ ने कहा—"यह अच्छा हुआ। एक बार तुमने मेरी बेटी को बचाया था। इस बार भी बचा लो।"

रातुल ने कहा—"इसमें समय लगेगा। जब तक कचहरी से फैसला नहीं होगा तब तक इन्तजार करना पड़ेगा।"

माँ ने कहा—"अगर यहाँ कुछ दिन और रहेगी तो किसी दिन दामाद ही इसे मार डालेगा। यहाँ से हटकर अन्यत्र कहीं चली जाय तब चाहे कितनी बार अदालत दौड़ना पड़े, कम-से-कम मेरी लड़की जीवित तो रहेगी।"

कुछ देर चुप रहने के बाद माँ ने पुनः कहा—"नहीं बेटा, अब एतराज मत करो। मेरी आँखों के सामने मेरी बेटी की मौत हो जाय, इसे मैं बर्दाश्त नहीं कर सकूँगी।"

रातुल ने कहा—"मेरे माता-पिता अभी जीवित हैं। उनसे बिना राय लिये मैं कुछ कह नहीं सकता।"

"अगर उन लोगों की राय न हुई तो क्या मेरी लड़की की मौत

इसी घर में होगी ? क्या तुम भी यही चाहते हो बेटा ? तुम तो होशि यार हो, बुद्धिमान् हो, तुम किससे विवाह करोगे या नहीं करोगे, इ स्वयं तुम समझोगे। मैं कालीघाटवाले मन्दिर में जाकर अपने साम विवाह कराऊँगी। वहाँ अनेक पुरोहित हैं। वे लोग सारी व्यवस्था क देंगे। अब तुम इस विषय में 'ना' मत कहो।"

मैंने पूछा—"इसके बाद क्या हुआ ? क्या उन दोनों का विवा हुआ ?"

हरिपद ने कहा—"सर, आज यहीं तक रहने दें। मुझे तुरत ए जगह जाना है। बड़ा जरूरी काम है। अब मुझे आज्ञा दीजिए।"

हरिपद का यही स्वभाव है। कहानी जब सस्पेन्स तक पहुँचती तभी वह न जाने कहाँ अन्तर्धान हो जाता है। उस वक्त हरिपद क रोकना कठिन हो जाता है। वह चला जाता है।

खड़ा होकर उसने कहा—"कुछ रुपये चाहिए, सर।"

मैंने कहा—"अभी उस दिन तुम्हें दस रुपये दिये थे, फिर रुप माँग रहे हो ?"

हरिपद ने कहा—"बगैर जरूरत के मैं कभी आपसे माँगता हूँ जरूरत है इसलिए आपके आगे हाथ फैला रहा हूँ।"

इस बार भी रुपये लेकर वह चला गया। इसके बाद एक अर्से त नहीं आया। फिर अचानक एक दिन आ गया।

मैंने कहा—"आ गये ? मैं एक अर्से से तुम्हें खोज रहा हूँ। अग तुम्हारा वर्तमान पता मालूम रहता तो वहाँ जाकर पता लगाता तुमने अभी तक अपना नया पता भी नहीं बताया।"

हरिपद ने कहा—"बताऊँगा सर, अब किसी दिन बता दूँगा आजकल बड़ी परेशानी में हूँ।"

मैंने कहा—"अपनी कहानी बीच ही में छोड़कर चले गये। इस बाद कितनी घटनाएँ हुईं बताओ।"

हरिपद से पूरी कहानी सुन लेना कठिन कार्य है। थोड़ी कहा सुनाने के बाद गायब हो जाता है।

मैंने कहा—"इसके बाद क्या हुआ, उसे सुनाओ।"

हरिपद को सारी बातों की जानकारी थी। राय साहब से जय

की कितनी बातें हुई थीं, इसे भी वह सुन चुका है। नानीजी से राय साहब की कितनी बातचीत हुई, इन सबकी जानकारी उसे है।

पन्द्रह दिन के बाद सरोज दादा बाबू जलपाईगुड़ी की कान्फ्रेंस से वापस आये तो सहसा जया माँ की शक्ल देखते ही चकित रह गये। न पहचानने लायक साज-शृंगार करके जया माँ बैठी थीं।

दादा बाबू ने पूछा—"यह क्या? यह सब क्या है? माँग में सिन्दूर, हाथ में कंगन, यह रंगीन साड़ी। बात क्या है? यह सब क्यों पहन रखा है? पहले तो यह सब नहीं पहनती थी। अब अचानक क्यों शौक चर्राया?"

जया ने कहा—"मेरी इच्छा हुई इसलिए पहनी।"

दादा बाबू ने पूछा—"सच बताओ, क्या बात है?"

"मैं सधवा महिला हूँ इसलिए सोहाग की चीजें पहनी हूँ।"

दादा बाबू ने कहा—"तुम्हारे साथ विवाह हुए काफी दिन गुजर चुके हैं, पर आज के पहले कभी इस तरह शृंगार करते नहीं देखा। आज अचानक क्यों यह सब धारण किया है?"

जया ने कहा—"पहनने की इच्छा हुई तो पहन लिया।"

दादा बाबू ने कहा—"यहाँ आते ही मुझे पता चला कि अब तुम 'ला ब्लू' होटल में नहीं जाती। क्यों नहीं जाती? आखिर इतने रुपयों की हानि क्यों कर रही हो?"

जया माँ ने कहा—"क्या मुझे अपने सभी कार्यों की कैफियत देनी होगी?"

दादा बाबू—"जरूर। तुम्हें कैफियत देनी पड़ेगी।"

जया ने कहा—"तो सुनो! मैं 'मिस हट' बनकर अब कभी कैबरे नृत्य नहीं करूँगी। मुझे इस कार्य से नफरत हो गयी है।"

"अच्छा, यह बात है। इतने दिनों बाद यह बात कह रही हो?"

जया माँ ने कहा—"काफी दिनों से कैबरे-नृत्य के प्रति मेरे मन में नफरत थी, पर निरन्तर सहन करते-करते संयम का बाँध टूट गया। अब मुझसे नहीं होगा। मैं भी एक इन्सान हूँ। सिर्फ इन्सान ही नहीं, एक सधवा औरत हूँ। घर की बहू होकर क्या अन्य महिलाओं की तरह घर-गृहस्थी का कार्य नहीं कर सकती? अन्य महिलाओं की तरह पति की सेवा, बच्चों का लालन-पालन आदि करने की इच्छा क्या मेरी नहीं होती? लेकिन तुम मुझे यह सब करने नहीं देना चाहते।

मैंने ऐसा कौन-सा पाप किया है जो घर-गृहस्थ की बहू होकर किराये पर काम करती रहूँ ?"

दादा बाबू ने कहा—"आखिर इतने दिनों बाद आज यह समस्या क्यों उत्पन्न हुई ? आज के पहले तुमने कभी ऐसी शिकायत नहीं की। सिर्फ मेरी बातें सुनती आयी हो। न तो कभी सिन्दूर लगाती थी और न कंगन पहनती थी। आज इतने दिनों बाद यह सब पहनने की इच्छा क्यों हुई ?"

जया ने कहा—"इसके पहले कह चुकी हूँ। याद करो।"

"पहले कब कहा था ?"

जया ने कहा—"मैं नित्य काली मन्दिर दर्शन करने जाती थी। क्या तुमने मन्दिर जाने के लिए मना नहीं किया था ?"

"हाँ, मना किया था। क्योंकि मैं देवता-सेवता को नहीं मानता। यह सब मेरी दृष्टि में बकवास है।"

जया माँ ने कहा—"याद है, सरस्वती-पूजा करने की इच्छा से एक बार मैं बाजार से मूर्ति खरीद लायी थी और पूजा करते समय तुमने सरस्वती देवी की मूर्ति पर जूता फेंककर उसे तोड़ दिया था। क्या यह सब मैं भूल गयी हूँ या इन्हें भुलाया जा सकता है ?"

दादा बाबू ने कहा—"यह सब बाबा आदम के जमाने की बातें हैं। आज इतने दिनों बाद उस कीचड़ को छेड़ने से कोई लाभ नहीं है।"

जया माँ ने कहा—"इससे कोई लाभ नहीं है, यह ठीक है, पर कोई नुकसान भी तो नहीं है।"

दादा बाबू ने कहा—"जब इससे कोई लाभ नहीं है तब इन घटनाओं को मन में क्यों सँजो रखा है ? मन में सँजोकर रखने से तबीयत खराब होती है, यह भी तो नुकसानदेह है।"

जया माँ ने कहा—"मन में इन घटनाओं को सँजोकर रखने से यही लाभ है कि तुमने मेरा कितना नुकसान किया है, तुमने मुझे कितना धोखा दिया है, तुमने मुझे कितनी पीड़ा पहुँचायी है, कितना क़ष्ट दिया है, यह सारी बातें बराबर मेरे मन में बनी रहें और यही वजह है कि मैं हर वक्त तुमसे प्रतिशोध लेने को तैयार रहती हूँ। मेरी माँग का यह सिन्दूर, मेरे हाथों के कंगन आदि उसी प्रतिशोध के प्रतीक हैं। इसके अलावा और कुछ नहीं।"

दादा बाबू कुछ समझ नहीं पाये। उन्होंने पूछा—"क्या कहना चाहती हो?"

जया माँ ने कहा—"कहना यह चाहती हूँ कि मैंने एक और व्यक्ति से विवाह कर लिया है।"

"क्या कहा?"

दादा बाबू क्रोध से फट पड़े। बोले—"तुमने मुझे दगा दिया?"

जया माँ ने कहा—"हाँ, एक दिन तुमने भी मुझे दगा दिया था। ठीक उसी तरह आज तुम्हें दगा देकर मैंने अपना बदला ले लिया।"

दादा बाबू ने कहा—"अच्छा! निकल जाओ मेरे घर से। निकलो। गेट आउट, गेट आउट।"

जया माँ ने कहा—"मैं यह जानती थी कि एक दिन तुम यही कहोगे। इसके लिए मैं पहले से तैयार थी। लो, यह देखो। अपना सामान पहले से ही ठीक करके रख छोड़ा था। इस घर को हमेशा के लिए छोड़कर जाने को तैयार बैठी थी। भविष्य में मैं तुम्हारे घर कभी कदम रखने नहीं आऊँगी।"

"तुम्हें आने की भी जरूरत नहीं है। अब एक क्षण के लिए यहाँ मत ठहरो। गेट आउट, गेट आउट फ्रॉम हियर, दूर हो जाओ।"

जया माँ ने हरिपद को बुलाकर कहा—"हरिपद, ले, इस सूटकेस को लेकर चल।"

हरिपद भी तैयार था। सूटकेस उठाकर वह चुपचाप अपनी जया माँ के पीछे चलने को तैयार हुआ।

तभी दादा बाबू ने कहा—"हरिपद, तू कहाँ जा रहा है; बोल, कहाँ जा रहा है?"

हरिपद ने कहा—"मैं कहाँ जाऊँगा? मेरी माँ जहाँ ले जायेंगी, वहीं जाऊँगा।"

सड़क पर कुछ दूर पैदल चलने के बाद एक टैक्सी मिली। उसे रोककर दोनों उस पर सवार हुए। इसके बाद टैक्सी तीर की तरह उत्तर दिशा की ओर चल पड़ी।

हरिपद ने कहा—"मैंने अपने जिस पते के बारे में आपसे कहा था, वहाँ कैसे पहुँचा था, अब उसके बारे में सुनिये।"

वह कहानी अत्यन्त दुःखद है, दुःख की बातें हैं। मेरी जया माँ का जीवन बहुत दुःखपूर्ण है। पहले मैं अक्सर यही सोचता था कि इस

संसार में सबसे अधिक दु:खी मनुष्य मैं हूँ, पर आगे चलकर मैंने यह देखा कि मुझसे भी अधिक दु:खी कोई है तो वह मेरी जया माँ है।

जया उस दिन टैक्सी से सीधे राय साहब के ऑफिस में आयीं। हरिपद ही जया माँ को वहाँ ले गया था। राय साहब के ऑफिस में 'विजिटर्स वेटिंग रूम' था। अगर कोई व्यक्ति ऑफिस के किसी व्यक्ति से मिलने या किसी काम से आता तो उसे इसी कमरे में कुछ देर के लिए इन्तजार करना पड़ता था। ऐसे ही लोगों के लिए यह कक्ष बनवाया गया है। यहाँ बैठने तथा आराम करने की सारी सुविधाएँ हैं। उस कमरे में इन लोगों के आने के पहले से ही एक अन्य महिला प्रतीक्षा में बैठी थी।

रातुल राय अचानक हरिपद को देखकर अवाक् हो गया। कहा—"तुम ? तुम्हारा नाम शायद हरिपद है न ? तुम यहाँ अचानक कैसे आ गये ?"

हरिपद ने कहा—"जी हुजूर, मेरी माँ आयी हैं।"

"माँ ? तुम्हारी माँ कौन ?"

"जी, मेरी जया माँ।"

जया का नाम सुनते ही रातुल कुर्सी से उठकर खड़ा हो गया। इसके बाद वह बगल के कमरे में चला गया।

यहाँ आकर उसने जया को देखते ही पूछा—"यह क्या ? इस वक्त यहाँ कैसे आ गयी ?"

जया ने कहा—"बस, चली आयी।"

"चली आयी ? क्या मतलब ?"

"मैं मिस्टर सरकार का घर हमेशा के लिए छोड़कर चली आयी। वह देखो, सूटकेस में मेरा जितना सामान था, उसे लेकर तुम्हारे पास आ गयी।"

"क्या मिस्टर सरकार जलपाईगुड़ी से वापस आ गये ?"

"हाँ, आज ही वापस आये हैं। आज ही मैंने उन्हें सब कुछ बता दिया। यह ठीक ही हुआ। कम-से-कम आखिरी सूत्र को भी काट दिया। अब और कुछ दिन वहाँ रहती तो शायद मैं मर जाती। इस वक्त तुम्हारे अलावा मेरा कोई नहीं है। यही वजह है कि सबसे पहले तुम्हारी याद आयी।"

रातुल की शक्ल देखने पर जया ने अनुभव किया कि वह काफी

परेशान हो उठा है। इस वक्त वह इन्हें कहाँ ले जाकर रखेगा ? एक अर्सा पहले उसने मिस्टर सिन्हा के चक्कर से बचाया था। वह बात अलग किस्म की थी। लेकिन इस वक्त ? इस वक्त तो पति के चंगुल से बचाने की समस्या है।

कमरे में एक प्रतीक्षारत महिला बैठी थी। उसकी ओर देखते हुए रातुल ने पूछा—"क्यों मिसेज आहुजा, आपकी बगल में जो फ्लैट है, उसमें रहनेवाले बाहर गये हुए हैं न ?"

मिसेज आहुजा ने कहा—"जी हाँ। मिस्टर राय, वे लोग ट्रेनिंग के सिलसिले में मिडिल ईस्ट तीन महीने के लिए गये हैं। इस वक्त तो तीन महीने के लिए वह फ्लैट खाली है।"

इसी समस्या पर बातें हो रही थीं कि ठीक इसी समय मिस्टर आहुजा भीतर आये। रातुल ने सारी बातें संक्षेप में उन्हें सुनायीं।

जया माँ के यहाँ रहते हुए हरिपद बराबर इस बात पर गौर करता रहा कि संसार में सुख क्या चीज है, इसे आज तक कोई नहीं जान सका। उदाहरण के लिए आहुजा दम्पति को लीजिए। इनके पास अथाह धन है, बढ़िया फ्लैट है, अच्छा स्वास्थ्य है, फिर भी ये लोग सुखी नहीं हैं। आखिर ये लोग सुखी क्यों नहीं हैं ?

इसीलिए हरिपद अक्सर कहा करता था—"मैं यह बात प्रारम्भ से देखता आ रहा हूँ कि जो लोग फुटपाथ को अपना घर समझकर रहते हैं, वहीं जिन्दगी गुजार देते हैं, वे ही लोग सबसे सुखी हैं।"

मैं पूछता—"वह कैसे ? तुम्हें कैसे मालूम ?"

हरिपद कहता—"मिसेज आहुजा ने मुझे यही बताया है। अब आप सोचिये कि इतने बड़े आदमी हैं, उनके पास पर्याप्त धन है, लेकिन हैं कष्ट में।"

"कैसा कष्ट ?"

हरिपद ने बताया—"उनका एक ही लड़का है। यही दस वर्ष का होगा, पर वह पूरा पागल है। इस लड़के का पालने-पोसने से लेकर अच्छे-से-अच्छे डॉक्टर से इलाज कराया। उस लड़के के लिए क्या नहीं किया ? कभी मद्रास के वेल्लोर में तो कभी जर्मनी में और कभी अमेरिका इलाज कराने गये। उसके पीछे लाखों रुपये खर्च कर चुके हैं। केवल एक पागल लड़के के लिए। न जाने कितने साधुओं और ज्योतिषियों के पास गये, पर कुछ नहीं हुआ। अच्छा सर, यह बताइये कि आखिर ऐसा क्यों होता है ? क्या रहस्य है ? सर, आप तो काफी

पढ़े-लिखे हैं। न जाने कितने लोगों को आपने देखा है, न जाने कहाँ-कहाँ भ्रमण कर चुके हैं। आपका अनुभव मुझसे कहीं अधिक है। अव वताइये कि आखिर ऐसा क्यों होता है ? क्यों जया माँ की माँ को इतने अच्छे लड़कों के मौजूद रहते उन्हें गृहस्थी में नौकरानी की तरह जीना पड़ रहा है ? अमेरिका से उनका वड़ा लड़का प्रतिमास एक हजार रुपये भेजता है, फिर भी उन्हें अर्थाभाव होता है ? मिस्टर तथा मिसेज आहुजा के पास इतने सुन्दर ढंग से सजाया हुआ फ्लैट, अथाह धन रहते उनके घर ऐसा विकलांग–पागल लड़का पैदा क्यों हुआ ? जया माँ को लीजिए, विवाह के वाद पति की ओर से कभी उन्हें सुख-शान्ति प्राप्त नहीं हुई। आखिर लोग वार-वार शान्ति शव्द की चर्चा क्यों करते हैं ? मनुष्य को जन्म देनेवाले उस विधाता को आखिर मानव को कष्ट देने से कौन-सा फायदा होता है ? आप साहित्यिक व्यक्ति हैं, इस समस्या पर प्रकाश डाल सकते हैं। अगर आप मन-गढ़न्त कहानियाँ लिखने के अलावा कुछ नहीं कर सकते तो आप कैसे साहित्यिक हैं ? अपनी रचनाओं के जरिये लोगों को मूर्ख वनाते हैं, इससे आपको क्या लाभ होता है ? एक वात को सुन लीजिए सर, अगर आप नहीं लिखेंगे तो संसार के लोगों का कोई नुकसान नहीं होगा। सर, मैं यह सारी वातें शिवशंकर वावू से भी कह चुका हूँ।"

हरिपद की इन वातों पर मैं ध्यान नहीं देता और न इन पर गौर किया जा सकता है, पर ये सारी वातें विलकुल झूठ हैं, इसे हलफ उठाकर नहीं कह सकता।

उसे रोककर मैंने कहा—"यह सव वेकार की वातें रहने दो। इसके वाद क्या हुआ, यह वताओ। क्या इस परिवार के साथ रहने लगे ?"

इसी समय से हरिपद मिस्टर आहुजा के मकान में रहने लगा। उस फ्लैट में चार कमरे थे। फिलहाल जया माँ यहाँ तीन माह तक रह सकती हैं। इसी वीच अन्यत्र कहीं न कहीं रातुल को फ्लैट का प्रवंध करना पड़ेगा। वह इसलिए कि फ्लैट का असली किरायेदार जव तीन महीने वाद वापस आयेगा तव जया माँ को फ्लैट खाली कर देना पड़ेगा।

लेकिन यह कौन जानता था कि तीन महीने पूरे होने के पहले ही वह दुर्घटना हो जायगी जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती थी।

दरअसल वह एक भयंकर दुर्घटना थी। खासकर हरिपद और जया माँ के जीवन की सबसे मार्मिक दुर्घटना थी।

मकान की दूसरी मंजिल में मिस्टर और मिसेज आहुजा एवं उनका विकलांग लड़का रहते थे। लड़के की देखरेख के लिए दो नर्सों की ड्यूटी लगी हुई थी। पारी-पारी से दोनों लड़के की सेवा तथा देखरेख करती थीं। एक दिन में और दूसरी रात में रहती थी। लड़के को देखने के लिए अक्सर डॉक्टर आता और तरह-तरह की दवाओं का प्रेसक्रिप्शन लिखता था।

जया माँ नीचेवाली पहली मंजिल में रहती थीं। यहाँ रहते हुए भी जया माँ पहले की तरह नित्य भोर में काली मंदिर दर्शन करने जाती थीं। लौटते वक्त सिर पर लाल टीका लगाती थीं।

और रातुल राय ?

रातुल राय नित्य माँ के पास आता था। सरोज सरकार नामक एक पुरुष कभी जया माँ के जीवन में आया था जिसकी स्मृतियाँ अंगीभूत हो गयी थीं। आजकल उसकी समस्त स्मृतियाँ दुःस्वप्न की भाँति न जाने कहाँ अदृश्य हो गयी हैं। जया माँ खाली समय में बोर न हों, इसलिए रातुल राय एक टी० वी० खरीदकर दे गये थे। इसके साथ ही कुछ पुस्तकें भी।

जया माँ अक्सर उनसे पूछतीं—"क्या हुआ ? तुम्हारे माँ-बाप राजी हुए ?"

रातुल हमेशा की तरह एक ही जवाब देता—"नहीं।"

पुनः दो-चार दिन बाद जया माँ पूछतीं—"क्या हुआ ? तुम्हारे माता-पिता से अनुमति मिली ? वे लोग राजी हुए ?"

रातुल भी सधे हुए स्वर में कहता—"नहीं।"

जया माँ कहतीं—"तुम शायद उन्हें ठीक से समझाकर नहीं कह पाते हो। न हो, एक दिन मुझे उनके पास ले चलो। मेरे जाने पर वे लोग मेरी बातें ठीक से समझ सकेंगे।"

रातुल कहता—"तुम्हारे जाने से कोई फायदा नहीं होगा। उनका कहना है कि अपने पहले पति से अगर तलाक ले आ सको तो वे तुम्हारे साथ मेरा विवाह करने के लिए राजी हो सकते हैं। वे लोग कोर्ट का आर्डर देखना चाहते हैं तभी अपनी स्वीकृति देंगे। इसके पहले कोई बात नहीं करेंगे।"

अक्सर बीच-बीच में जया माँ के मन में दु:स्वप्न के काले बादल आते और उनकी आँखों के आगे छा जाते थे। हरिपद ऐसे मौके पर गौर से उनकी ओर देखता। जया माँ खिड़की के पास बैठी बाहर आसमान की ओर देखती हुई मन में न जाने क्या-क्या सोचा करती थीं।

इधर रातुल भी दुश्चिन्ताग्रस्त हो गया था। बात करते वक्त अक्सर उसकी जबान लटपटाकर रुक जाती थी। एक जमाना वह भी था जब वह स्वयं ही अपने को संकट में डालकर दूसरों को बचाया करता था। न जाने कितनी महिलाओं को 'महिला आश्रम' में पहुँचा आया है। इस कार्य से उसे संतोष मिलता था। लेकिन इस बार? इस बार वह क्या करे?

कभी कहता—"जानती हो, हमारे मुल्क की अजीब हालत है। सुना है कि अमेरिका में विवाह करने में छह माह लगते हैं, पर विवाह-भंग यानी डिवोर्स करने में एक मिनट भी नहीं लगता। लेकिन हमारे मुल्क का नियम उल्टा है। यहाँ विवाह करने में एक मिनट भी नहीं लगता, पर विवाह-विच्छेद में एक से पाँच साल तक लग जाते हैं।"

लेकिन यह सब सोचने से क्या फायदा है? इस बारे में सोचने पर कुछ हासिल नहीं होगा।

अक्सर रातुल के दिमाग में विचित्र बातें जन्म लेतीं। वास्तव में उसकी कल्पना अद्भुत होती थी। ऑफिस में कार्य करते समय भी वह इन्हीं बातों को सोचा करता था।

घर पर पिताजी उससे कहते—"तुम्हारे कारण इस बुढ़ापे में हम लोग उपहास के पात्र बनें, क्या यही चाहते हो? सोचो जरा, हमारे नाते-रिश्तेदार हैं। उनका मुँह हम कैसे बन्द करेंगे? आगे चलकर कहीं कचहरी से तुम्हारे नाम सम्मन आयेगा तब क्या होगा? अगर यह घटना अखबारों में छप गयी तब क्या होगा? अखबारवाले कैसे हैं, यह बात तुम्हें नये सिरे से समझाने की जरूरत नहीं है।"

माँ कहतीं—"शादी अगर करनी ही है तो क्या देश में लड़कियों की कमी है? तू कितनी लड़कियाँ देखना चाहता है? यही बता—दूसरे की पत्नी से शादी करनी ही होगी; यह कोई माने रखता है?"

दरअसल वह एक भयंकर दुर्घटना थी। खासकर हरिपद और जया माँ के जीवन की सबसे मार्मिक दुर्घटना थी।

मकान की दूसरी मंजिल में मिस्टर और मिसेज आहुजा एवं उनका विकलांग लड़का रहते थे। लड़के की देखरेख के लिए दो नर्सों की ड्यूटी लगी हुई थी। पारी-पारी से दोनों लड़के की सेवा तथा देखरेख करती थीं। एक दिन में और दूसरी रात में रहती थी। लड़के को देखने के लिए अक्सर डॉक्टर आता और तरह-तरह की दवाओं का प्रेसक्रिप्शन लिखता था।

जया माँ नीचेवाली पहली मंजिल में रहती थीं। यहाँ रहते हुए भी जया माँ पहले की तरह नित्य भोर में काली मंदिर दर्शन करने जाती थीं। लौटते वक्त सिर पर लाल टीका लगाती थीं।

और रातुल राय?

रातुल राय नित्य माँ के पास आता था। सरोज सरकार नामक एक पुरुष कभी जया माँ के जीवन में आया था जिसकी स्मृतियाँ अंगीभूत हो गयी थीं। आजकल उसकी समस्त स्मृतियाँ दुःस्वप्न की भाँति न जाने कहाँ अदृश्य हो गयी हैं। जया माँ खाली समय में बोर न हों, इसलिए रातुल राय एक टी० वी० खरीदकर दे गये थे। इसके साथ ही कुछ पुस्तकें भी।

जया माँ अक्सर उनसे पूछतीं—"क्या हुआ? तुम्हारे माँ-बाप राजी हुए?"

रातुल हमेशा की तरह एक ही जवाब देता—"नहीं।"

पुनः दो-चार दिन बाद जया माँ पूछतीं—"क्या हुआ? तुम्हारे माता-पिता से अनुमति मिली? वे लोग राजी हुए?"

रातुल भी सधे हुए स्वर में कहता—"नहीं।"

जया माँ कहतीं—"तुम शायद उन्हें ठीक से समझाकर नहीं कह पाते हो। न हो, एक दिन मुझे उनके पास ले चलो। मेरे जाने पर वे लोग मेरी बातें ठीक से समझ सकेंगे।"

रातुल कहता—"तुम्हारे जाने से कोई फायदा नहीं होगा। उनका कहना है कि अपने पहले पति से अगर तलाक ले आ सको तो वे तुम्हारे साथ मेरा विवाह करने के लिए राजी हो सकते हैं। वे लोग कोर्ट का आर्डर देखना चाहते हैं तभी अपनी स्वीकृति देंगे। इसके पहले कोई बात नहीं करेंगे।"

अक्सर वीच-बीच में जया माँ के मन में दुःस्वप्न के काले वादल आते और उनकी आँखों के आगे छा जाते थे। हरिपद ऐसे मौके पर गौर से उनकी ओर देखता। जया माँ खिड़की के पास वैठी वाहर आसमान की ओर देखती हुई मन में न जाने क्या-क्या सोचा करती थीं।

इधर रातुल भी दुश्चिन्ताग्रस्त हो गया था। वात करते वक्त अक्सर उसकी जवान लटपटाकर रुक जाती थी। एक जमाना वह भी था जव वह स्वयं ही अपने को संकट में डालकर दूसरों को वचाया करता था। न जाने कितनी महिलाओं को 'महिला आश्रम' में पहुँचा आया है। इस कार्य से उसे संतोष मिलता था। लेकिन इस वार? इस बार वह क्या करे?

कभी कहता—"जानती हो, हमारे मुल्क की अजीव हालत है। सुना है कि अमेरिका में विवाह करने में छह माह लगते हैं, पर विवाह-भंग यानी डिवोर्स करने में एक मिनट भी नहीं लगता। लेकिन हमारे मुल्क का नियम उल्टा है। यहाँ विवाह करने में एक मिनट भी नहीं लगता, पर विवाह-विच्छेद में एक से पाँच साल तक लग जाते हैं।"

लेकिन यह सब सोचने से क्या फायदा है? इस वारे में सोचने पर कुछ हासिल नहीं होगा।

अक्सर रातुल के दिमाग में विचित्र वातें जन्म लेतीं। वास्तव में उसकी कल्पना अद्भुत होती थी। ऑफिस में कार्य करते समय भी वह इन्हीं वातों को सोचा करता था।

घर पर पिताजी उससे कहते—"तुम्हारे कारण इस वुढ़ापे में हम लोग उपहास के पात्र वनें, क्या यही चाहते हो? सोचो जरा, हमारे नाते-रिश्तेदार हैं। उनका मुँह हम कैसे वन्द करेंगे? आगे चलकर कहीं कचहरी से तुम्हारे नाम सम्मन आयेगा तव क्या होगा? अगर यह घटना अखबारों में छप गयी तव क्या होगा? अखवारवाले कैसे हैं, यह वात तुम्हें नये सिरे से समझाने की जरूरत नहीं है।"

माँ कहतीं—"शादी अगर करनी ही है तो क्या देश में लड़कियों की कमी है? तू कितनी लड़कियाँ देखना चाहता है? यही वता—दूसरे की पत्नी से शादी करनी ही होगी; यह कोई माने रखता है?"

दरअसल वह एक भयंकर दुर्घटना थी। खासकर हरिपद और जया माँ के जीवन की सबसे मार्मिक दुर्घटना थी।

मकान की दूसरी मंजिल में मिस्टर और मिसेज आहूजा एवं उनका विकलांग लड़का रहते थे। लड़के की देखरेख के लिए दो नर्सों की ड्यूटी लगी हुई थी। पारी-पारी से दोनों लड़के की सेवा तथा देखरेख करती थीं। एक दिन में और दूसरी रात में रहती थी। लड़के को देखने के लिए अक्सर डॉक्टर आता और तरह-तरह की दवाओं का प्रेसक्रिप्शन लिखता था।

जया माँ नीचेवाली पहली मंजिल में रहती थीं। यहाँ रहते हुए भी जया माँ पहले की तरह नित्य भोर में काली मंदिर दर्शन करने जाती थीं। लौटते वक्त सिर पर लाल टीका लगाती थीं।

और रातुल राय ?

रातुल राय नित्य माँ के पास आता था। सरोज सरकार नामक एक पुरुष कभी जया माँ के जीवन में आया था जिसकी स्मृतियाँ अंगीभूत हो गयी थीं। आजकल उसकी समस्त स्मृतियाँ दुःस्वप्न की भाँति न जाने कहाँ अदृश्य हो गयी हैं। जया माँ खाली समय में बोर न हों, इसलिए रातुल राय एक टी० वी० खरीदकर दे गये थे। इसके साथ ही कुछ पुस्तकें भी।

जया माँ अक्सर उनसे पूछतीं—"क्या हुआ ? तुम्हारे माँ-बाप राजी हुए ?"

रातुल हमेशा की तरह एक ही जवाब देता—"नहीं।"

पुनः दो-चार दिन बाद जया माँ पूछतीं—"क्या हुआ ? तुम्हारे माता-पिता से अनुमति मिली ? वे लोग राजी हुए ?"

रातुल भी सधे हुए स्वर में कहता—"नहीं।"

जया माँ कहतीं—"तुम शायद उन्हें ठीक से समझाकर नहीं कह पाते हो। न हो, एक दिन मुझे उनके पास ले चलो। मेरे जाने पर वे लोग मेरी बातें ठीक से समझ सकेंगे।"

रातुल कहता—"तुम्हारे जाने से कोई फायदा नहीं होगा। उनका कहना है कि अपने पहले पति से अगर तलाक ले आ सको तो वे तुम्हारे साथ मेरा विवाह करने के लिए राजी हो सकते हैं। वे लोग कोर्ट का आर्डर देखना चाहते हैं तभी अपनी स्वीकृति देंगे। इसके पहले कोई बात नहीं करेंगे।"

अक्सर बीच-बीच में जया माँ के मन में दुःस्वप्न के काले बादल आते और उनकी आँखों के आगे छा जाते थे। हरिपद ऐसे मौके पर गौर से उनकी ओर देखता। जया माँ खिड़की के पास बैठी बाहर आसमान की ओर देखती हुई मन में न जाने क्या-क्या सोचा करती थीं।

इधर रातुल भी दुश्चिन्ताग्रस्त हो गया था। बात करते वक्त अक्सर उसकी जबान लटपटाकर रुक जाती थी। एक जमाना वह भी था जब वह स्वयं ही अपने को संकट में डालकर दूसरों को बचाया करता था। न जाने कितनी महिलाओं को 'महिला आश्रम' में पहुँचा आया है। इस कार्य से उसे संतोष मिलता था। लेकिन इस बार? इस बार वह क्या करे?

कभी कहता—"जानती हो, हमारे मुल्क की अजीब हालत है। सुना है कि अमेरिका में विवाह करने में छह माह लगते हैं, पर विवाह-भंग यानी डिवोर्स करने में एक मिनट भी नहीं लगता। लेकिन हमारे मुल्क का नियम उल्टा है। यहाँ विवाह करने में एक मिनट भी नहीं लगता, पर विवाह-विच्छेद में एक से पाँच साल तक लग जाते हैं।"

लेकिन यह सब सोचने से क्या फायदा है? इस बारे में सोचने पर कुछ हासिल नहीं होगा।

अक्सर रातुल के दिमाग में विचित्र बातें जन्म लेतीं। वास्तव में उसकी कल्पना अद्भुत होती थी। ऑफिस में कार्य करते समय भी वह इन्हीं बातों को सोचा करता था।

घर पर पिताजी उससे कहते—"तुम्हारे कारण इस बुढ़ापे में हम लोग उपहास के पात्र बनें, क्या यही चाहते हो? सोचो जरा, हमारे नाते-रिश्तेदार हैं। उनका मुँह हम कैसे बन्द करेंगे? आगे चलकर कहीं कचहरी से तुम्हारे नाम सम्मन आयेगा तब क्या होगा? अगर यह घटना अखबारों में छप गयी तब क्या होगा? अखबारवाले कैसे हैं, यह बात तुम्हें नये सिरे से समझाने की जरूरत नहीं है।"

माँ कहतीं—"शादी अगर करनी ही है तो क्या देश में लड़कियों की कमी है? तू कितनी लड़कियाँ देखना चाहता है? यही बता—दूसरे की पत्नी से शादी करनी ही होगी; यह कोई माने रखता है?"

मुल्क में लड़कियों की कमी नहीं है, इस वारे में जितनी बुद्धि की आवश्यकता होती है, उससे अधिक रातुल के पास थी। दरअसल यहाँ बुद्धि का प्रश्न नहीं है। बुद्धि के वाहर अगर कुछ है तो वह इसे नहीं जानता।

मन या मन की अनुभूतियों को क्या कोई कभी तराजू पर तौल सका है या तौल सकता है ? आजकल विज्ञान के माध्यम से मानव की अनेक समस्याओं का समाधान हो रहा है, पर क्या यही मानव का अंतिम लक्ष्य है ? क्या यही मानव की अंतिम समस्या है ? आधुनिक विज्ञान का प्रधान आविष्कार है—'रोवट'। आजकल रोवट मानव के कार्यों का भागीदार वन रहा है। पर क्या रोवट यह वता सकता है कि मोनालिसा की मुस्कान का क्या रहस्य है, वह कैसा रहस्य है ? रोवट क्या हमारे आँसुओं को पोंछ सकता है ? क्या रोवट गुलाव के पौधों में फूल खिला सकता है ?

इन्हीं वातों की चिन्ता में रातुल का मन-मस्तिष्क गर्म हो जाता है।

एक दिन लड़की को खोजती हुई माँ आयीं। लड़की के नये फ्लैट को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हो उठीं। वोलीं—"यह मकान वहुत अच्छा है। मेरा दामाद रुचिवाला है।"

जया हँस पड़ी। वोली—"पहले वह तुम्हारा दामाद वन जाय तव उसे मेरा दामाद कहना।"

माँ ने कहा—"रातुल जैसा बुद्धिमान् लड़का है, वह सव ठीक कर लेगा। कालीघाट में ले जाकर जव मैंने तुम दोनों का विवाह कराया है तव उसे दामाद नहीं कहूँगी तो क्या कहूँगी ?"

कुछ देर चुप रहने के वाद पुनः माँ अचानक वोल उठीं—"हाँ, एक वात तुझसे कहना भूल गयी। अमेरिका से सुशील ने पत्र भेजा है। तेरे वड़े भैया ने।"

जया ने पूछा—"क्या लिखा है ?"

माँ ने कहा—"तेरे वारे में सारी वातें लिख चुकी थी। उसने लिखा है—'जया को लेकर तुम लोगों ने यह क्या झमेला खड़ा किया है ? मैं यहाँ रहते हुए कुछ समझ नहीं पा रहा हूँ। मैं दो-चार दिन के भीतर कलकत्ता आ रहा हूँ। मैं स्वयं आकर सव ठीक कर दूँगा। चिन्ता करने की जरूरत नहीं। जया को कह देना कि वह चिन्तित न हो।' तेरे वड़े भैया का पत्र पाने पर जरा भरोसा हो गया। अच्छा,

अब मैं चलती हूँ। अच्छी तरह रहना। मौका मिलते ही मैं फिर आऊँगी।"

हरिपद दैनिक कार्य करते वक्त जया माँ के बारे में सोचता रहता है। कभी-कभी बाजार से सामान खरीदने के बाद घर वापस आते समय काली देवी के सामने जाकर हाथ जोड़ते हुए प्रणाम करता है। मन ही मन प्रार्थना करता है—'माँ, आप मेरी जया माँ पर कृपा करना। राय साहब पर भी दया करना। इन लोगों के मन को शान्ति देना। इन्हें सुखी बनाना। मेरी जया माँ की कोई नहीं है, कोई नहीं है।'

इसके बाद मंदिर की ड्योढ़ी पर दस मिनट तक माथा टेकने के बाद वापस आता था।

मानव का जीवन-मार्ग कितना विचित्र है, इस बात को लोग भले ही जानते हों, पर हरिपद को इसका रहस्य ज्ञात नहीं था। वह जया माँ की दिनचर्या देखकर जिस प्रकार चकित रहता, ठीक उसी प्रकार सुबीर घोष की दिनचर्या देखकर अवाक् हो जाता। और जब मिस्टर-मिसेज आहुजा के बारे में सोचता तब उस समय भी विस्मित रह जाता।

जब वह मेरे पास आकर अपने फुटपाथी जीवन के बारे में वर्णन करता तब उसकी अभिज्ञता में नयी बातें ज्ञात होती थीं।

वह कहता—"जानते हैं सर, मुझे इन्सान से सख्त नफरत है। सच पूछिये तो फुटपाथ की दुनिया बहुत अच्छी है। इनमें चाहे दोष हो, पर फुटपाथ के निवासी आदमी के रूप में भले हैं। सर, यहाँ के लोग गरीब हो सकते हैं, पर वही हैं असली इन्सान।"

रातुल राय अक्सर जया माँ के पास आते और बहुत सारी बातें कहते।

जया माँ पूछतीं—"कोई नया फ्लैट मिला ?"

रातुल कहता—"काफी जोर-शोर से तलाश कर रहा हूँ। अभी तक कोई अच्छा फ्लैट नहीं मिला।"

जया माँ कहतीं—"तीन माह बाद यह फ्लैट खाली कर देना

पड़ेगा, उस वक्त क्या होगा ? उस वक्त कहाँ रहूँगी ? देखते ही देखते एक अर्सा गुजर गया।"

रातुल कहता—"अच्छा, देखता हूँ।"

इसके अलावा वह और क्या कह सकता था ? कलकत्ता में जब जी चाहे तब फ्लैट पाना सहज बात नहीं है। फ्लैट पाना दूर की बात है, फुटपाथों पर कहीं एक इंच जगह पाने के लिए कोशिश-पैरवी करनी पड़ती है तब शायद जगह मिलती है। कौन पार्टी, किस फुटपाथ की मालिक है, इसकी जानकारी रखनी चाहिए तभी कोशिश सफल होती है।

हमेशा की तरह उस दिन भी रातुल आया। जया माँ ने प्रश्न किया—"तुम अपने माँ-बाप को राजी करा सके ?"

रातुल ने कहा—"मैंने काफी प्रयत्न किया, पर वे किसी तरह से राजी नहीं हो रहे हैं।"

जया माँ ने कहा—"आज मैं डॉक्टर के पास गयी थी।"

अचानक रातुल उत्सुक हो उठा। पूछा—"ओह हाँ, यह बात तो मैं भूल ही गया था। डॉक्टर साहब ने क्या कहा ?"

जया ने गंभीर स्वर में कहा—"रिपोर्ट पाजिटिव है।"

कहने के बाद जया माँ ने यूरीन टेस्ट की रिपोर्ट बेग से निकाल-कर दिखायी।

रिपोर्ट देखते ही रातुल के चेहरे पर भयावह आतंक की छाया घनीभूत हो गयी।

रातुल को चुप रहते देख जया ने पूछा—"अब क्या होगा ?"

इस बात का जवाब रातुल क्या दे, समझ नहीं पा रहा था।

जया ने पुनः पूछा—"क्या हुआ ? जवाब क्यों नहीं दे रहे हो ?"

इस वक्त रातुल को ऐसा लगा जैसे उसके ऊपर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा है। कहा—"क्या करूँ, समझ में नहीं आ रहा है।"

जया ने कहा—"जब तुम्हीं समझ नहीं पा रहे हो तब मैं औरत होकर क्या समझूंगी ?"

काफी देर बाद रातुल ने कहा—"एक काम करो।"

"कहिये।"

रातुल ने कहा—"आजकल तो इन कार्यों के लिए अनेक नर्सिंग होम खुले हुए हैं। वहाँ एक मिनट में सब ठीक हो जायगा। टरमिनेशन आव प्रेगनेन्सी, आजकल आम बात हो गयी है।"

जया ने कहा--"नहीं, मैं यह नहीं होने दूंगी।"

"नहीं कराओगी ?"

"नहीं।"

रातुल ने पूछा—"क्यों ? इसमें कोई रिस्क नहीं है। हजारों लड़कियाँ आजकल नित्य करा रही हैं। सरकार भी इसे गैरकानूनी कार्य नहीं मानती।"

जया ने कहा—"नहीं, फिर भी मैं नहीं कराऊँगी।"

"क्यों ? तुम्हें एतराज क्यों है ?"

जया ने कहा—"एतराज इसलिए है कि मैं माँ वनना चाहती हूँ।"

रातुल ने कहा—"तुम माँ वनना चाहती हो यह तो अच्छी वात है, पर उसके पिता का क्या परिचय दोगी ?"

जया ने कहा--"क्यों ? तुम उसके पिता होगे। तुम्हारे साथ तो मेरा सचमुच का विवाह हो गया है। माँ ने खड़े होकर विवाह कराया है। क्या तुम इसे अस्वीकार करोगे ?"

रातुल ने कहा—"वात यह नहीं है। मैं दूसरी वात सोच रहा हूँ।"

जया ने कहा--"दूसरी वात क्या ?"

रातुल ने कहा—"मैं मिस्टर सरकार के वारे में सोच रहा हूँ। अगर उन्हें मालूम हो गया तो वे क्या करेंगे ? कहीं कोई झमेला न खड़ा कर दें।"

जया ने कहा—"वे क्या झमेला खड़ा करेंगे। मेरे चले आने से उन्हें मुक्ति मिल गयी है। शायद अव तक किसी और लड़की से विवाह कर चुके होंगे। मुमकिन है कि उसे कहीं लगाकर पहले की तरह रकम वसूल कर रहे हों। मैं उस शख्स को अच्छी तरह पहचानती हूँ।"

रातुल ने कहा—"मगर तुम्हारे इस वच्चे की पदवी क्या होगी ? कार्पोरेशन के वर्थ रजिस्ट्रेशन आफिस के रेकर्ड में कौन-सी पदवी लिखवाओगी ?"

रातुल ने कहा—"मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैं सिर्फ मिस्टर

सरकार के बारे में सोच रहा हूँ। अगर उनकी ओर से कोई आपत्ति आयी तो ?"

जया ने कहा—"क्यों ? तुम्हारी जो पदवी है, बच्चे की वही पदवी लिखवाऊँगी। 'राय' पदवी होगी। इसमें तुम्हें कोई आपत्ति है ?"

जया ने कहा—"वे क्यों आपत्ति करेंगे ? उल्टे वह बच जायेंगे।"

रातुल ने कहा—"क्या यह बात तुम मिस्टर सरकार से लिखवा-कर ला सकती हो ?"

जया ने कहा—"जरूर लिखवा सकती हूँ। आज रहने दो, काफी दिन चढ़ आया है। कल भोर में जाऊँगी। मैं तो भोर के समय नित्य काली माँ का दर्शन करने जाती हूँ। वहीं से सीधे उनके यहाँ चली जाऊँगी।"

रातुल ने कहा—"तुम एक कागज पर यह लिखकर ले जाना कि इस बच्चे की पदवी 'राय' होने पर उन्हें कोई आपत्ति नही है। मैं इस बच्चे का पिता नहीं हूँ। उस कागज के नीचे अगर वे हस्ताक्षर कर देंगे तो फिर कोई झंझट नहीं रहेगा।"

जया ने कहा—"हस्ताक्षरवाला पत्र दिखाने पर तुम्हारे माता-पिता मुझे बहू के रूप में स्वीकार कर लेंगे ?"

रातुल ने कहा—"हाँ, तब तुम सीधे मेरे घर जा सकती हो। वैसी हालत में नये फ्लैट की तलाश में चक्कर नहीं काटना पड़ेगा। तुम उस पत्र में केवल उनका हस्ताक्षर करवाकर ले आओगी तो आगे सब ठीक हो जायगा।"

मैंने पूछा—"इसके बाद क्या हुआ ?"

हरिपद ने कहा—"अब आज नहीं, सर। इस वक्त आज्ञा दीजिए। सर, दस रुपये की जरूरत है। अधिक नहीं, सिर्फ दस रुपये देने से मेरा काम चल जायगा।"

मैंने कहा—"इस तरह अब तक न जाने कितने रुपये तुम्हें दे चुका हूँ। अब तक तुम मुझसे पाँच सौ रुपये ले चुके हो। याद है ? इतना

रुपया लेकर तुम करते क्या हो ? आज तक तुमने अपनी कहानी पूरी नहीं की और न अपना सही पता ही वताया ।"

लाचारी में उसे दस रुपये देने पड़े । रुपये लेकर उसने जेव में रख लिये । इसके वाद अपनी गंदी पोटली काँख के नीचे दवाकर वाहर निकल गया ।

काफी दिनों तक फिर उसकी शक्ल दिखाई नहीं दी । मैं उसकी प्रतीक्षा करता रहा । कभी-कभी उसके ऊपर क्रोध भी आता । मुझे ऐसा लगा जैसे पाँच सौ रुपये पानी में गये ।

दूसरे ही क्षण सोचता कि हरिपद के कारण मैं उपकृत हुआ हूँ । यह वात सोचते ही मेरा क्रोध गायव हो जाता । हरिपद का कर्ज चुकाना मेरे लिए संभव नहीं है । उसकी जवानी सुनी अनेक कहानियों से मुझे प्रचुर अर्थ की प्राप्ति हुई है । कई पुरस्कार मिले हैं । भले ही यह वात और कोई न जानता हो, पर मैं तो जानता हूँ ।

इस जया माँ के वारे में जो कहानी सुना रहा है, मुझे लगा कि यह पहले से कहीं अच्छी कहानीं हैं । जव यह कहानी पुस्तकाकार के रूप में छपकर वाजार में आयेगी तव इण्डिया के सभी प्रान्तों की भाषाओं में अनूदित होकर चारों ओर से प्रशंसा प्राप्त करेगी । उस वक्त यह कोई नहीं जान सकेगा कि इस रचना का समस्त कृतित्व मेरा नहीं है, इसके कुछ भाग का भागीदार हरिपद है । इसी प्रकार हरिपद का शोषण करते हुए मैं लेखक वना हूँ । इसी प्रकार हरिपद को भुनाकर लेखक के रूप में मैंने ख्याति प्राप्त की है ।

भले ही यह वात और कोई न जाने, पर मैं तो मन ही मन इस वात को अच्छी तरह जानता हूँ । वहरहाल आखिर में एक दिन हरिपद आ ही गया ।

जिस प्रकार हरिपद फुर्र से गायव हो जाता है, ठीक उसी प्रकार अचानक हाजिर भी हो जाता है । साथ में गंदे कपड़ों की [illegible] रहती है ।

मैंने पूछा—"कहाँ गये थे हरिपद ?"

हरिपद ने कहा—"जी, राँची [illegible] ।"

पूछा—"वार-वार तुम राँची क्यों जाते हो ? राँची में कौन-सा काम है ?"

ऐसे प्रश्नों का उत्तर वह नहीं देता। इस वार भी उसने नहीं दिया।

यह देखकर मैंने पूछा—"अव तुम अपनी जया माँ की कहानी सुनाओ।"

हरिपद ने कहा—"सर, मैंने जिस ढंग से कहानी सुनायी है, उस ढंग से मत लिखियेगा। इससे मेरा नाम नहीं होगा, वल्कि उल्टे मेरी वदनामी होगी।"

कुछ देर चुप रहने के वाद उसने कहा—"एक वात और है, सर। इस कहानी को किसी पत्रिका की पूजा-दीपावली विशेपांक में मत छपवाइयेगा।"

मैंने पूछा—"आखिर क्यों ? किसी पत्रिका के पूजा-दीपावली विशेपांक में क्यों नहीं दूँगा ?"

हरिपद ने कहा—"पूजा-दीपावली विशेपांकवाले अपने पत्र में अधिक जगह नहीं देते और न अपना अधिक समय लगाते हैं। नतीजा यह होगा कि आप कहानी को फैलाकर नहीं लिख सकेंगे। इतनी कम जगह में आप कैसे सारा इतिहास लिख सकेंगे ? अच्छी वातें कैसे उसमें डाल सकेंगे ? यह तो वैसी कहानी नहीं है कि इधर आपने स्विच दवाया और उधर विजली जल गयी।"

हरिपद शिक्षित नहीं, पर मेरे जैसे साहित्यिकों के साथ रहने के कारण यह साहित्यिकों की साहित्यिक-समस्याओं के वारे में काफी ज्ञान अर्जित कर चुका है।

मैंने हरिपद से कहा कि यह सव वातें छोड़ो। मूल कहानी सुनाओ। हरिपद को वेकार की वातें कहने का मौका देने पर वह जल्द चुप नहीं होता।

उसने कहा—"ठीक है, सर। अव वाकी कहानी सुनाता हूँ।"

उस दिन भोर के समय जया माँ इस डेरे से चलकर अपने पहले वाले घर के सामने आकर सदर दरवाजे की साँकल वजाने लगी। काफी देर वाद भीतर से दादा वावू की आवाज आयी—"कौन है ?"

दरवाजा खोलने के वाद जब उन्होंने जया माँ को देखा तो उनका माथा गरम हो गया।

उन्होंने पूछा—"क्या वात है ? इतनी भोर में तुम कैसे आ गयी ?"

जया माँ ने अपने स्वर को करुण वनाते हुए कहा—"क्यों, मुझे नहीं आना चाहिए ?"

दादा बाबू ने कहा—"अचानक कैसे आयी ? मैंने तो तुम्हें घर से भगा दिया था और तुम किसी दूसरे व्यक्ति से विवाह कर चुकी हो। माँग में सिन्दूर, हाथों में कंगन पहने वड़े अभिमान के साथ घर से चली गयी। हरिपद को भी साथ लेती गयी। अव मेरे पास क्या करने आयी हो ? क्या तुम्हारे खसम ने तुम्हें निकाल दिया है ?"

जया माँ ने कहा—"नहीं, यह वात नहीं है। मैं तुम्हारे पास एक दूसरे काम से आयी हूँ।"

"किस काम से ?"

जया माँ जवानी कुछ न कहकर वेग से एक कागज निकालकर दादा बाबू को देती हुई बोली—"इसे पढ़ने पर सब समझ जाओगे ?"

दादा वाबू ने उस कागज पर नजर दौड़ाते हुए कहा—"यह तो क्लीनिकल रिपोर्ट है। क्या यह तुम्हारी है ? मिसेज राय तुम हो ? मिसेज सरकार के वदले आजकल तुम मिसेज राय हो गयी हो ?"

जया माँ ने कहा—"हाँ।"

पूरी रिपोर्ट पढ़ने के वाद दादा बाबू ने कहा—"यह क्या ? रिपोर्ट तो पाजिटिव है।"

जया माँ ने कहा—"हाँ। इसीलिए तुम्हारे पास आयी हूँ। तुम्हें मेरी सहायता करनी होगी।"

"कैसी सहायता ?"

जया माँ बेग से दूसरा कागज निकालकर देती हुई बोली—"इस कागज के नीचे अपना हस्ताक्षर कर दो।"

उस कागज को पढ़ते ही दादा बाबू ठठ्ठाकर हँस पड़े। उनकी हँसी रुकने का नाम नहीं ले रही थी।

बाद में हँसना बन्द कर बोले—"तुम्हारे चोंचले कम नहीं है। मैं तुम्हें यह लिखकर दूँ कि जो बच्चा तुम्हारे पेट में आ रहा है, वह मेरा नहीं है। आखिर तुम सोचती क्या हो? मुझे इस कागज पर हस्ताक्षर करना पड़ेगा? क्या मैं इतना बेवकूफ हूँ? लोण्डा समझ लिया है? क्या मैं पढ़ा-लिखा नहीं हूँ? इस कागज पर हस्ताक्षर कर मैं तुम्हारा मार्ग सरल कर दूँ? तुमने मेरा जो सर्वनाश किया है, उसका बदला लेना ही है। अब देखना है कि कौन तुम्हें बचाता है?"

जया माँ अचानक दादा बाबू के पैरों पर गिर पड़ी। कहने लगी—"अजी, मैं तुम्हारे पैर लगती हूँ। तुम मुझे क्षमा कर दो। मुझ पर दया करो। मैं काफी दिनों तक तुम्हारी सेवा कर चुकी हूँ। मुझसे जगह-जगह काम करवा चुके हो। इससे काफी रकम वसूल कर चुके हो। होटल में नाम बदलकर 'मिस हट' के नाम से नचवा चुके हो। यहाँ से काफी पैसे प्राप्त कर चुके हो। क्या इन सब अहसानों का प्रतिदान पाने की मैं अधिकारी नहीं हूँ?"

कहते-कहते जया माँ दादा बाबू के पैर आँसुओं से भिगोने लगी।

दादा बाबू ने पैर से ठोकर मारकर उन्हें परे हटा दिया। कहा—"पैर छोड़ो। अभी आयी हो पैर पकड़ने। उस वक्त क्या भूल गई थी ये सब बातें? उस वक्त मेरा कहना नहीं माना। मैं जो बात पसंद नहीं करता, तुम वही करती रही। सरस्वती की मूर्ति लाकर पूजा करना चाहती थी। मांग में सिन्दूर और हाथों में कंगन पहनी हो। क्या यह सब पहनने को मैंने मना नहीं किया था?"

जया माँ अभी तक जमीन में माथा लगाये बैठी थी। अब दादा बाबू को भुलावा देने की गरज से बोली—"मैं ठहरी औरत जाति, गलती हो सकती है। पर क्या उसके लिए क्षमा नहीं मिल सकती?"

दादा बाबू ने कहा—"जब सोहाग के चिह्न पहनने का इतना शौक है तब पेट के बच्चे को क्यों नहीं मार डालती? आजकल तो सभी

यही करते हैं। सरकार ने इसके लिए लाइसेंस दे रखा है। वहाँ चली जाओ, वे लोग तुम्हारे वच्चे को नष्ट कर देंगे। कोई खर्च नहीं लगेगा।"

जया माँ रोने लगीं। रोती हुई वोली—"मैं माँ वनना चाहती हूँ। तुम मुझे माँ नहीं वना सके। एक अर्से तक काली-पूजा करने के वाद अव मैं माँ वनने जा रही हूँ। अव उसीको मार डालूँ? उसे नष्ट कर दूँ?"

अव दादा वावू उखड़ गये। वोले—"अपने पेट में दूसरे का वच्चा लेकर मेरे पास क्षमा माँगने आयी हो? ठीक है, मैं कल ही कार्पोरेशन के जच्चा-वच्चा ऑफिस में जाऊँगा और वहाँ यह लिखवा आऊँगा कि जया सरकार के पेट से जो वच्चा जन्म लेगा, उसके पिता का नाम होगा—सरोज सरकार।"

इतना कहने के वाद वे दनादन जया माँ के माथे पर लात चलाने लगे। साथ ही कहते जा रहे थे—"अव मैंने अपने अपमानों का वदला ले लिया। अपने समस्त अपमानों का वदला ले लिया।"

इसके वाद वे राक्षसों की तरह वेतहाशा हँसने लगे। उनकी हँसी रुकने का नाम नहीं ले रही थी।

मैंने पूछा—"फिर आगे क्या हुआ?"

हरिपद कुछ देर तक चुप रहने के वाद वोला—"उधर जया माँ के घर वड़ा भाई सुशील अमेरिका से दूसरे दिन आ पहुँचा।

माँ से सारी कहानी सुनने के वाद उसने कहा—"चलो, अभी जया के घर चलो। इस देश में विवाह के वारे में इतना वखेड़ा क्यों होता है? अमेरिका में विवाह-विच्छेद करने में कोई झंझट नहीं होती।"

सुशील माँ को लेकर जया के घर की ओर चल पड़ा। ट्रामवाले रास्ते से उत्तर कलकत्ता की ओर। माँ जया के नयेवाले फ्लैट में केवल एक वार आयी थी। माँ के ठीक से न पहचानने पर भी ड्राइ-

वर मकान पहचानता था। वह ठीक रास्ते से गली के मोड़ तक गाड़ी ले आया।

गली के मोड़ पर आते ही लोगों ने देखा—भीतर काफी भीड़ है। गाड़ी बायीं ओर रोककर खड़ी की गयी। चारों ओर पुलिस खड़ी थी।

उस भीड़ को चीरते हुए एक जगह आकर सुशील ने एक दर्शक से पूछा—"क्यों महाशय, यहाँ क्या हुआ है ? इतनी भीड़ यहाँ क्यों है ? और इतनी पुलिस यहाँ क्यों आयी है ?"

किसीको कुछ नहीं मालूम। यहाँ इतनी भीड़ क्यों एकत्रित है इस बारे में कोई कुछ नहीं जानता। शायद भीड़ देखकर लोगों की भीड़ जुट गयी है। पुलिस भीड़ को हटाने के लिए लाठी भाँज रही है।

मैंने हरिपद को यह नहीं बताया कि उसकी तलाश में वहाँ मैं गया था। पूछा—"इसके बाद ?"

जया माँ जब वहाँ से वापस आयी तब रात काफी हो चुकी थी। जया माँ जब तक नहीं आती, मैं भोजन नहीं करता था। इधर मुझे कड़ाके की भूख लगी थी।

उन्हें वापस आया देखकर मैंने थाली परोस दी। जया माँ ने कहा—"मैं नहीं खाऊँगी, हरिपद। तू खा ले।"

मैंने पूछा—"क्या कुछ भी नहीं खायेंगी ?"

जया माँ ने कहा—"नहीं। मैं खाना खाकर आ रही हूँ।"

इतना कहने के बाद वे अपने कमरे में सोने चली गयीं। इधर मैंने भोजन करने के बाद बर्तन माँज-धोकर रख दिए। अभी ठीक से नींद नहीं आयी थी कि जया माँ ने पुकारा—"हरिपद।"

इतनी रात को जया माँ मुझे क्यों बुला रही हैं, समझ नहीं पाया। उनके कमरे में गया।

जया माँ ने कहा—"तुझे एक काम करना है। यह ले, इसे रख ले।"

मैंने देखा कि एक पोटली मेरी ओर बढ़ा रही है। जया माँ ने कहा—"इसे तू अपने पास रख ले।"

हरिपद ने अपनी गन्दे कपड़ोंवाली पोटली दिखाते हुए कहा—"यही वह पोटली है, गन्दे कपड़ोंवाली। यही पोटली उस दिन जया माँ ने मुझे दी थी।"

मैंने उनसे पूछा था—"इसमें क्या है माँ ?"

जया माँ ने कहा—"इसमें दस तोले सोने की जेवरात हैं। मेरे विवाह के समय बड़े भैया ने अपनी ओर से उपहार में दिए थे। मैंने यह बात अभी तक किसीको नहीं बतायी। बराबर छिपाकर रखती रही।"

हरिपद ने पूछा—"इसे लेकर मैं क्या करूँगा ?"

जया माँ ने कहा—"राय साहब के विवाह होने पर उनकी नयी बहू को उपहार में देना।"

"क्या कह रही हो माँ ?"

जया माँ ने कहा—"हाँ रे। मैं जो कुछ कह रही हूँ, ठीक कह रही हूँ। उस वक्त मैं रहूँगी या नहीं कोई निश्चय नहीं। दस तोले के ये जेवर तू मेरी ओर से राय साहब की नयी बहू को उपहार में दे देना। दूसरे किसीके हाथ में मत देना। सीधे राय साहब की नयी बहू के हाथ में देना।"

हरिपद ने पूछा—"क्या राय साहब विवाह करनेवाले हैं ?"

जया माँ ने कहा—"जरूर करेंगे। कोई हमेशा कुआँरा रहता है ? एक न एक दिन सभी विवाह करते हैं।"

जया माँ की बातें सुनकर हरिपद अवाक् रह गया। दस तोले सोने की कीमत आजकल के बाजार में कम नहीं है। आजकल बाईस सौ रुपये तोला है।"

जया माँ ने कहा—"इतना क्यों सोच रहा है ? लेकिन देना जरूर।"

हरिपद ने कहा—"मैं ठहरा गरीब आदमी। इतना कीमती सामान मुझे रखने के लिए क्यों दे रही हैं ? क्या और कोई नहीं है ?"

जया माँ ने कहा—"मेरा अपना कौन है, तू ही बता ? अगर मैं अपनी माँ के पास रखूँगी तो छोटे भैया या भाभी छीन लेंगी। तू मेरा

विश्वस्त व्यक्ति है इसीलिए तुझे रखने के लिए दिया। तेरे अलावा मैं और किसी पर विश्वास नहीं कर सकती।"

हरिपद ने कहा—"अच्छा होगा कि इसे अपने पास रखो। अपने हाथ से नयी बहू को उपहार देना।"

जया माँ हँसकर बोली—"मेरी बात छोड़। मैं कब हूँ और कब नहीं, कहाँ हूँ, कहाँ नही हूँ, इसका कोई ठीक है?"

हरिपद ने कहा—"तो यहाँ कहाँ सन्दूक है मेरे पास जिसमें रख दूं। मैं ठहरा भिखमंगा आदमी। कहीं अभाव के चक्कर में······"

जया माँ कह उठी—"बेकार की बात मत कर। मुझे नींद आ रही है। मैं सोने जा रही हूँ।"

इतना कहकर जया माँ तेजी से अपने कमरे के भीतर जाकर दरवाजे की साँकल बन्द कर ली। मैं अपनी जगह पर जाकर सो गया।

मैंने पूछा—"फिर क्या हुआ?"

हरिपद ने कहा—"आज बीस रुपये दे सकेंगे, सर?"

कहा—"फिर रुपये? किस बात के लिए?"

हरिपद ने कहा—"राँची जाना है।"

पूछा—"आखिर बार-बार राँची क्यों जाते हो?"

हरिपद ने कहा—"राय साहब से मुलाकात करने।"

"अच्छा तो आजकल राय साहब राँची में हैं?"

हरिपद ने कहा—"अभी हाल में ही राय साहब का तबादला राँची में हुआ है। सोचिये, मैं कितनी परेशानी की हालत में हूँ। राय साहब के पिता-माता दोनों ही गुजर गये हैं, फिर भी राय साहब विवाह नहीं कर रहे हैं। आजकल जेठ चल रहा है। अगर इस वर्ष भी विवाह नहीं करेंगे तो कब करेंगे? आखिर मैं यह कबाड़ा कब तक ढोता रहूँगा?"

मैंने कहा—"अगर वे शादी नहीं करना चाहते तो तुम कर ही क्या सकते हो?"

हरिपद ने कहा—"अरे वाप रे ! मगर मैंने तो जया माँ से वादा किया है कि जव राय साहव विवाह करेंगे तव उनकी नयी वहू को दस तोले का जेवर उनकी ओर से उपहार में दे दूंगा। ऐसी हालत में मेरा वादा कव पूरा होगा ? मेरा रहने का कहीं कोई ठिकाना भी नहीं है। कहीं कोई इसे चोरी न कर ले। इसमें आश्चर्य की वात नहीं है। यही वजह है कि मैं जव जहाँ रहता हूँ, तव सर्वदा इस पोटली को अपने कलेजे से लगाये रखता हूँ।"

मैं इन वातों का क्या जवाव देता ?

हरिपद ने आगे कहा—"डर है कि कहीं राय साहव का अचानक विवाह हो गया और मैं उन्हें यह जेवरों को न दे सका तो वादा-खिलाफी होगी। मैं जान रहते माँ की आज्ञा के खिलाफ काम नहीं कर सकता। अव आप मेरी परेशानी सोचिये, मेरे दायित्व के वारे में विचार करिये।"

मैंने कहा—"तुम्हारी जया माँ का क्या विचार है ?"

हरिपद ने कहा—"जया माँ ? आप जया माँ के वारे में पूछ रहे हैं ? अव वह कहाँ हैं ? शायद आपको नहीं वताया। उस दिन सरोज वावू से लड़कर अधिक रात गये वे घर वापस आयीं। उस वक्त मैं भूखा-प्यासा उनकी प्रतीक्षा करता रहा। वे विना खाये, मेरे हाथ में यह पोटली देकर अपने कमरे में जाकर सो गयीं। दूसरे दिन सवेरे वह घटना हुई। पुलिस को वुलवाकर उनके कमरे का दरवाजा तोड़ा गया था। तव देखा गया—जया माँ अपने गले में डोरी फँसाकर झूल रही हैं। पुलिस के आने के कारण लोगों की भीड़ एकत्रित हो गयी। जया माँ के घर से जया की माँ, जया के छोटे भाई, छोटी भाभी, अमेरिका से जया माँ के वड़े भाई आ गये थे। अगर ये लोग एक दिन पहले आ जाते तो यह दुर्घटना न होती।"

कहते-कहते हरिपद की वाणी अवरुद्ध हो गयी।

हरिपद उस पोटली को लेकर खड़ा हो गया। कहा—"अच्छा, अव मैं चलता हूँ।"

मैंने कहा—"अव तुम कहाँ जाओगे ? आजकल तुम रहते कहाँ हो, अभी तक यह नहीं वताया ?"

हरिपद ने कहा—"पहले जहाँ रहता था, अब वहीं चला गया हूँ, सर। अर्थात् फुटपाथ पर। कई जगहों पर रहा। बड़े आदमी, गरीब आदमी, सभी तरह के लोगों को देखा। यह सब देख-सुनकर मनुष्य के जीवन के प्रति मुझे घृणा हो गयी है, सर। सोचकर देखा—पृथ्वी पर सबसे शान्तिपूर्ण स्थान फुटपाथ ही है, इसीलिए पुनः पहलेवाले फुट-पाथ पर जाकर रहने लगा हूँ। मुझे अपने लिए कोई डर नहीं है। डर केवल इन जेवरों के लिए है।"

अब हरिपद ठहरा नहीं। गंदे कपड़ोंवाली अपनी पोटली लेकर मेरे घर से बाहर चला गया। मैं अपलक दृष्टि से उसे देखता रहा। हरिपद को काफी दिनों से देखता आ रहा हूँ। मुझे विश्वास था कि हरिपद को ठीक से समझ गया हूँ, पर आज लगा, जैसे उसका वास्त-विक रूप अभी-अभी पहचान पाया हूँ। असली हरिपद को आज ही पहचान सका।

मानो हरिपद ने ही मुझे पहले-पहल सत्यदृष्टि दी है।